उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

अप्रैल-जून, 2013

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
एच. एम. स्टील लिमिटेड (मैसर्स) **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	258
जगत राम (मृतक) **मार्फत** माली देवी और अन्य **बनाम** हिमाचल पर्यटन विकास निगम और एक अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 318)	
जी. पी. श्रीवास्तव **बनाम** जिला न्यायाधीश, एटा और एक अन्य	189
जे. पी. ठाकुर और अन्य **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	337
धनी राम **बनाम** हिमाचल पर्यटन विकास निगम और एक अन्य	318
नजीर अहमद वार्फी **बनाम** राज्य और अन्य	210
नीरज शर्मा (श्रीमती) **बनाम** श्री आर. एस. यादव, कांस्टेबल और अन्य	173
नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** श्रीमती ऊषा देवी और अन्य	332
पी. गोपा कुमार और एक अन्य **बनाम** पी. सुरेन्द्रन (देखिए – पृष्ठ संख्या 203)	
पी. सुरेन्द्रन **बनाम** पी. गोपा कुमार और एक अन्य	203
भारत संघ और अन्य **बनाम** मोहिन्दर सिंह	238
मदन लाल गुप्ता **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य	298
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** मछला और अन्य	246
यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड **बनाम** मुन्ना लाल और अन्य (देखिए – पृष्ठ संख्या 246)	

पृष्ठ संख्या

रत्ना देवी वर्मा (श्रीमती) **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और एक अन्य 282

रक्षपाल सिंह **बनाम** पोखी सिंह 194

संतोष शर्मा (श्रीमती) **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य 265

हिमाचल ग्राम शिक्षा सोसाइटी, बिनौला **बनाम** हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य 252

लेख

चिकित्सा सेवा और उपभोक्ता संरक्षण : नियमों की जानकारी एवं समुचित उपयोग (1) – (5)

अप्रैल-जून, 2013 (संयुक्तांक)

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

प्रधान संपादक
अनूप कुमार वार्ष्णेय

संपादक
महमूद अली ख़ां

महत्वपूर्ण निर्णय

जम्मू-कश्मीर संविधान, 1957 – अनुच्छेद 103 [सपठित जम्मू-कश्मीर सिविल सेवा नियम, 1956 – नियम 23 और विनियम 4(घ)(ii)] – सीधी भर्ती – वरिष्ठता सूची – भावी प्रोन्नति – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर प्रोन्नत व्यक्तियों की सेवा का नियमितीकरण – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर की गई सेवा भूतलक्षी प्रभाव से उस तारीख से नियमित की जा सकती है जब प्रोन्नति कोटे में स्पष्ट रिक्ति हो – तथापि, ऐसा नियमितीकरण पात्रता, योग्यता और अन्य संबंधित तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए – सीधी भर्ती व्यक्ति उस तारीख से जब वह सेवा में नहीं आया था, ज्येष्ठता का दावा नहीं कर सकता ।

नजीर अहमद वार्फी बनाम **राज्य और अन्य** 210

पृष्ठ संख्या 173 – 350 **(2013) 1 सि. नि. प.**

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

श्री पी. के. मल्होत्रा,
सचिव, विधायी विभाग

श्री एन. एल. मीना,
अपर सचिव (प्रशा.), विधायी विभाग

श्री आर. डी. मीना, संयुक्त सचिव,
राजभाषा खंड

डा. बी. एन. मणि, अधिवक्ता,
(पूर्व संपादक) वि.सा.प्र.

डा. प्रीती सक्सेना, प्रोफेसर,
बाबासाहेब भीमराव अम्बेडकर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, लखनऊ

डा. वैभव गोयल, संकायाध्यक्ष
विधि संकाय, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ

श्री सुरेन्द्र शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, गुरु गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय, दिल्ली

डा. आर. पी. सिंह,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव, राजभाषा खंड

श्री लालजी प्रसाद,
सेवानिवृत्त प्रधान संपादक, वि.सा.प्र.

श्री के. जी. अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनूप कुमार वार्ष्णेय,
प्रधान संपादक

श्री महमूद अली खां,
संपादक

श्री जुगल किशोर,
संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पाण्डेय,
संपादक

सहायक संपादक : सर्वश्री विनोद कुमार आर्य, कमला कान्त, अविनाश शुक्ल और असलम खान

उप-संपादक : सर्वश्री दयाल चन्द ग्रोवर, एम. पी. सिंह, जसवन्त सिंह और बी. के. भटनागर

कीमत	:	**डाक-व्यय सहित**
एक प्रति	:	₹ 36
वार्षिक	:	₹ 135

© 2013 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रकाशन और विक्रय प्रबंधक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय (विधायी विभाग), भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा................................... द्वारा मुद्रित ।

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिकाओं में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमश: चयनित सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । इन पत्रिकाओं को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए इनमें जनवरी, 2010 के अंक से महत्वपूर्ण केन्द्रीय अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी पाठ को पाठकों की सुविधा के लिए श्रृंखलाबद्ध रूप से प्रकाशित किया जा रहा है । तीनों निर्णय पत्रिकाओं की वार्षिक कीमत केवल ₹ 495/- है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 225/- है, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत ₹ 135/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रय के लिए उपलब्ध विधि पाठ्य पुस्तकों की सूची

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	कीमत (₹)
1.	भारत का विधिक इतिहास	श्री सुरेन्द्र मधुकर	410	30.00
2.	माल विक्रय और परक्राम्य लिखत विधि	डा. एन. पी. परांजपे	371	40.00
3.	वाणिज्य विधि	डा. आर. एल. भट्ट	630	108.00
4.	अपकृत्य विधि के सिद्धान्त (तृतीय संस्करण)	श्री शर्मन लाल अग्रवाल	357	40.00
5.	अंतर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. सी. खरे	273	115.00
6.	मानव अधिकार	डा. शिवदत्त शर्मा	340	120.00
7.	दण्ड प्रक्रिया संहिता	न्या. महावीर सिंह	840	200.00

पुस्तकों की सूची जिन पर छूट देने की स्वीकृति प्राप्त की गई है ।

	पुस्तक का नाम	लेखक	पृष्ठ सं.	मूल दर (₹)	संशोधित दर (₹)
1.	संविदा विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रामगोपाल चतुर्वेदी	552	275.00	137.00
2.	श्रम विधि (तृतीय संस्करण)	श्री गोपी कृष्ण अरोड़ा	658	452.00	226.00
3.	चिकित्सा न्यायशास्त्र और विष विज्ञान (तृतीय संस्करण)	डा. सी. के. पारिख अनुवादक डा. एन. के. पटौरिया	969	293.00	146.00
4.	आधुनिक पारिवारिक विधि	श्री राम शरण माथुर	767	429.00	214.00
5.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय)	संकलन संपादन – ब्रह्मदेव चौबे	209	225.00	112.00
6.	हिन्दू विधि (द्वितीय संस्करण)	डा. रवीन्द्र नाथ	617	425.00	212.00
7.	भारतीय दंड संहिता	डा. रवीन्द्र नाथ	696	741.00	370.00
8.	भारतीय भागीदारी अधिनियम (द्वितीय संस्करण)	श्री माधव प्रसाद वाशिष्ठ	272	165.00	82.00
9.	प्रशासनिक विधि (तृतीय संस्करण)	डा. कैलाश चन्द्र जोशी	635	200.00	100.00
10.	विधिक उपचार (द्वितीय संस्करण)	डा. एस. के. कपूर	414	311.00	155.00
11.	विधि शास्त्र	डा. शिवदत्त शर्मा	501	580.00	377.00

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका – अप्रैल-जून, 2013 (संयुक्तांक) (पृष्ठ संख्या 173 – 350)

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियम, 1952

– नियम 285-झ – ऋण देयों के संबंध में कृषि भूमि की नीलामी – आयुक्त के समक्ष नीलामी कार्यवाही को आक्षेपित किया जाना – आक्षेप खारिज किए जाने पर राजस्व परिषद् के समक्ष पुनरीक्षण – मंजूरी – राजस्व परिषद् के आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका द्वारा आक्षेपित किया जाना – रिट अधिकारिता के प्रयोग से वहां भी इनकार किया जा सकता है जहां आक्षेपित आदेश को रिट याचिका द्वारा चुनौती दी गई हो यदि अवैध आदेश को अपास्त करने का प्रभाव दूसरे अवैध आदेश को पुनरुज्जीवित करता हो ।

रक्षपाल सिंह बनाम **पोखी सिंह** 194

केरल भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) अधिनियम, 1965

– धारा 11(2)(ख), 11(3) और 11(4)(ii) – किराएदारी – मकान-मालिक की वास्तविक आवश्यकता – प्राधिकारी द्वारा विभाजन में प्राप्त अंश की सीमा तक बेदखली का आदेश पारित करना – जहां यह साबित हो जाता है कि मकान-मालिक को भवन की वास्तविक आवश्यकता है वहां संपूर्ण भवन की बेदखली के लिए आदेश पारित किया जा सकता है ।

पी. सुरेन्द्रन बनाम **पी. गोपा कुमार और एक अन्य** 203

जम्मू-कश्मीर संविधान, 1957

– अनुच्छेद 103 [सपठित जम्मू-कश्मीर सिविल सेवा

पृष्ठ संख्या

नियम, 1956 – नियम 23 और विनियम 4(घ)(ii)] – सीधी भर्ती – वरिष्ठता सूची – भावी प्रोन्नति – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर प्रोन्नत व्यक्तियों की सेवा का नियमितीकरण – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर की गई सेवा भूतलक्षी प्रभाव से उस तारीख से नियमित की जा सकती है जब प्रोन्नति कोटे में स्पष्ट रिक्ति हो – तथापि, ऐसा नियमितीकरण पात्रता, योग्यता और अन्य संबंधित तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए – सीधी भर्ती व्यक्ति उस तारीख से जब वह सेवा में नहीं आया था, ज्येष्ठता का दावा नहीं कर सकता ।

नजीर अहमद वार्फी बनाम **राज्य और अन्य** 210

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59)

– धारा 163-क – मोटर दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – परिमाण – जहां साक्ष्य से मृतक की आय 15,000/- रुपए प्रति मास साबित होती हो वहां मृतक की आयु को दृष्टिगत करते हुए 15 का गुणक लागू करना उचित है – तथापि, दावेदारों को अन्य खर्चे भी अधिनिर्णीत किए जा सकते हैं ।

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती ऊषा देवी और अन्य** 332

– धारा 163-क और 166 – मोटर दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – योगदायी उपेक्षा – जहां किसी यान चालक द्वारा यान खड़ा करने में उपेक्षा बरती गई हो वहां साथ ही साथ टक्कर मारने वाले चालक की भी यह जिम्मेदारी है कि वह अपने यान को सतर्कतापूर्वक इस रीति में चलाए कि दुर्घटना न हो ।

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **श्रीमती ऊषा देवी और अन्य** 332

पृष्ठ संख्या

– धारा 163-क, 166 और 173 – मोटर दुर्घटना – दावा – ट्रक के चालक द्वारा ट्रक के इन्डीकेटर जलाए बिना तथा पत्थर आदि से रुकावट बनाए बिना ट्रक को सड़क पर खड़ा करना – दुर्घटना – जिम्मेदारी – जहां ट्रक के चालक द्वारा ट्रक के इन्डीकेटर या लाइट जलाए बिना या पत्थर आदि की रुकावट बनाए बिना ट्रक को सड़क पर खड़ा कर दिया गया हो वहां उसकी ओर से लापरवाही और असावधानी मानी जाएगी – ऐसे किसी कार्य से नुकसान पहुंचने वाला पक्ष क्षतिपूर्ति और प्रतिकर के लिए हक़दार होगा ।

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड बनाम **मछला और अन्य** 246

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 14, 16 और 226 [सपठित केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 का नियम 2(छ) और केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 का नियम 5] – रिट – केन्द्रीय सरकारी सेवक द्वारा जाली प्रमाणपत्रों के आधार पर कपट और दुर्व्यपदेशन द्वारा नियुक्ति प्राप्त करना – जांच के दौरान उसकी नियुक्ति का नियमितीकरण नहीं करके सेवा समाप्त करना – सेवक की मृत्यु होना – आश्रित कुटुम्ब सदस्यों द्वारा सेवक के उपदान, कुटुम्ब पेंशन आदि की मांग करना – विभाग द्वारा इनकार करना – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित होता है कि सरकारी सेवक ने जाली प्रमाणपत्रों के आधार पर कपट और दुर्व्यपदेशन द्वारा नियुक्ति प्राप्त की है तो उसके द्वारा की गई सम्पूर्ण सेवाएं भी गलत और अवैध हो जाएंगी जिनके आधार पर उपदान, कुटुम्ब पेंशन आदि की मांग करना भी गलत, अवैध और अविधिमान्य होगा ।

संतोष शर्मा (श्रीमती) बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 265

पृष्ठ संख्या

– अनुच्छेद 226 – नर्सिंग प्रशिक्षण संस्थान – स्थापना के लिए मंजूरी – राज्य में जी. एन. एम. पाठ्यक्रम और बी. एससी. नर्सिंग पाठ्यक्रमों के स्थापन के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों/मानदंडों के अनुरूप ही अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ।

हिमाचल ग्राम शिक्षा सोसाइटी, बिनौला बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 252

– अनुच्छेद 226 – रिट याचिका – याची के विरुद्ध रिश्वत और भ्रष्टाचार की शिकायत – याची के विरुद्ध शिकायतों को गंभीर मानते हुए सतर्कता जांच का निदेश दिया जाना – अवैध रूप से परितोषण की मांग करने जैसे गंभीर आरोपों का दोषी पाया जाना – आदेश द्वारा उसे सेवा से अभिमुक्त किया जाना – जांच से कतिपय अनियमितताएं होने पर भी यह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप करने के लिए एक उपयुक्त मामला नहीं है ।

जी. पी. श्रीवास्तव बनाम **जिला न्यायाधीश, एटा और एक अन्य** 189

– अनुच्छेद 226 – सरकारी सेवा – विभागीय जांच द्वारा सेवा से हटाया जाना – घटना के बारे में कोई स्वतंत्र साक्षी पेश न किया जाना – घटना के बारे में कोई रिपोर्ट भी न लिखाई जानी – याची के साथ अन्याय होने के कारण उसे बहाल किया जा सकता है ।

नीरज शर्मा (श्रीमती) बनाम **श्री आर. एस. यादव, कांस्टेबल और अन्य** 173

– अनुच्छेद 226 [सपठित वित्तीय नियम, 1971 – परिशिष्ट 10 और नियम 15.2] – सरकार द्वारा जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु निविदाएं आमंत्रित किया जाना

पृष्ठ संख्या

– याची द्वारा कम प्रस्थापना करने पर भी मध्य स्तर के उद्योग के आधार पर अधिमान दिए जाने का दावा करना – अधिमान दिए जाने से संबंधित नियम निरसित करके नए नियम जारी किया जाना – याची इस आधार पर अधिमान का दावा नहीं कर सकता – तथापि, प्रत्यर्थियों को याची को दिए गए आश्वासन के आधार पर पुनः विचार करने के लिए आदेश किया जा सकता है ।

एच. एम. स्टील लिमिटेड (मैसर्स) बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 258

– अनुच्छेद 226 [सपठित केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 का नियम 14] – केन्द्रीय सिविल सेवक द्वारा बिना पूर्व अनुमति के कार्यालय से अनुपस्थित रहना और अनुपस्थिति के दौरान अन्य विभाग के कार्य करने का आरोप – आरोपों की जांच करने के लिए जांच अधिकारी की नियुक्ति करना – लगभग दो दशकों तक जांच लम्बित रहना – जांच के दौरान सेवक को निलम्बित करना और निलम्बन के दौरान ही उसे सेवानिवृत्त करना – सेवक द्वारा सेवानिवृत्ति फायदों के साथ ही निलम्बन के दौरान वेतन, भत्तों आदि की मांग करना – इन परिस्थितियों में विभाग की असंवेदनहीनता ही दर्शित होती है और लगभग दो दशकों तक जांच लम्बित रखना और उस पर अन्तिम विनिश्चय नहीं करना निश्चित तौर पर सम्बन्धित सेवक के विरुद्ध अन्याय ही करना है – अतएव, उसकी मांग उचित, वैध और तर्कसंगत है जिसे स्वीकार करना न्यायोचित और वैध होगा ।

मदन लाल गुप्ता बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 298

पृष्ठ संख्या

– अनुच्छेद 226 [सपठित सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1912 तथा हिमाचल प्रदेश सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1968 की धारा 72] – रिट – केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर शिमला के कर्मचारियों को हिमफेड में तैनाती करना – तैनाती सुनिश्चित शर्तों और निबंधनों पर होना – तैनाती के पश्चात् समान कार्य के लिए समान वेतन के आधार पर सहकारी कर्मचारियों द्वारा हिमफेड के कर्मचारियों के समान वेतन, वेतनवृद्धि आदि की मांग करना – हिमफेड द्वारा इनकार करना – यदि हिमफेड द्वारा इस आधार पर इनकार किया जाता है कि सहकारी सोसाइटी के कर्मचारी हिमफेड के कर्मचारी नहीं हैं और उनकी तैनाती सुनिश्चित शर्तों और निबंधनों के अनुसार हुई है और उसी के अनुसार उनकी सेवा शर्तें निर्धारित होंगी तो हिमफेड का विनिश्चय सही और न्यायोचित है क्योंकि ऐसे मामलों में सेवा शर्तें सुनिश्चित निबंधनों और शर्तों द्वारा ही निर्धारित होती हैं ।

जे. पी. ठाकुर और अन्य बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य** 337

– अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 का नियम 1(iv) तथा पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1973 और एफ. आर. 56(क) तथा 56(ख)] – रिट – निगम कर्मचारी की प्रोन्नति, सेवानिवृत्ति आदि होना – तत्समय प्रवृत्त सुसंगत नियमों के अधीन किया जाना – संबंधित कार्यालय आदेश को चुनौती नहीं देना – यदि किसी निगम कर्मचारी की प्रोन्नति, सेवानिवृत्ति आदि तत्समय प्रवृत्त सुसंगत नियमों के अनुसार की जाती है और उसके अनुसरण में कार्यालय आदेश पारित किया जाता है जिसे चुनौती नहीं दी जाती है तो ऐसे

पृष्ठ संख्या

कार्यालय आदेश को किसी भी तरह से गलत, अवैध या मनमाना नहीं कहा जा सकता है ।

धनी राम बनाम **हिमाचल पर्यटन विकास निगम और एक अन्य** 318

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– धारा 100 के साथ पठित आदेश 41, नियम 27 – सरकारी भूमि का अधिक्रमण करना – बेदखली – आक्षेप – यदि अभिलेख पर के दस्तावेजों से यह साबित कर दिया जाता है कि कब्जा की गई भूमि, सरकारी भूमि है तो सम्बन्धित सरकार द्वारा उस भूमि से कब्जाधारी को बेदखल कराना न्यायोचित और विधिमान्य है ।

रत्ना देवी वर्मा (श्रीमती) बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और एक अन्य** 282

सीमा सुरक्षा बल अधिनियम, 1968

– धारा 11(2) और 62 [सपठित सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 – नियम 22 और 177] – सीमा सुरक्षा बल सेवा – स्थानांतरण – कर्मचारी द्वारा आदेशों की तामील से बचकर आदेशों का अनुपालन न करना – सेवोन्मुक्ति – रिट याचिका द्वारा चुनौती – पते में परिवर्तन का अभिवाक् – मंजूरी – राज्य द्वारा अपील – जहां कोई कर्मचारी विभाग को दिए गए अपने आवासीय पते में परिवर्तन करता है तो उसका यह कर्तव्य है कि वह नए पते से विभाग को सूचित करे – नियोजक का यह कर्तव्य नहीं है कि वह कर्मचारी की ऐसे पते की तलाश करे जो उसके अभिलेखों में नहीं है – कर्मचारी अपनी ही कमी का फायदा नहीं ले सकता ।

भारत संघ और अन्य बनाम **मोहिन्दर सिंह** 238

नीरज शर्मा (श्रीमती)

बनाम

श्री आर. एस. यादव, कांस्टेबल और अन्य

तारीख 16 सितम्बर, 2010

न्यायमूर्ति अमरेश्वर प्रताप साही

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – सरकारी सेवा – विभागीय जांच द्वारा सेवा से हटाया जाना – घटना के बारे में कोई स्वतंत्र साक्षी पेश न किया जाना – घटना के बारे में कोई रिपोर्ट भी न लिखाई जानी – याची के साथ अन्याय होने के कारण उसे बहाल किया जा सकता है ।

याची को तारीख 28 जून, 2006 के आदेश द्वारा सेवा से हटाया गया था और उसके द्वारा फाइल की गई अपील भी तारीख 12 सितम्बर, 2006 को खारिज की गई है । उसके द्वारा फाइल किया गया पुनरीक्षण केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल के महानिरीक्षक ने तारीख 20 दिसम्बर, 2006 को खारिज कर दिया । अतः यह याचिका फाइल की गई है । रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – तथ्यों के वर्णन से यह उपदर्शित होता है कि याची को अपनी औद्योगिक इकाई से दूसरे स्थान पर स्थानांतरित किया गया था किन्तु वरिष्ठ प्राधिकारियों ने तारीख 19 अक्तूबर, 2005 के आदेश को स्थगित कर दिया था । ऐसा प्रतीत होता है कि याची प्राधिकारियों के प्रतिरोध के कारण अपने कर्तव्यों को प्रभावी रूप से नहीं निभा सकी जो प्राधिकारियों की नाराजगी का कारण बना । याची ने अपनी शिकायत में डिप्टी कमांडेंट के समक्ष उपस्थित होने के लिए मजबूर करने से संबंधित आरोप लगाए हैं । डिप्टी कमांडेंट को ऐसे आरोप में अपना बयान देने के लिए नहीं बुलाया गया । यह समझ में आने वाली बात नहीं है कि किस कारण से इस महिला ने किसी खुले बाजार में हैड कांस्टेबल पर हमला किया होगा । शिकायतकर्ता ने इस बारे में कोई साक्ष्य नहीं दिया है कि किस बात ने याची को अचानक उस पर चिल्लाने और शारीरिक हमला करने के लिए प्रेरित किया । शिकायतकर्ता ने अपने अभिसाक्ष्य में उद्दीपन का कारण नहीं बताया है । शिकायतकर्ता ने कुछ क्रय करने के लिए

बाजार में मौजूद होने का दावा किया है । स्वीकृततः, उसने कुछ क्रय नहीं किया था और उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह बाजार से खाली हाथ लौट रहा था । कर्मचारी स्थानांतरण आदेशों के कारण पैकिंग के लिए कुछ सामग्री क्रय करने के लिए गया था । कांस्टेबल जय मूरत के सिवाय प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों को न तो पेश किया गया है और न ही उन्हें पेश करने के लिए कोई सद्भाविक या वास्तविक प्रयास किया गया है और न ही उन्हें उपस्थित होने के लिए विवश किया गया । केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल एक पुलिस बल है और यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि अभियोजन साक्षियों को पेश करने में असहाय था जबकि यह कार्यवाही उसके अपने बल के सदस्य की सेवाओं से संबंधित थी । अतः, स्वतंत्र साक्षियों को पेश न करना एक गंभीर संदेह डालता है यदि वास्तविक हमले पर नहीं तो निश्चित रूप से घटना के स्थान के संबंध में । याची ने बाजार में अपनी उपस्थिति से इनकार किया है । उक्त स्थिति को साबित करने के लिए यह आवश्यक था कि बाजार के कतिपय स्वतंत्र साक्षी पेश किए जाने चाहिए थे क्योंकि यह घटना बाजार में दिन में हुई थी और शिकायतकर्ता ने एक साक्षी को भी नामित किया है । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं है कि साक्षियों ने अनावश्यक अन्तर्वलन के कारण या अभियोजन की धमकी के कारण साक्ष्य देने से इनकार कर दिया । जो आश्चर्यचकित करने वाली बात है वह यह है कि संपूर्ण घटना से अपराध होना प्रकट होता है जो जांच की विषयवस्तु हो सकती है । हैड कांस्टेबल, जो शिकायतकर्ता है, पीड़ित है और उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करानी चाहिए थी, और उसने अपने अभिसाक्ष्य में इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट क्यों दर्ज नहीं कराई जबकि घटना में केवल याची ही शामिल नहीं थी अपितु एक अभिकथित बाहरी व्यक्ति श्री नरेन्द्र भी सम्मिलित था । यह अभिकथित किया गया है कि उक्त व्यक्ति के पास एक देशी पिस्तौल था जैसाकि शिकायतकर्ता द्वारा अभिकथित किया गया है । इस बात के लिए कोई कारण नहीं है कि शिकायतकर्ता या सुरक्षा प्राधिकारियों ने अर्थात् दोनों में से किसी ने भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज क्यों नहीं कराई जब बाजार में एक बाहरी व्यक्ति द्वारा हमला करने के अभिकथन किए गए हैं । घटना ड्यूटी के समय नहीं हुई है और विवाद यदि कोई हुआ हो, तो वह पूर्णरूप से व्यक्तिगत प्रकृति का था और इसलिए, यह स्वाभाविक था कि कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की जाती । हमला क्षति से और तत्पश्चात् चिकित्सा उपचार दिए जाने से संबंधित है । अतः पुलिस स्टेशन में न जाना, शिकायतकर्ता और उसके साथी हैड

कांस्टेबल जय मूरत के आचरण पर एक गंभीर संदेह डालता है । लिखित में शिकायत अगले दिन की गई थी । प्राथमिक जांच ऐसी रीति में की जानी अभिकथित की गई है जोकि पूर्णतया प्रायिक प्रतीत होती है और पूर्णतया औपचारिक है और विश्वसनीय है क्योंकि इसमें ऐसे साक्षियों के नाम दिए गए हैं जिन्हें जांच के दौरान कभी भी पेश नहीं किया गया । परिस्थितियां यह भी उपदर्शित करती हैं कि याची के विरुद्ध वांछित परिणाम के लिए सोच-समझकर दोषारोपण करके कार्यवाही की गई थी । दूसरा कांस्टेबल भी जिसके बारे में साक्षी होने का कथन किया गया है, उसी बल का एक सदस्य है और उसने सामान्य तौर पर वही दोहराया है जो शिकायत में अभिकथित किया गया है । उसका पूर्ण व्यवहार पक्षपातपूर्ण है और शिकायतकर्ता का पक्ष लेना एक हितबद्ध साक्षी की श्रेणी में आता है । अतः अनुशासनिक प्राधिकारी और अपील प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी ने मामले के पूर्वोक्त पहलुओं की व्याख्या किए बिना आरोप के समर्थन में उल्लेख किया है । विश्वास और अविश्वास का मूल्यांकन प्रायिक रूप से याची के विरुद्ध किया गया है । किसी स्वतंत्र साक्षी के अभिसाक्ष्य के द्वारा किसी ठोस सबूत के अभाव में, यह उपधारणा की जा सकती है कि शिकायतकर्ता ने अपने मित्र जय मूरत के साथ मिलकर एक बाजार में घटना घटित होने के समर्थन में इसमें किसी अन्य साक्ष्य के बिना संपूर्ण कहानी का ढांचा तैयार किया । याची ने घटना से पूर्णतया इनकार किया है । यह पूर्णतया संभव है कि घटना किसी अन्य स्थान पर हुई हो और इस घटना को समर्थन देने के उद्देश्य से इसे बाजार में दिखाया गया हो । जगह के परिवर्तन के लिए कुछ कारण संभव हो सकते हैं जो स्पष्ट नहीं हैं किन्तु यह बात सिद्ध हो गई है कि बाजार में वास्तविक घटनास्थल का कोई साक्षी नहीं है । संभावना की प्रबलता के सिद्धांत को लागू करते हुए और किसी ठोस सामग्री के अभाव में एकमात्र यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियोजन घटना के समय किसी स्वतंत्र साक्षी की उपस्थिति को तथा अभिकथित घटनास्थल को सिद्ध करने में असफल रहा है । यह मात्र अपर्याप्त साक्ष्य का मामला नहीं है अपितु घटना के समर्थन के लिए स्वतंत्र और तर्कयुक्त साक्ष्य का पूर्णतया अभाव है । आरोप साबित करने के लिए यह आवश्यक है कि घटना को किसी स्वतंत्र साक्षी के सत्यतापूर्ण कथन से साबित किया जाए जोकि नहीं किया गया है । साक्ष्य की कमजोर प्रकृति, घटना के अत्यधिक असंभव स्थान और किसी स्वतंत्र साक्षी की उपलब्धता को दृष्टिगत करते हुए घटना के संघटक बिल्कुल भी या पूर्णरूप से साबित नहीं होते हैं । नामित साक्षियों का अभिसाक्ष्य न देना और उन्हें पेश न

करना प्रतिरक्षा पक्ष के कथन का विशेषतया नरेन्द्र के मामले में कथन का समर्थन करता है जिसकी राजेन्द्र ठेकेदार द्वारा पहचान की जा सकती थी । यह उपदर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि नरेन्द्र की पहचान या मौजूदगी के बारे में अभिसाक्ष्य देने के लिए राजेन्द्र को बुलाने का कोई प्रयास किया गया था । सभी व्यवहारिक प्रयोजनों के लिए, नरेन्द्र एक पहेली ही रहा । प्राधिकारियों द्वारा निकाला गया निष्कर्ष अनुमानों और अटकलों पर आधारित है जैसाकि शिकायतकर्ता और उसके मित्र जय मूरत द्वारा पेश किया गया । अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित विनिश्चय में निकाला गया निष्कर्ष हमें सुझाया हुआ प्रतीत होता है (ली नेवियू डि रामेयू) जिन्होंने इस प्रकार कहा है "हम किसी झूठ को जो हमें चापलूसी लगती है, चतुरता के साथ स्वीकार कर लेंगे किन्तु हम सच्चाई को जो हमें कड़वी प्रतीत होती है, थोड़ा-थोड़ा ही पिएंगे ।" एक अन्य पहलू भी है जिस पर विचार किया जाना आवश्यक है । पुनरीक्षण प्राधिकारी ने पुनरीक्षण खारिज करने की कार्यवाही करते समय यह उपदर्शित किया है कि याची पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष पेश हुई थी और उसने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोप के लिए दोषी होने का अभिवाक् किया था । आदेश में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह उपदर्शित हो सके कि याची का कथन पुनरीक्षण अधिकारी के समक्ष अभिलिखित किया गया था या उसने यह लिखित में दिया था कि वह अपना दोष स्वीकार कर रही है । आदेश से यह भी उपदर्शित होता है कि याची ने कदाचार को माफ किए जाने के लिए अनुरोध किया था । आदेश में पूर्वोक्त वर्णन का कोई भी साक्ष्य समर्थन नहीं करता है । पुलिस बल के प्रधान के रूप में अपनी पूर्ण शक्तियों के साथ महानिदेशक का विस्तृत प्राधिकार ऐसी किसी प्रास्थिति को प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है । ऐसे उदाहरणों की कोई कमी नहीं है जब बहादुर व्यक्ति भी मिथ्या अभियोगों को स्वीकार करने में हिचकिचाता नहीं है जब उसका जीवन और सम्मान दांव पर लगा हो । मेरे मतानुसार मामले की परिस्थितियों में समानुपात का सिद्धांत लागू करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि घटना विश्वसनीय नहीं है और पुनःविचारण का आदेश करके याची को प्रत्यर्थियों की दया पर नहीं छोड़ा जा सकता । यह आवश्यक नहीं है कि इस प्रकार की क्रूरता न हो । घटना नए वर्ष की है जैसाकि अभिकथित किया गया है इस प्रकार की घटना निश्चित रूप से किसी के भी लिए ठीक नहीं होगी और इसलिए न्यायिक निर्णय दिया जाना चाहिए । अतः याची के विरुद्ध दोषी होने का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता क्योंकि घटना की सत्यता या असत्यता के निर्धारण के लिए साक्षियों की परीक्षा

नहीं की गई है । कार्यवाहियां पूर्णरूप से अपारदर्शी परिस्थितियों के आधार पर की गई हैं जो आरोप का या दोष साबित होने का समर्थन नहीं करती हैं । तद्नुसार, तारीख 28 जून, 2006 को पद से हटाए जाने का आदेश और तारीख 12 सितम्बर, 2006 की अपील में अभिपुष्टि का आदेश तथा तारीख 20 दिसम्बर, 2006 का पुनरीक्षण खारिज करने के सभी आदेश अपास्त किए जाते हैं । याची को पिछली 50 प्रतिशत मजदूरी के साथ सेवा में बहाल किया जाएगा बशर्ते कि वह यह प्रमाणित करे कि वह अपने पद से हटाने की तारीख से फायदाप्रद नियोजन में नहीं रही है । (पैरा 17, 18, 19, 20, 21, 22, 23, 25, 26, 27, 32, 36 और 37)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2005] (2005) 3 एस. सी. सी. 241 :
चोलन रोडवेज लि. बनाम **जी. थिरूगनानसमबंदम** । 28

आरंभिक (सिविल) प्रकीर्ण रिट अधिकारिता : 2008 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 23902.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री एस. एस. राठौर और विनय कुमार सिंह

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री अशोक कुमार निगम, गिरधर प्रसाद, मनोज कुमार मिश्रा और आशीष दुबे

न्यायमूर्ति अमरेश्वर प्रताप साही – इस रिट याचिका में केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल में महिला कांस्टेबल के पद की सेवा से याची को हटाने के संबंध में 3 आदेशों को चुनौती दी गई है ।

2. याची को तारीख 28 जून, 2006 के आदेश द्वारा सेवा से हटाया गया था और उसके द्वारा फाइल की गई अपील भी तारीख 12 सितम्बर, 2006 को खारिज की गई है । उसके द्वारा फाइल किया गया पुनरीक्षण केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल के महानिरीक्षक ने तारीख 20 दिसम्बर, 2006 को खारिज कर दिया । अतः यह याचिका फाइल की गई है ।

3. एक घटना के कारण याची के विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाहियां

प्रारंभ की गई थीं । यह घटना वर्ष 2006 में नए वर्ष के दिन सेंधा बाजार, नजदीक मुकेश जनरल स्टोर, पंकी, जिला-कानुपर में एक सार्वजनिक स्थान पर लगभग सायं 5.30 बजे घटित होना अभिकथित की गई है । आक्षेपित आदेश में उद्धृत आरोप में यथा उपदर्शित अभिकथन इस प्रभाव का है कि याची ने हैड कांस्टेबल आर. एस. यादव के कालर को पकड़ा और अपने जूते से उस पर हमला किया । यह भी अभिकथन किया गया है कि उसके साथ एक सिविलियन अर्थात् श्री नरेन्द्र था जिसने उसको उकसाने के कार्य में सक्रिय रूप से सहयोग किया और पीड़ित को जान से मारने की धमकी दी और यह धमकी दी कि वह पिस्तौल से उसको गोली मार देगी ।

4. याची पर आरोप पत्र की तामील की गई थी और उसने तारीख 23 फरवरी, 2006 को अपना लिखित उत्तर दिया था । याची ने आरोपों से इनकार किया और घटना को भी गढ़ा हुआ बताया । उसके पश्चात् जांच की गई थी । जांच अधिकारी ने याची को समन भेजा और उसका कथन अभिलिखित किया । अभियोजन साक्षियों को भी समन भेजे गए थे और प्रतिपरीक्षा का अवसर दिया गया था । आदेश में यह भी अभिलिखित है कि जांच के दौरान, 2 व्यक्ति जो सिविलियन थे, और जिन्हें साक्षियों के रूप में नामित किया गया था, नोटिस भेजे जाने के बावजूद उपस्थित नहीं हुए । याची ने अपनी लिखित दलीलें पेश कीं और प्रतिरक्षा में यह प्रति-दावा किया कि उसे तंग किया गया था तथा अप्रायिक अनुरोध किया गया था । इसके पश्चात् जांच रिपोर्ट प्रस्तुत की गई थी । अभियोजन की ओर से तीनों साक्षियों अर्थात् शिकायतकर्ता हैड कांस्टेबल आर. एस. यादव, कांस्टेबल जय मूरत सिंह तथा पुलिस सब-इंस्पेक्टर जी. एस. रावत की परीक्षा की गई थी । न्यायालय साक्षी वाई. सी. रजवार की भी परीक्षा की गई थी । याची ने अपनी प्रतिरक्षा में स्वयं को पेश किया ।

5. अनुशासनिक प्राधिकारी ने पेश किए गए साक्ष्य के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला कि आरोप साबित हो गया है और तद्नुसार सेवा से हटाने का आदेश पारित किया ।

6. याची ने प्रतिरक्षा में घटना से पूर्णतया इनकार किया और यह भी उपदर्शित किया कि याची को डिप्टी कमांडेंट के निवास पर जाने के लिए मजबूर किया जा रहा था और चूंकि उसने ऐसा करने से इनकार किया था इसलिए उसे हैड कांस्टेबल श्री आर. एस. यादव द्वारा तंग और उत्पीड़ित किया गया । चूंकि याची एक जवान विधवा है और उसने अभिकथित

अप्रायिक अनुरोध का विरोध किया था इसलिए उसे उक्त परिणाम भोगना पड़ा । याची ने अपील फाइल की थी और अपील प्राधिकारी ने अनुशासनिक प्राधिकारी के निष्कर्षों की पुष्टि की थी । याची ने आदेश के विरुद्ध केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल के महानिदेशक के समक्ष पुनरीक्षण फाइल किया था और उसने सहानुभूतिपूर्वक विचार करने के लिए भारत सरकार के गृह मंत्री को भी समावेदन किया था किन्तु कोई फायदा नहीं हुआ और अन्ततः वह प्राधिकारियों से कोई अनुतोष पाने में असफल रही । महानिदेशक ने पुनरीक्षण खारिज करते हुए यह अभिलिखित किया कि याची उसके समक्ष पेश हुई थी और उसने स्वयं के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के लिए अपराध स्वीकार करने का अभिकथन किया था और उसने कथित कदाचार के लिए माफ किए जाने का अनुरोध किया था । महानिदेशक ने उसके अनुरोध को खारिज कर दिया और यह भी अभिनिर्धारित किया कि आरोप अत्यंत गंभीर थे इसलिए अनुशासनात्मक बल में याची को बहाल करने से इनकार किया ।

7. रिट याचिका में अन्तर्विष्ट प्रकथनों से इनकार करते हुए और आक्षेपित आदेशों में अभिलिखित निष्कर्षों का समर्थन करते हुए एक प्रति-शपथपत्र फाइल किया गया था ।

8. मैंने याची की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री शिवराज सिंह राठौर और प्रत्यर्थियों की ओर से मनोज कुमार मिश्रा को सुना । महावीर सिंह द्वारा प्रति-शपथपत्र पैरा सं. 1 में यह घोषणा करते हुए फाइल किया गया है कि वह यह शपथपत्र प्रत्यर्थियों की ओर से फाइल कर रहा है ।

9. श्री राठौर ने यह दलील दी कि आरोपों में किए गए अभिकथनों के समर्थन के लिए किसी प्रकार का कोई साक्ष्य नहीं है और किसी स्वतंत्र साक्षी के अभाव में या घटना के समर्थन में किसी तर्कपूर्ण साक्ष्य के अभाव में, अभियोजन द्वारा आरोप साबित नहीं किया जा सका इसलिए आक्षेपित आदेश दूषित है । उन्होंने यह दलील दी कि अभिलिखित कथनों का कोई उपयोग नहीं है क्योंकि स्वतंत्र साक्षी अर्थात् सोमपाल ने जिसका नाम लिखित शिकायत में उल्लिखित किया गया है, कभी भी जांच में कोई अभिसाक्ष्य नहीं दिया और उसे अभियोजन द्वारा प्रस्तुत नहीं किया गया है । घटनास्थल पर अभिकथित व्यक्ति अर्थात् नरेन्द्र की घटना उपस्थिति पूर्णरूप से काल्पनिक है और इस तथ्य के बावजूद उक्त नरेन्द्र को प्रस्तुत करने या समन करने के लिए अभियोजन द्वारा कोई भी प्रयास नहीं किया गया था कि प्रत्यर्थी ने यह अधिकथित किया है कि वह घटना होने के

समय वहां मौजूद था । शिकायत के समर्थन में अभिलिखित कथन पक्षपाती हैं और हितबद्ध साक्षियों ने किए हैं ।

10. श्री राठौर ने यह दलील दी कि संपूर्ण कहानी गढ़ी गई है और नरेन्द्र नाम का कोई व्यक्ति घटना के समय मौजूद नहीं था और न ही ऐसी कोई घटना कभी हुई है । तथापि, मिथ्यावादिता चाहे वह चतुराई से की गई हो, सच नहीं बन सकती है । उन्होंने यह दलील दी कि याची का उसके ज्येष्ठों के द्वारा हैड कांस्टेबल श्री आर. एस. यादव के माध्यम से उत्पीड़न किया जा रहा था और चूंकि याची उनकी मांगों के आगे झुकी नहीं थी, इसलिए उसे सताया गया और सेवा से हटाया गया था । वस्तुतः गलत सो के कारण कार्रवाई की गई जो शक्ति का गलत प्रयोग है और इसमें विधिक दुर्भाव का तत्व सम्मिलित है और साक्ष्य गढ़ा गया है जो कि अनुचित है ।

11. तथ्यों पर श्री राठौर ने यह दलील दी है कि साक्ष्य से जो जांच के दौरान संगृहीत किया गया है इस बात की पूरी संभावना है कि आरोप गढ़ा गया था और मामला सोझ-समझकर बनाया गया था । इस संदेह की इस तथ्य से पुष्टि होती है कि दो सिविलियन साक्षियों ने प्राथमिक जांच के दौरान कुछ जानकारी दिया जाना अभिकिथित किया गया है तथा वर्तमान अधिकारी के अनुसार, नोटिस के बावजूद उक्त दोनों सिविलियन जांच के दौरान अभिसाक्ष्य देने के लिए उपस्थित नहीं हुए । अतः यह दलील दी गई है कि अभियोजन उन साक्षियों को पेश करने और साक्ष्य प्रस्तुत करने में असफल रहा है जो उक्त घटना के अभिकथित रूप से साक्षी थे । यह दलील दी गई है कि संपूर्ण जांच परछाईं की तरह अस्पष्ट है और घटना का झूठा वर्णन किया गया है परिणामतः सच्चाई का गला घोंटा गया है । श्री राठौर के अनुसार पूरी घटना झूठ के सहारे गढ़ी गई है । श्री राठौर ने जांच अधिकारी की रिपोर्ट आक्षेपित करते हुए, यह दलील दी है कि अनुशासनिक अधिकारी द्वारा इसे "आंख मीचकर स्वीकार किया गया है" ।

12. श्री राठौर ने यह भी दलील दी कि यदि वहां ऐसी कोई घटना हुई होती या याची, पीड़ित/शिकायतकर्ता पर कोई हमला करती तो ऐसी किसी घटना के लिए कारण होना चाहिए था । उन्होंने यह दलील दी कि कथन ऐसा कोई आधार उपदर्शित नहीं करते जो ऐसे किसी हमले के लिए कारण बन सके । दूसरी ओर उन्होंने यह दलील दी है कि यदि याची ने ऐसा किया होता तो यह उन व्यक्तियों के चरित्र को प्रतिबिंब करता है जिन्होंने उसे धमकी देने का प्रयास किया । अतः, उन्होंने यह दलील दी

कि यदि विभाग के विवरण पर विश्वास भी किया जाए तो भी याची द्वारा हमले के प्रयास के कारण को छुपाया गया है या संपूर्ण घटना झूठी है । इसके लिए कारण यह है कि न तो शिकायतकर्ता ने और न ही विभाग ने कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट लिखाना पसन्द किया जिससे ऋजु और स्वतंत्र जांच की जा सकती थी ।

13. शिकायतकर्ता और अन्य साक्षियों के अभिकथनों से यह निष्कर्ष निकलता है कि शिकायतकर्ता उस दुकानदार का नाम बताने में असमर्थ रहा जो उसके बचाव में आना बताया गया है जबकि यह बहुत ही आसानी से कहा जा सकता है कि बहुत से दुकानदार मौजूद होंगे और ऐसे साक्षी को बनाया हुआ नहीं कहा जा सकता । न्यायालय साक्षी ने आरोपों के परे साक्ष्य दिया है और नरेन्द्र के बारे में ये अभिकथन किए हैं कि वह याची के परिसर में कुछ लड़कियों के साथ मौजूद था जिनके बारे में उसने पूछा था और अभिलिखित विवाद राजेन्द्र नामक संविदाकार के साथ था । ये अभिकथन पूर्णतया काल्पनिक थे और उनमें कोई सार नहीं था और उनके समर्थन में कोई सबूत पेश नहीं किया गया था । अतः यह दलील दी गई है कि कथन विश्वसनीय नहीं हैं और जांच अधिकारी तथा अनुशासनिक प्राधिकारी ने इनका अवलंब लेकर स्पष्ट गलती की है । साक्ष्य मामूली है और सारहीन है । मामला सुनियोजित था किन्तु उद्देश्य पूरा करने में गंभीर कमियां रह गईं ।

14. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी है कि कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज नहीं कराई गई थी जबकि अभिकथित घटना में ऐसा अपराध करना बताया गया है जोकि गैर-जमानती प्रकृति का था । हमले की प्रकृति किसी क्षति के बारे में नहीं बताती है और प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से प्राथमिक उपचार लेने की कहानी अस्पताल टिकट, किसी नुस्खे या ऐसे किसी चिकित्सा व्यवसायी या परिचर के कथन से साबित नहीं होती है जिन्होंने शिकायतकर्ता को प्राथमिक उपचार प्रदान किया था । शिकायतकर्ता ने उस डाक्टर या चिकित्सा परिचर का भी नाम दर्शित नहीं किया है जिसने प्राथमिक उपचार किया था ।

15. अतः यह दलील दी गई है कि न तो ऐसा कोई तथ्य पाया गया है और न ही ऐसी कोई कहानी है जिससे आरोप साबित किया जाना प्रतीत होता हो और इसलिए वरिष्ठ प्राधिकारियों द्वारा अभिपुष्ट अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अनुचित हैं । याची को न्याय नहीं दिया गया है और इसलिए, आदेश अपास्त किए जाने योग्य हैं । अपील

प्राधिकारी और पुनरीक्षण प्राधिकारी ने आधारों की इस प्रकार अनदेखी की है मानो वे प्रत्येक दावे को खारिज करने के लिए आबद्ध हैं ।

16. पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् आरंभतः यह कहा जा सकता है कि उठाए गए विवाद्यकों पर रिट याचिका में किए गए अभिवचन मामूली हैं, तथापि, श्री राठौर ने उन्हें अपनी न्यायिक दलीलों से और अभिलेख पर के साक्ष्य से साबित कर दिया है ।

17. तथ्यों के वर्णन से यह उपदर्शित होता है कि याची को अपनी औद्योगिक इकाई से दूसरे स्थान पर स्थानांतरित किया गया था किन्तु वरिष्ठ प्राधिकारियों ने तारीख 19 अक्तूबर, 2005 के आदेश को स्थगित कर दिया था । ऐसा प्रतीत होता है कि याची प्राधिकारियों के प्रतिरोध के कारण अपने कर्तव्यों को प्रभावी रूप से नहीं निभा सकी जो प्राधिकारियों की नाराजगी का कारण बना । याची ने अपनी शिकायत में डिप्टी कमांडेंट के समक्ष उपस्थित होने के लिए मजबूर करने से संबंधित आरोप लगाए हैं । डिप्टी कमांडेंट को ऐसे आरोप में अपना बयान देने के लिए नहीं बुलाया गया ।

18. यह समझ में आने वाली बात नहीं है कि किस कारण से इस महिला ने किसी खुले बाजार में हैड कांस्टेबल पर हमला किया होगा । शिकायतकर्ता ने इस बारे में कोई साक्ष्य नहीं दिया है कि किस बात ने याची को अचानक उस पर चिल्लाने और शारीरिक हमला करने के लिए प्रेरित किया । शिकायतकर्ता ने अपने अभिसाक्ष्य में उद्दीपन का कारण नहीं बताया है । शिकायतकर्ता ने कुछ क्रय करने के लिए बाजार में मौजूद होने का दावा किया है । स्वीकृततः, उसने कुछ क्रय नहीं किया था और उसने यह अभिसाक्ष्य दिया है कि वह बाजार से खाली हाथ लौट रहा था । कर्मचारी स्थानांतरण आदेशों के कारण पैकिंग के लिए कुछ सामग्री क्रय करने के लिए गया था ।

19. कांस्टेबल जय मूरत के सिवाय प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों को न तो पेश किया गया है और न ही उन्हें पेश करने के लिए कोई सद्भाविक या वास्तविक प्रयास किया गया है और न ही उन्हें उपस्थित होने के लिए विवश किया गया । केन्द्रीय औद्योगिक सुरक्षा बल एक पुलिस बल है और यह उपधारणा नहीं की जा सकती है कि अभियोजन साक्षियों को पेश करने में असहाय था जबकि यह कार्यवाही उसके अपने बल के सदस्य की सेवाओं से संबंधित थी । अतः, स्वतंत्र साक्षियों को पेश न करना एक गंभीर

संदेह डालता है यदि वास्तविक हमले पर नहीं तो निश्चित रूप से घटना के स्थान के संबंध में ।

20. याची ने बाजार में अपनी उपस्थिति से इनकार किया है । उक्त स्थिति को साबित करने के लिए यह आवश्यक था कि बाजार के कतिपय स्वतंत्र साक्षी पेश किए जाने चाहिए थे क्योंकि यह घटना बाजार में दिन में हुई थी और शिकायतकर्ता ने एक साक्षी को भी नामित किया है । अभियोजन का यह पक्षकथन नहीं है कि साक्षियों ने अनावश्यक अन्तर्वलन के कारण या अभियोजन की धमकी के कारण साक्ष्य देने से इनकार कर दिया ।

21. जो आश्चर्यचकित करने वाली बात है वह यह है कि संपूर्ण घटना से अपराध होना प्रकट होता है जो जांच की विषयवस्तु हो सकती है । हैड कास्टेबल, जो शिकायतकर्ता है, पीड़ित है और उसे प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज करानी चाहिए थी और उसने अपने अभिसाक्ष्य में इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया है कि उसने प्रथम इत्तिला रिपोर्ट क्यों दर्ज नहीं कराई जबकि घटना में केवल याची ही शामिल नहीं थी अपितु एक अभिकथित बाहरी व्यक्ति श्री नरेन्द्र भी सम्मिलित था । यह अभिकथित किया गया है कि उक्त व्यक्ति के पास एक देशी पिस्तौल था जैसाकि शिकायतकर्ता द्वारा अभिकथित किया गया है । इस बात के लिए कोई कारण नहीं है कि शिकायतकर्ता या सुरक्षा प्राधिकारियों ने अर्थात् दोनों में से किसी ने भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज क्यों नहीं कराई जब बाजार में एक बाहरी व्यक्ति द्वारा हमला करने के अभिकथन किए गए हैं ।

22. घटना ड्यूटी के समय नहीं हुई है और विवाद यदि कोई हुआ हो, तो वह पूर्णरूप से व्यक्तिगत प्रकृति का था और इसलिए, यह स्वाभाविक था कि कोई प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज की जाती । हमला क्षति से और तत्पश्चात् चिकित्सा उपचार दिए जाने से संबंधित है । अतः पुलिस स्टेशन में न जाना, शिकायतकर्ता और उसके साथी हैड कांस्टेबल जय मूरत के आचरण पर एक गंभीर संदेह डालता है ।

23. लिखित में शिकायत अगले दिन दी गई थी । प्राथमिक जांच ऐसी रीति में किया जाना अभिकथित की गई है जोकि पूर्णतया प्रायिक प्रतीत होती है और पूर्णतया औपचारिक है और विश्वसनीय है क्योंकि इसमें ऐसे साक्षियों के नाम दिए गए हैं जिन्हें जांच के दौरान कभी भी पेश नहीं किया गया । परिस्थितियां यह भी उपदर्शित करती हैं कि याची के विरुद्ध

वांछित परिणाम के लिए सोच-समझकर दोषारोपण करके कार्यवाही की गई थी । दूसरा कांस्टेबल भी जिसके बारे में साक्षी होने का कथन किया गया है, उसी बल का एक सदस्य है और उसने सामान्य तौर पर वही दोहराया है जो शिकायत में अभिकथित किया गया है । उसका पूर्ण व्यवहार पक्षपातपूर्ण है और शिकायतकर्ता का पक्ष लेना एक हितबद्ध साक्षी की श्रेणी में आता है ।

24. उक्त साक्षी ने यह अभिकथन किया है कि वह तारीख 31 दिसम्बर, 2005 को सेवानिवृत्त हो गया था और उसे बाहर जाना था, इसलिए, वह कुछ खरीदारी करने के लिए बाजार गया था और वह वहां शिकायतकर्ता के साथ गया था । उसने यह कथन किया है कि नरेन्द्र नामक व्यक्ति शिकायतकर्ता को गालियां दे रहा था । उसने उसे पकड़ लिया था जिसके पश्चात् याची ने जूते से शिकायतकर्ता पर हमला किया था । उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया है कि उसे अभिकथित हमले के दौरान कोई क्षति नहीं पंहुची । उसने यह भी अभिकथन किया है कि उसने दोनों को पृथक् करने का प्रत्यन किया था किन्तु वह उन पर नियंत्रण नहीं कर सका और उसके पश्चात् कुछ दुकानदार आ गए और उन्होंने शिकायतकर्ता और याची को अलग किया । परीक्षा के दौरान, उसने यह भी अभिकथन किया है कि उसने नरेन्द्र द्वारा दी गई धमकियों को स्पष्ट रूप से नहीं सुना था । उसने नरेन्द्र द्वारा किसी अग्न्यायुध का प्रयोग करने या उल्लेख करने या किसी देशी पिस्तौल से धमकी देने की बात से इनकार किया है । अतः जय मूरत का पूर्वोक्त कथन शिकायतकर्ता और शिकायत में उल्लिखित नरेन्द्र की उपस्थिति के कथन को झुठलाता है ।

25. अतः अनुशासनिक प्राधिकारी और अपील प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी ने मामले के पूर्वोक्त पहलुओं की व्याख्या किए बिना आरोप के समर्थन में उल्लेख किया है । विश्वास और अविश्वास का मूल्यांकन प्रायिक रूप से याची के विरुद्ध किया गया है । किसी स्वतंत्र साक्षी के अभिसाक्ष्य के द्वारा किसी ठोस सबूत के अभाव में, यह उपधारणा की जा सकती है कि शिकायतकर्ता ने अपने मित्र जय मूरत के साथ मिलकर एक बाजार में घटना घटित होने के समर्थन में इसमें किसी अन्य साक्ष्य के बिना संपूर्ण कहानी का ढांचा तैयार किया ।

26. याची ने घटना से पूर्णतया इनकार किया है । यह पूर्णतया संभव है कि घटना किसी अन्य स्थान पर हुई हो और इस घटना को समर्थन देने के उद्देश्य से इसे बाजार में दिखाया गया हो । जगह के परिवर्तन के लिए

कुछ कारण संभव हो सकते हैं जो स्पष्ट नहीं हैं किन्तु यह बात सिद्ध हो गई है कि बाजार में वास्तविक घटनास्थल का कोई साक्षी नहीं है । संभावना की प्रबलता के सिद्धांत को लागू करते हुए और किसी ठोस सामग्री के अभाव में एकमात्र यह निष्कर्ष निकलता है कि अभियोजन घटना के किसी स्वतंत्र साक्षी की उपस्थिति को तथा अभिकथित घटना-स्थल को सिद्ध करने में असफल रहा है । यह मात्र अपर्याप्त साक्ष्य का मामला नहीं है अपितु घटना के समर्थन के लिए स्वतंत्र और तर्कयुक्त साक्ष्य का पूर्णतया अभाव है । आरोप साबित करने के लिए यह आवश्यक है कि घटना को किसी स्वतंत्र साक्षी के सत्यतापूर्ण कथन से साबित किया जाए जोकि नहीं किया गया है ।

27. साक्ष्य की कमजोर प्रकृति, घटना के अत्यधिक असंभव स्थान और किसी स्वतंत्र साक्षी की उपलब्धता को दृष्टिगत करते हुए घटना के संघटक बिल्कुल भी या पूर्णरूप से साबित नहीं होते हैं । नामित साक्षियों का अभिसाक्ष्य न देना और उन्हें पेश न करना प्रतिरक्षा पक्ष के कथन का विशेषतया नरेन्द्र के मामले में कथन का समर्थन करता है जिसकी राजेन्द्र ठेकेदार द्वारा पहचान की जा सकती थी । यह उपदर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि नरेन्द्र की पहचान या मौजूदगी के बारे में अभिसाक्ष्य देने के लिए राजेन्द्र को बुलाने का कोई प्रयास नहीं किया गया था । सभी व्यवहारिक प्रयोजनों के लिए, नरेन्द्र एक पहेली ही रहा । प्राधिकारियों द्वारा निकाला गया निष्कर्ष अनुमानों और अटकलों पर आधारित है जैसाकि शिकायतकर्ता और उसके मित्र जय मूरत द्वारा पेश किया गया है । अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा अभिलिखित विनिश्चय में निकाला गया निष्कर्ष हमें सुझाया हुआ प्रतीत होता है (ली नेवियू डि रामेयू) जिन्होंने इस प्रकार कहा है "हम किसी झूठ को जो हमें चापलूसी लगती है, चतुरता के साथ स्वीकार कर लेंगे किन्तु हम सच्चाई को जो हमें कड़वी प्रतीत होती है, थोड़ा-थोड़ा ही पिएंगे ।"

28. यह न्यायालय एक घरेलू जांच में तथ्य का निष्कर्ष निकालने के लिए अपील न्यायालय के रूप में कार्य नहीं कर सकता है, किन्तु जहां पूर्ण अनुचितता दिखाई देती है वहां उच्चतर न्यायालयों द्वारा तथ्यों पर न्यायिक पुनर्विलोकन अनुज्ञेय है । इस संबंध में **चोलन रोडवेज लि.** बनाम **जी. थिरूगनानसमबंदम**[1] वाले मामले के पैरा सं. 35 का निर्देश किया जा

---

[1] (2005) 3 एस. सी. सी. 241.

सकता है, जो इस प्रकार है :–

> "35. तथ्यों की गलतियां भी न्यायिक समीक्षा की विषयवस्तु हो सकती हैं । (इ. वी सेक्रेटरी आफ स्टेट फार दि होम डिपार्टमेंट वाला मामला देखिए) इस संबंध में पाल पी. क्रेग कृत एक दिलचस्प लेख 'जूडीशियल रिव्यू, अपील एंड फैक्चुअल एक्ट' का निर्देश किया जा सकता है जो 2004 पब्लिक ला में पृष्ठ 788 पर प्रकाशित किया गया था ।"

29. उपरोक्त की गई चर्चा साक्ष्य का पुनःमूल्यांकन नहीं है अपितु यह महत्वपूर्ण तथ्यों पर विचार करने और अभिलेख पर की सामग्री का निर्वचन करने को और इस प्रवृत्ति को दर्शाती है कि प्राधिकारियों द्वारा अनुचित निष्कर्ष निकाला गया है । तथ्यतः संभावित साक्ष्य का अभाव था, जिसका मूल्यांकन किया जाता किन्तु जिसे अभियोजन द्वारा कभी पेश नहीं किया गया । प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों को पेश न करना न्यायालय को यह विश्वास उत्पन्न करता है कि जो साक्षी अस्तित्वयुक्त नहीं है वह कैसे साक्ष्य दे सकता है ।

30. वर्ष 1996 से अर्थात् काफी वर्षों से अपनी सेवा के दौरान, याची के बारे में यह कभी भी नहीं कहा गया कि उसने घटना के पूर्व कभी भी शिकायतकर्ता या अन्य किसी के साथ अभद्र व्यवहार किया था । याची तारीख 4 नवम्बर, 1996 को सेवा में आई थी और लगभग 10 वर्ष की सेवा के पश्चात् उसे सेवा से हटाया गया । कोई भी यह समझ सकता है कि याची ने कभी भी 10 वर्ष की सेवा में ऐसा अनुशासन रहित व्यवहार नहीं किया जिसे अप्रायिक कहा जा सके ।

31. ऊपर किए गए वर्णन से यह स्पष्ट होता है कि सच्चाई छुपाई गई है और अभियोजन का साक्ष्य दिखावटी था जिसका उपयोग घटना को छुपाने के लिए किया गया किन्तु कोई फायदा नहीं हुआ और व्यर्थ चला गया । छल-कपट की कहानी का जो गढ़ी गई थी, इन शब्दों में निष्कर्ष निकाला जा सकता है - "जहां सच विद्यमान है; वहां झूठ का आविष्कार किया जा रहा है" (ली जौर इट ला नयूट) ।

32. एक अन्य पहलू भी है जिस पर विचार किया जाना आवश्यक है । पुनरीक्षण प्राधिकारी ने पुनरीक्षण खारिज करने की कार्यवाही करते हुए यह उपदर्शित किया है कि याची पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष पेश हुई थी और उसने अपने विरुद्ध लगाए गए आरोप के लिए दोषी होने का

अभिवाक् किया था । आदेश में ऐसा कुछ नहीं है जिससे यह उपदर्शित हो सके कि याची का कथन पुनरीक्षण अधिकारी के समक्ष अभिलिखित किया गया था या उसने यह लिखित में दिया था कि वह अपना दोष स्वीकार कर रही है । आदेश से यह भी उपदर्शित होता है कि याची ने कदाचार को माफ किए जाने के लिए अनुरोध किया था । आदेश में पूर्वोक्त वर्णन का कोई भी साक्ष्य समर्थन नहीं करता है । पुलिस बल के प्रधान के रूप में अपनी पूर्ण शक्तियों के साथ महानिदेशक का विस्तृत प्राधिकार ऐसी किसी प्रास्थिति को प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त है । ऐसे उदाहरणों की कोई कमी नहीं है जब बहादुर व्यक्ति भी मिथ्या अभियोगों को स्वीकार करने में हिचकिचाता नहीं है जब उसका जीवन और सम्मान दांव पर लगा हो ।

33. इसके अलावा, यह याची द्वारा लिए गए विनिर्दिष्ट कथन के प्रतिकूल भी है और उसने अनुशासनिक प्राधिकारी के समक्ष या अपील प्राधिकारी के समक्ष अर्थात् दोनों में से किसी के समक्ष अपनी ओर से लिखित संस्वीकृति नहीं की है । इस प्रकार, पूर्वोक्त निष्कर्ष से यह प्रकट होता है कि याची आशान्वित होकर पुनरीक्षण में गई थी किन्तु उसने स्वयं को एक लड़की होने के नाते असहाय पाया । यह मात्र आशा ही साबित हुई । यह निराशा ही कुछ कथन करने के लिए उसको प्रेरित कर सकती है जिसे उसके द्वारा दोष को स्वीकार करने के रूप में लिया गया । इस संबंध में लारेंस सी. काफलीन के इस कथन का उल्लेख किया जा सकता है "तब तक कुछ मत कहो जब तक कि आपसे पूछा न जाए" ।

34. पुनरीक्षण प्राधिकारी द्वारा एक निराशाजनक अभिकथन से यह निष्कर्ष निकाला गया सही भी मान लिया जाए तो भी न्यायालय को जो गंभीर संदेह उत्पन्न हुए हैं, उनके आधार पर इसे दोष स्वीकार करने के बराबर नहीं माना जा सकता जहां याची ने शुरू से ही संपूर्ण घटना से इनकार करते हुए प्रतिरक्षा ली हो । याची के पूर्वोक्त अभिकथन इस प्रकार आत्मघातक माने जाएंगे मानो कि उसने पुनरीक्षण प्राधिकारी को एक ऐसी तलवार दे दी हो जो उसके अन्दर घोंपी जानी थी ।

35. याची ने परेशानी झेली है और उसे उसकी नौकरी से हटा दिया गया है । याची प्रत्यर्थियों की दया पर निर्भर थी जिन्होंने उसके साथ निर्दयतापूर्वक व्यवहार किया । वह एक ऐसी गढ़ी हुई कहानी से आहत हुई है जिसमें कोई सच्चाई नहीं थी और न ही याची ऐसे झूठ के आगे झुकी । वह गंभीर अन्याय से आहत हुई, उसके साथ कठोर व्यवहार किया गया

और परिणामतः उसके बच्चों ने अपना पिता खो दिया और भरण-पोषण का स्रोत भी खो दिया ।

36. मेरे मतानुसार मामले की परिस्थितियों में समानुपात का सिद्धांत लागू करने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि घटना विश्वसनीय नहीं है और पुनः विचारण का आदेश करके याची को प्रत्यर्थियों की दया पर नहीं छोड़ा जा सकता । यह आवश्यक नहीं है कि इस प्रकार की क्रूरता न हो । घटना नए वर्ष की है जैसाकि अभिकथित किया गया है । इस प्रकार की घटना निश्चित रूप से किसी के भी लिए ठीक नहीं होगी और इसलिए न्यायिक निर्णय दिया जाना चाहिए ।

37. अतः याची के विरुद्ध दोषी होने का निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता क्योंकि घटना की सत्यता या असत्यता के निर्धारण के लिए साक्षियों की परीक्षा नहीं की गई है । कार्यवाहियां पूर्णरूप से अपारदर्शी परिस्थितियों के आधार पर की गई हैं जो आरोप का या दोष साबित होने का समर्थन नहीं करती हैं । तद्नुसार, तारीख 28 जून, 2006 को पद से हटाए जाने का आदेश और तारीख 12 सितम्बर, 2006 की अपील में अभिपुष्टि का आदेश तथा तारीख 20 दिसम्बर, 2006 का पुनरीक्षण खारिज करने के सभी आदेश अपास्त किए जाते हैं । याची को पिछली 50 प्रतिशत मजदूरी के साथ सेवा में बहाल किया जाएगा बशर्ते कि वह प्रमाणित करे कि वह अपने पद से हटाने की तारीख से फायदाप्रद नियोजन में नहीं रही है ।

38. रिट याचिका मंजूर की जाती है तथापि, खर्चों का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

मही./मह.

जी. पी. श्रीवास्तव

बनाम

जिला न्यायाधीश, एटा और एक अन्य

तारीख 22 अक्तूबर, 2010

न्यायमूर्ति देवेन्द्र प्रताप सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – रिट याचिका – याची के विरुद्ध रिश्वत और भ्रष्टाचार की शिकायत – याची के विरुद्ध शिकायतों को गंभीर मानते हुए सतर्कता जांच का निदेश दिया जाना – अवैध रूप से परितोषण की मांग करने जैसे गंभीर आरोपों का दोषी पाया जाना – आदेश द्वारा उसे सेवा से अभिमुक्त किया जाना – जांच से कतिपय अनियमितताएं होने पर भी यह संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप करने के लिए एक उपयुक्त मामला नहीं है ।

जिला न्यायाधीश, एटा द्वारा तारीख 23 जून, 2005 को पारित सेवा समाप्ति के विरुद्ध रिट याचिका फाइल की गई । रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – स्पष्टतया, याची के विरुद्ध विभिन्न मदों पर आठ आरोप तैयार किए गए थे, जोकि जांच रिपोर्ट से साबित है और पदच्युति का आदेश किया गया था । उनमें से कुछ आरोप कर्मचारियों के उत्पीड़न आदि से संबंधित थे जिसमें असम्यक् लाभ प्राप्त करने के लए अवैध परितोषण की मांग करना भी सम्मिलित था । जांच के दौरान महिला कर्मचारी के लैंगिक उत्पीड़न से संबद्ध साक्ष्य भी अभिलेख पर आया था, जिसे पदच्युति के आदेश में भी लिख दिया गया है, किन्तु आदेश इस पर आधारित नहीं है और जिला न्यायाधीश ने स्वयं भी लिखा है कि लैंगिक उत्पीड़न का कोई आरोप नहीं था । केवल जांच के दौरान पाए गए साक्ष्य का उल्लेख किए बिना यह दर्शाना कि आदेश इस पर आधारित है, पदच्युति के आदेश को दूषित नहीं करता । तथापि, याची इस पहलू को न्यायालय के समक्ष प्रदर्शित करने या विश्वास दिलाने में असफल रहा था । प्रोद्धृत किए गए दोनों ही निर्णय तथ्यों या विधि के आधार पर इस मामले को लागू नहीं होते हैं । इसलिए दलीलें अस्वीकार की जाती हैं । जांच अधिकारी ने जिला

न्यायाधीश को बुलाने के आवेदन के गुणागुण पर विचार किया था और तारीख 6 सितम्बर, 2003 के आदेश द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया गया था, जिसे चुनौती नहीं दी गई थी । तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि जांच अधिकारी ने जब अन्य निष्कर्षों को छोड़कर आवेदन को खारिज किया तब उसने यह पाया कि अधिकतर आरोप दस्तावेजी साक्ष्यों पर आधारित हैं और धन की मांग किए जाने से संबद्ध आरोप जिला न्यायाधीश के कार्यालय के कर्मचारियों के मौखिक साक्ष्य के आधार पर साबित किया जाना था । यह भी पाया गया कि याची ने अपनी प्रतिरक्षा में 18 साक्षियों की सूची दी थी और उनकी परीक्षा कराई थी, किन्तु सूची में जिला न्यायाधीश के नाम का वर्णन नहीं किया गया था क्योंकि वे सेवानिवृत्त हो चुके थे । जांच अधिकारी द्वारा आवेदन को खारिज किए जाने के लिए दिए गए आधार पूर्णतः उचित प्रतीत होते हैं और इसलिए उसकी बहस को स्वीकार नहीं किया जा सकता । जहां तक शपथपत्र का संबंध है, अभिलेख से ऐसा प्रतीत होता है कि यह सोच-विचार के बाद दिया गया था और जांच की रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् फाइल किया गया था । जांच रिपोर्ट तारीख 21 मई, 2003 को प्रस्तुत की गई थी और अभिकथित शपथपत्र भी तारीख 21 मई, 2003 को ही दिया गया है । अतः जांच अधिकारी के पास उक्त शपथपत्र पर विचार करने का अवसर नहीं था । तथापि, जिला न्यायाधीश ने कारण बताओ नोटिस और प्रस्तावित सेवा समाप्ति के अपने तारीख 28 मई, 2005 के पत्र को जारी करते समय शपथपत्र पर विचार किया था और इसे स्वीकार न किए जाने के लिए तर्कपूर्ण आधार दिए थे । इस न्यायालय के पास भी ऐसा ही प्रतिकूल मत अपनाने के लिए कोई आधार नहीं है । तद्नुसार, यह दलील भी अस्वीकार की जाती है । याची को जो कि ऐसे संवेदनशील पद पर था, जिला न्यायाधीश के कार्यालय के कर्मचारी से अवैध परितोषण की मांग करने जैसे गंभीर आरोपों का दोषी पाया गया है, जो कि न केवल समग्र रूप से किसी संस्थान के कार्यकरण पर प्रभाव डालते हैं, अपितु यह ऐसा ही दर्शित भी करता है । याची को आवश्यकता से अधिक अवसर दिए जाने के बावजूद उसका प्रयत्न जांच में विलम्ब करना ही था । सभी तथ्यों के आधार पर उचित मत लेकर कुछ तकनीकी गलतियां होने पर भी संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन विचार करते हुए यह न्यायालय तथ्यों के आधार पर अपनी वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए तैयार नहीं है । (पैरा 5, 7, 8 और 9)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2001] (2001) 6 एस. सी. सी. 260 :
तरलोचन देव शर्मा बनाम **पंजाब राज्य और अन्य ;** 4

[1972] 1972 ए. एल. जे. 573 :
मसीहउद्दीन बनाम **आयुक्त इलाहाबाद खंड, इलाहाबाद ।** 4

आरम्भिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2005 की रिट सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 52685.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री जी. के. सिंह, वी. के. सिंह और सुजीत सिन्हा

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री के. आर. सिरोही, अमित स्थलेकर, आर. के. सिरोही, राजीव गुप्ता और यशवंत वर्मा

न्यायमूर्ति देवेन्द्र प्रताप सिंह – याची के विद्वान् काउंसेल और प्रत्यर्थी की ओर से श्री राजीव गुप्ता को सुना ।

2. यह याचिका जिला न्यायाधीश, एटा द्वारा तारीख 23 जून, 2005 को पारित सेवा की समाप्ति के आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है ।

3. याची उस समय वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारी के रूप में जिला न्यायाधीश, एटा के कार्यालय में कार्यरत था, जब उसके विरुद्ध कुछ शिकायतें प्राप्त हुई थीं, जिस पर प्रशासनिक न्यायाधीश ने शिकायतों को गंभीर मानते हुए सतर्कता जांच कराने के निदेश दिए थे । सतर्कता जांच में प्रथमदृष्ट्या याची के विरुद्ध अधिरोपित आरोपों को सही पाए जाने पर विभागीय जांच आरम्भ की गई थी । जांच पूर्ण होने पर आक्षेपित आदेश द्वारा याची की सेवाओं को समाप्त कर दिया गया था ।

4. प्रथमतः यह दलील दी गई है कि आक्षेपित सेवा की समाप्ति का आदेश पारित करते हुए याची पर लगाए गए लैंगिक उत्पीड़न के आरोपों पर भी विचार किया गया था जबकि यह कराई गई जांच के आरोपों में शामिल नहीं था और इसलिए यह दलील दी गई है कि यह आदेश दूषित

है । उसने अपनी दलील के समर्थन में इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित **मसीहउद्दीन** बनाम **आयुक्त इलाहाबाद खंड, इलाहाबाद**[1] वाले मामले में विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णय और **तरलोचन देव शर्मा** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया है ।

5. स्पष्टतया, याची के विरुद्ध विभिन्न मदों पर आठ आरोप तैयार किए गए थे, जोकि जांच रिपोर्ट से साबित है और पदच्युति का आदेश किया गया था । उनमें से कुछ आरोप कर्मचारियों के उत्पीड़न आदि से संबंधित थे जिसमें असम्यक् लाभ प्राप्त करने के लए अवैध परितोषण की मांग करना भी सम्मिलित था । जांच के दौरान महिला कर्मचारी के लैंगिक उत्पीड़न से संबद्ध साक्ष्य भी अभिलेख पर आया था, जिसे पदच्युति के आदेश में भी लिख दिया गया है, किन्तु आदेश इस पर आधारित नहीं है और जिला न्यायाधीश ने स्वयं भी लिखा है कि लैंगिक उत्पीड़न का कोई आरोप नहीं था । केवल जांच के दौरान पाए गए साक्ष्य का उल्लेख किए बिना यह दर्शाना कि आदेश इस पर आधारित है, पदच्युति के आदेश को दूषित नहीं करता । तथापि, याची इस पहलू को न्यायालय के समक्ष प्रदर्शित करने या विश्वास दिलाने में असफल रहा था । प्रोद्धृत किए गए दोनों ही निर्णय तथ्यों या विधि के आधार पर इस मामले को लागू नहीं होते हैं । इसलिए दलीलें अस्वीकार की जाती हैं ।

6. अंततः यह दलील दी गई है कि जांच अधिकारी ने साक्षी के रूप में जिला न्यायाधीश को बुलाने के आवेदन को अस्वीकार करके विधिक रूप से गलती की है और इस प्रकार याची को समुचित अवसर नहीं दिया गया था । यह भी दलील दी गई है कि पूर्वतर जिला न्यायाधीश ने याची के पक्ष में एक शपथपत्र दिया था जोकि प्रस्तुत भी किया गया था किन्तु उस पर प्राधिकारियों द्वारा कोई विचार नहीं किया गया था और इस प्रकार दंड का आदेश भी दूषित है ।

7. जांच अधिकारी ने जिला न्यायाधीश को बुलाने के आवेदन के गुणागुण पर विचार किया था और तारीख 6 सितम्बर, 2003 के आदेश द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया गया था, जिसे चुनौती नहीं दी गई थी । तथापि, ऐसा प्रतीत होता है कि जांच अधिकारी ने जब अन्य निष्कर्षों को छोड़कर आवेदन को खारिज किया तब उसने यह पाया कि अधिकतर आरोप दस्तावेजी साक्ष्यों पर आधारित हैं और धन की मांग किए जाने से

---

[1] 1972 ए. एल. जे. 573.

[2] (2001) 6 एस. सी. सी. 260.

संबद्ध आरोप जिला न्यायाधीश के कार्यालय के कर्मचारियों के मौखिक साक्ष्य के आधार पर साबित किया जाना था । यह भी पाया गया कि याची ने अपनी प्रतिरक्षा में 18 साक्षियों की सूची दी थी और उनकी परीक्षा कराई थी, किन्तु सूची में जिला न्यायाधीश के नाम का वर्णन नहीं किया गया था क्योंकि वे सेवानिवृत्त हो चुके थे । जांच अधिकारी द्वारा आवेदन को खारिज किए जाने के लिए दिए गए आधार पूर्णतः उचित प्रतीत होते हैं और इसलिए उसकी बहस को स्वीकार नहीं किया जा सकता ।

8. जहां तक शपथपत्र का संबंध है, अभिलेख से ऐसा प्रतीत होता है कि यह सोच-विचार के बाद दिया गया था और जांच की रिपोर्ट प्रस्तुत किए जाने के पश्चात् फाइल किया गया था । जांच रिपोर्ट तारीख 21 मई, 2003 को प्रस्तुत की गई थी और अभिकथित शपथपत्र भी तारीख 21 मई, 2003 को ही दिया गया है । अतः जांच अधिकारी के पास उक्त शपथपत्र पर विचार करने का अवसर नहीं था । तथापि, जिला न्यायाधीश ने कारण बताओ नोटिस और प्रस्तावित सेवा समाप्ति के अपने तारीख 28 मई, 2005 के पत्र को जारी करते समय शपथपत्र पर विचार किया था और इसे स्वीकार न किए जाने के लिए तर्कपूर्ण आधार दिए थे । इस न्यायालय के पास भी ऐसा ही प्रतिकूल मत अपनाने के लिए कोई आधार नहीं है । तद्नुसार, यह दलील भी अस्वीकार की जाती है ।

9. याची को जो कि ऐसे संवेदनशील पद पर था, जिला न्यायाधीश के कार्यालय के कर्मचारी से अवैध परितोषण की मांग करने जैसे गंभीर आरोपों का दोषी पाया गया है, जो कि न केवल समग्र रूप से किसी संस्थान के कार्यकरण पर प्रभाव डालते हैं, अपितु यह ऐसा ही दर्शित भी करता है । याची को आवश्यकता से अधिक अवसर दिए जाने के बावजूद उसका प्रयत्न जांच में विलम्ब करना ही था । सभी तथ्यों के आधार पर उचित मत लेकर कुछ तकनीकी गलतियां होने पर भी संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन विचार करते हुए यह न्यायालय तथ्यों के आधार पर अपनी वैवेकिक अधिकारिता का प्रयोग करने के लिए तैयार नहीं है ।

10. उपरोक्त तथ्यों के आधार पर संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन हस्तक्षेप किए जाने के लिए यह एक उपयुक्त मामला नहीं है । रिट याचिका खारिज की जाती है ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

भ./मह.

रक्षपाल सिंह

बनाम

पोखी सिंह

तारीख 5 जुलाई, 2011

न्यायमूर्ति सिबग़त उल्ला खां

उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियम, 1952 – नियम 285-झ – ऋण देयों के संबंध में कृषि भूमि की नीलामी – आयुक्त के समक्ष नीलामी कार्यवाही को आक्षेपित किया जाना – आक्षेप खारिज किए जाने पर राजस्व परिषद् के समक्ष पुनरीक्षण – मंजूरी – राजस्व परिषद् के आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष रिट याचिका द्वारा आक्षेपित किया जाना – रिट अधिकारिता के प्रयोग से वहां भी इनकार किया जा सकता है जहां आक्षेपित आदेश को रिट याचिका द्वारा चुनौती दी गई हो यदि अवैध आदेश को अपास्त करने का प्रभाव दूसरे अवैध आदेश को पुनरुज्जीवित करता हो ।

बैंक ऋण का प्रतिदाय न करने पर प्रत्यर्थी सं. 1 की भूमि नीलाम की गई थी । प्रत्यर्थी सं. 1 ने प्रथमतः, नीलाम को आक्षेपित करते हुए सिविल न्यायालय में वाद फाइल किया था । वाद व्यतिक्रम के आधार पर खारिज किया गया था । तत्पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1 ने उत्तर प्रदेश जमींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियमों के नियम 285-झ के अधीन आयुक्त के समक्ष आक्षेप फाइल किया । आयुक्त ने तारीख 8 मार्च, 1990 के आदेश द्वारा आक्षेप खारिज कर दिया जिससे व्यथित होकर प्रत्यर्थी सं. 1 ने राजस्व परिषद्, लखनऊ के समक्ष पुनरीक्षण फाइल किया था जो मंजूर किया गया था । अतः याचियों द्वारा राजस्व परिषद् के आदेश के विरुद्ध रिट याचिका फाइल की गई । रिट याचिका तद्नुसार निपटाते हुए,

अभिनिर्धारित – जहां राजस्व परिषद् ने भी पुनरीक्षण को खारिज कर दिया था और प्रत्यर्थी सं. 1 ने रिट याचिका फाइल की थी वहां रिट याचिका नीलाम विक्रय के विरुद्ध फाइल की गई समझी जा सकती है और सीधे नीलाम विक्रय को अभिखंडित करके मंजूर की जा सकती है । इसी कारण से जहां राजस्व परिषद् ने पुनरीक्षण में विक्रय को अपास्त किया है जो कि शून्य था

वहां ऐसे किसी आदेश को रिट याचिका में अपास्त नहीं किया जा सकता । इसके अतिरिक्त विधि का यह सुस्थापित सिद्धांत है कि रिट अधिकारिता के प्रयोग से वहां भी इनकार किया जा सकता है जहां आक्षेपित आदेश को रिट याचिका द्वारा चुनौती दी गई है और उसे अवैध पाया गया है, यदि उक्त आक्षेपित अवैध आदेश को अपास्त करने का प्रभाव दूसरे अवैध आदेश को पुनरुज्जीवित करता हो । तद्नुसार यदि यह रिट याचिका इस आधार पर मंजूर की जाती है कि आक्षेप ग्राह्य नहीं थे या देर से फाइल किए गए थे तब नीलाम जो पूर्णतया शून्य था, पुनरुज्जीवित हो जाएगा । तद्नुसार चूंकि नीलाम विक्रय पूर्णतया अकृत और शून्य था इसलिए रिट याचिका पूर्णतया मंजूर नहीं की जा सकती और राजस्व परिषद् के आदेश को जिसके द्वारा नीलाम विक्रय को अपास्त किया गया है, पूर्णरूप से अपास्त नहीं किया जा सकता । (पैरा 14, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[1997]	ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 3541 : **शांति देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ;	13, 18
[1996]	ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 2410 : **शंग्रीला फूड प्रोडक्ट्स लिमिटेड** बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम** ;	17
[1995]	ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 2195 : **राव महमूद अहमद खां** बनाम **रणबीर सिंह** ;	9
[1990]	1990 आर. डी. 291 : **राम स्वरूप** बनाम **राजस्व परिषद् और अन्य** ।	12

आरंभिक (सिविल) प्रकीर्ण रिट अधिकारिता : 1999 की सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका सं. 3295.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन सिविल प्रकीर्ण रिट याचिका ।

याचियों की ओर से सर्वश्री (डा.) दयाशंकर, ए. के. श्रीवास्तव, ए. एन. भार्गव और पंकज श्रीवास्तव

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री संकट राय और सुनील कुमार श्रीवास्तव, मुख्य स्थायी काउंसेल

न्यायमूर्ति सिबग़त उल्ला खां – पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना ।

2. प्रत्यर्थी सं. 1 पोखी सिंह ने ट्रैक्टर क्रय करने के लिए भारतीय स्टेट बैंक, ए. डी. बी. शाखा, एटा से ऋण लिया था । चूंकि वह ऋण का प्रतिदाय नहीं कर सका इसलिए प्रथमतः तारीख 19 जुलाई, 1985 को उसका ट्रैक्टर विक्रीत कर दिया गया था । तथापि, चूंकि संपूर्ण देय ऋण पूरा नहीं हो सका था इसलिए प्रत्यर्थी सं. 1 की कृषि भूमि खतौनी सं. 507 (भूखंड सं. 200 और 2072) की भूमि जिसमें उसका आधा भाग था, स्थित ग्राम नगला जलाल, तहसील सिकंदरा राव, जिला अलीगढ़ जो अब जिला हाथरस में आता है, तारीख 20 मार्च, 1987 को शेष देयों को वसूल करने के लिए 1,24,000/- रुपए में नीलाम की गई थी । प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 अर्थात् हबीब अहमद और शमशाद अली ने उक्त भूमि नीलाम में क्रय की थी (इसके पश्चात् याचियों ने नीलाम क्रेताओं से उक्त संपत्ति क्रय की थी) । नीलाम धनराशि का 1/4 भाग नीलाम की तारीख को अर्थात् तारीख 20 मार्च, 1987 को जमा किया गया था । शेष 3/4 धनराशि उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियमों के नियम 285-ङ के अनुसरण में 15 दिन के भीतर जमा की जानी आवश्यक थी । नीलाम क्रेताओं प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 ने 3/4 शेष धनराशि के संदाय के लिए तारीख 4 अप्रैल, 1987 का एक चैक दिया था । तथापि, चैक बाद में वापस ले लिया गया था और तारीख 18 अप्रैल, 1987 को राशि नकद जमा कर दी गई थी ।

3. इसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1 के आक्षेप के बावजूद राजस्व अभिलेख में नीलाम क्रेताओं के नाम और तत्पश्चात् याचियों के नामों का नामांतरण कर दिया गया था ।

4. प्रथमतः प्रत्यर्थी सं. 1 ने नीलाम विक्रय को आक्षेपित करते हुए व्यादेश आदि के लिए सिविल न्यायालय में वाद फाइल किया था जिसमें उसने नीलाम विक्रय की विधिमान्यता को प्रश्नगत किया था । याचियों द्वारा वादपत्र को तारीख 15 नवंबर, 2003 को फाइल किए गए अनुपूरक

शपथपत्र में उपाबंध एस. ए.-1 के रूप में उपाबद्ध किया गया है । वादपत्र तारीख 8 अप्रैल, 1987 को फाइल किया गया था । वादपत्र के पैरा 9 में यह कहा गया था कि प्रत्यर्थी सं. 1 की भूमि नीलाम की गई थी किंतु वह नीलाम के ब्यौरों के बारे में नहीं जानता था । न तो विक्रय की तारीख और न ही धनराशि जिसके लिए यह विक्रीत की गई थी, उल्लिखित की गई थी और न ही नीलामी क्रेताओं के नाम दिए गए थे । खातों के प्रदर्शन के लिए और स्थाई निषेधात्मक व्यादेश के लिए अनुरोध किया गया था और प्रत्यर्थियों को नीलामी विक्रय की पुष्टि करने से रोकने का भी अनुरोध किया गया था । वादपत्र में ऐसा कोई आधार नहीं लिया गया था कि समय के भीतर 3/4 धनराशि जमा न करने के कारण विक्रय अवैध था । वादपत्र के पैरा 11 और 12 में यह कहा गया था कि वादी समुचित रूप से लेखों की जांच के पश्चात् ऋण का संदाय करने के लिए तैयार था ।

5. वाद तारीख 21 नवंबर, 1988 को व्यतिक्रम के आधार पर खारिज किया गया था ।

6. इसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 3 जून, 1989 को उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियमों के नियम 285-झ के अधीन आयुक्त के समक्ष आक्षेप फाइल किए थे । अपर आयुक्त (प्रशासन) आगरा खंड, आगरा ने तारीख 8 मार्च, 1990 के आदेश द्वारा आक्षेप (1988-89 का आक्षेप सं. 21) खारिज कर दिया । आक्षेप में नीलाम की तारीख 20 मई, 1989 के रूप में उल्लिखित की गई थी । एक संशोधन आवेदन फाइल किया गया था जिसके द्वारा यह कहते हुए तारीख ठीक करने का अनुरोध किया गया था कि नीलाम की तारीख 20 मार्च, 1987 के रूप में प्रतिस्थापित की जानी चाहिए । निर्णय द्वारा आक्षेप को खारिज करते हुए संशोधन आवेदन भी खारिज कर दिया गया था । आक्षेपों में नीलाम क्रेता प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 या यचियों को पक्षकार नहीं बनाया गया था । अपर आयुक्त ने यह अभिनिर्धारित किया कि आक्षेप कालवर्जित थे क्योंकि नियम 285-झ के अधीन आक्षेप तीस दिन के भीतर फाइल किए जाने चाहिए थे ।

7. तारीख 15 मई, 1987 को विक्रय की पुष्टि भी कर दी गई थी ।

8. आयुक्त के आदेश के विरुद्ध प्रत्यर्थी सं. 1 ने राजस्व परिषद्, लखनऊ के समक्ष पुनरीक्षण सं. 51/सेल/89-90 फाइल किया था ।

पुनरीक्षण में नीलाम क्रेताओं के आवेदन पर उन्हें पक्षकार बनाते हुए उन्हें सुना गया था । राजस्व परिषद् ने पुनरीक्षण मंजूर कर लिया और नीलाम को शून्य घोषित किया तथा अपर आयुक्त का तारीख 8 मार्च, 1990 का आदेश अपास्त किया गया था और यह भी निदेश दिया गया था कि नए सिरे से नीलामी कार्यवाहियां की जानी चाहिए । राजस्व परिषद्, लखनऊ द्वारा उक्त आदेश तारीख 5 दिसंबर, 1998 को पारित किया गया था जिसे इस रिट याचिका द्वारा आक्षेपित किया गया है । आयुक्त के समक्ष आक्षेपों में नीलाम क्रेताओं को पक्षकार न बनाए जाने के संबंध में राजस्व परिषद् ने यह अभिनिर्धारित किया कि नीलामी क्रेता आवश्यक पक्षकार हैं । तथापि, राजस्व परिषद् ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि चूंकि वे उपस्थित हो गए थे और चूंकि पुनरीक्षण में उनका पक्षकार बनाने का आवेदन मंजूर किया गया था इसलिए कमी पूरी हो गई थी ।

9. राजस्व परिषद् ने धनराशि (विक्रय की तारीख से 15 दिन के भीतर) नकद जमा न करने के संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित **राव महमूद अहमद खां** बनाम **रणबीर सिंह**[1] वाले मामले के पूर्व निर्णय का अवलंब लिया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियमों का नियम 285-घ (जो विक्रय की 1/4 धनराशि को जमा करने की अपेक्षा करता है) आज्ञापक है और इसलिए धनराशि केवल नकद रूप में जमा की जानी चाहिए थी न कि चैक द्वारा ।

10. आक्षेप फाइल करने में विलंब के संबंध में पुनरीक्षण न्यायालय/राजस्व परिषद् ने यह अभिनिर्धारित किया कि प्रत्यक्षतया आक्षेप फाइल करने में विलंब हुआ है तथापि, उच्चतम न्यायालय के उपर्युक्त पूर्व-निर्णय के अनुसार चूंकि विक्रय पूर्णतया शून्य था इसलिए विलंब तात्विक नहीं है ।

11. जहां तक धनराशि जमा करने की अपेक्षा का प्रश्न है, उच्चतम न्यायालय का उपर्युक्त निर्णय पूर्णतया स्पष्ट है । चैक द्वारा धनराशि जमा करना नियम 285-घ या 285-ङ के अधीन निक्षेप के अंतर्गत नहीं आता ।

12. तथापि, जहां तक विलंब का संबंध है, प्रथमतः इस न्यायालय

---

[1] ए. आई. आर. 1995 एस. सी. 2195.

द्वारा विनिश्चित **राम स्वरूप** बनाम **राजस्व परिषद् और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के अधीन विलंब को माफ करने के लिए उपबंध उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार नियमों के नियम 285-झ (नीलाम विक्रय का रद्दकरण) के अधीन कार्यवाहियों को भी लागू होता है ।

13. द्वितीयतः लगभग इन्हीं परिस्थितियों के अधीन उच्चतम न्यायालय ने **शांति देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इस प्रश्न को अंतिम रूप से विनिश्चित नहीं किया था । उक्त मामले के तथ्य ये थे कि नीलाम क्रेता के पास पहले से ही पांच एकड़ भूमि थी और उसने नीलाम में 8.5 एकड़ भूमि क्रय की थी । इस प्रकार नीलाम क्रेता के पास कुल भूमि 13.5 एकड़ हो गई थी । तथापि, उत्तर प्रदेश ज़मींदारी उन्मूलन और भूमि सुधार अधिनियम की धारा 154 के उपबंधों के अनुसार ऐसा विक्रय जिसके कारण क्रेता 12.5 एकड़ भूमि से अधिक का भू-धारक बन गया था, अवैध है । अतः उच्चतम न्यायालय ने नीलाम को अकृत और शून्य घोषित करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि भले ही आयुक्त के समक्ष (नियम 285-झ के अधीन) कोई आक्षेप ग्रहण किए जाने योग्य नहीं था तथापि, उच्च न्यायालय ने अपनी रिट अधिकारिता के प्रयोग में नीलाम विक्रय को अपास्त कर दिया । उक्त निर्णय का पैरा 16 इस प्रकार है :–

> "प्रश्न यह उद्भूत होता है कि यदि नियम 285-झ या 285-ञ के अधीन विक्रय के 30 दिन के भीतर कोई आक्षेप फाइल नहीं किया जाता है तो क्या नीलाम की पुष्टि के पश्चात् आयुक्त के समक्ष कोई अन्य आवेदन फाइल नहीं किया जा सकता । इस प्रकार उपधारित करते हुए हमारा यह मत है कि अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई रिट याचिका सहायक कलक्टर के इस आदेश को आक्षेपित करने के रूप में मानी जा सकती है कि उसने ऐसे सुसंगत कारकों को लागू नहीं किया जिस पर वह आदेश की पुष्टि करते समय विचार करने के लिए आबद्ध था । धारा 154(1) के अधीन उद्भूत मुद्दा 'कपट' को निर्दिष्ट नहीं करता और इसलिए नियम 285-ट के परंतुक में उल्लिखित वाद का उपचार लागू नहीं होता है ।"

---

[1] 1990 आर. डी. 291.

[2] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 3541.

14. तद्नुसार जहां राजस्व परिषद् ने भी पुनरीक्षण को खारिज कर दिया था और प्रत्यर्थी सं. 1 ने रिट याचिका फाइल की थी वहां रिट याचिका नीलाम विक्रय के विरुद्ध फाइल की गई समझी जा सकती है और सीधे नीलाम विक्रय को अभिखंडित करके मंजूर की जा सकती है । इसी कारण से जहां राजस्व परिषद् ने पुनरीक्षण में विक्रय को अपास्त किया है जो कि शून्य था वहां ऐसे किसी आदेश को रिट याचिका में अपास्त नहीं किया जा सकता । इसके अतिरिक्त विधि का यह सुस्थापित सिद्धांत है कि रिट अधिकारिता के प्रयोग से वहां भी इनकार किया जा सकता है जहां आक्षेपित आदेश को रिट याचिका द्वारा चुनौती दी गई है और उसे अवैध पाया गया है, यदि उक्त आक्षेपित अवैध आदेश को अपास्त करने का प्रभाव दूसरे अवैध आदेश को पुनरुज्जीवित करता हो ।

15. तद्नुसार यदि यह रिट याचिका इस आधार पर मंजूर की जाती है कि आक्षेप ग्राह्य नहीं थे या देर से फाइल किए गए थे तब नीलाम जो पूर्णतया शून्य था, पुनरुज्जीवित हो जाएगा ।

16. तद्नुसार चूंकि नीलाम विक्रय पूर्णतया अकृत और शून्य था इसलिए रिट याचिका पूर्णतया मंजूर नहीं की जा सकती और राजस्व परिषद् के आदेश को जिसके द्वारा नीलाम विक्रय को अपास्त किया गया है, पूर्णरूप से अपास्त नहीं किया जा सकता ।

17. अब मैं साम्यों के समायोजन के प्रश्न पर विचार करने के लिए अग्रसर होता हूं । रिट अधिकारिता साम्यापूर्ण अधिकारिता है । जैसाकि उच्चतम न्यायालय द्वारा **शंग्रीला फूड प्रोडक्ट्स लिमिटेड** बनाम **भारतीय जीवन बीमा निगम**[1] वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है कि रिट याचिका में याची को अनुतोष मंजूर करते समय उसे यह निदेश दिया जा सकता है कि वह प्रश्नगत संव्यवहार के संबंध में स्वयं द्वारा लिए गए अनुचित फायदे को या उसके द्वारा रिट याचिका में आक्षेपित आदेश के अधीन फायदा न ले । इसी सिद्धांत के आधार पर यदि रिट याचिका लड़ने वाले प्रत्यर्थी के हक में खारिज की जाती है तब लड़ने वाले प्रत्यर्थी को भी यह निदेश दिया जा सकता है कि वह प्रश्नगत संव्यवहार के अधीन या उसके संबंध में उसके द्वारा लिए गए अनुचित फायदे को छोड़ दे ।

---

[1] ए. आई. आर. 1996 एस. सी. 2410.

18. **शांति देवी**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए उपर्युक्त निर्णय में निर्णीत-ऋणी के हक में रोक आदेश मंजूर करते हुए उसे यह निदेश दिया था कि वह एक लाख रुपए जमा करे जिसे अल्प अवधि जमा योजना में विनिधान करने का निदेश भी दिया गया ।

19. उक्त नजीर के पैरा 26 में उक्त धनराशि के उपयोग के लिए निदेश जारी किए गए थे ।

20. निर्णय का पैरा 26 इस प्रकार है :–

> "26 इस न्यायालय में जमा एक लाख रुपए की धनराशि का अल्प अवधि जमा योजना में विनिधान किया जाएगा । इसके परिपक्व होने पर इसे 1983 की सिविल रिट याचिका सं. 6557 के संबंध में उच्च न्यायालय को भेजा जाएगा । ब्याज सहित विक्रय अधिपत्र धनराशि के अनुसार देय धनराशि सुनिश्चित की जाएगी और इसे प्रथमतः संबंधित राजस्व प्राधिकारी को उत्तर प्रदेश कृषि प्रत्यय अधिनियम, 1973 की धारा 11-क के अधीन उक्त प्राधिकारी को जारी प्रमाणपत्र के समाधान के लिए संवितरित किया जाएगा । उच्च न्यायालय ब्याज सहित प्रमाणपत्र के अधीन संदेय धनराशि को यदि कोई हो, सुनिश्चित करेगा जैसा कि विक्रय कार्यवाहियों में कहा गया है और जैसाकि सरकार द्वारा व्यपगत कार्यवाहियों के खर्चों को पूरा करने के लिए कहा गया है । यदि उच्च न्यायालय को अंतरित की गई जमा धनराशि पर्याप्त नहीं है तो अपीलार्थी कमी को पूरा करेगा । क्रेता द्वारा जमा की गई धनराशि जमा करने की तारीख से 12% ब्याज सहित उसे वापस की जाएगी । क्रेता द्वारा संदेय ब्याज की धनराशि उच्च न्यायालय को इस न्यायालय द्वारा भेजी गई धनराशि में से संवितरित की जाएगी । यदि प्रमाणपत्र के अधीन संदेय मांग और सरकार के लिए खर्चों को पूरा करने के पश्चात् क्रेता को संदेय शेष ब्याज का संदाय करने के लिए अतिशेष राशि नहीं बचती है जैसाकि ऊपर कहा गया है तो क्रय से संबंधित धनराशि राजस्व न्यायालय में जमा की जा सकती है और इस कमी को भी अपीलार्थी पूरा करेगा । अपीलार्थी द्वारा संदेय ऐसी किसी अन्य धनराशि के संबंध में जैसाकि ऊपर कहा गया है, यदि

[1] ए. आई. आर. 1997 एस. सी. 3541.

आवश्यक हो तो उच्च न्यायालय अपीलार्थी को युक्तियुक्त समय मंजूर करेगा । निःसंदेह यदि उच्च न्यायालय को भेजी गई धनराशि इन सभी निदेशों को पूरा करने के लिए पर्याप्त हो तो अपीलार्थी द्वारा किसी अन्य भुगतान को करने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होगा । किसी पुष्टिकरण आदेश के अभाव में तारीख 2 मई, 1982 का विक्रय निरर्थक और निष्प्रभावी घोषित किया जाता है और अपीलार्थी उसका स्वामी और कब्जे का हकदार माना जाएगा । अपील तदनुसार निपटाई जाती है । तद्नुसार आदेश किया जाता है ।"

21. तद्नुसार राजस्व परिषद् द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को उपांतरित किया जाता है और नीलाम विक्रय निम्नलिखित शर्तों पर अपास्त किया जाता है :–

नीलाम क्रेता प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 द्वारा जमा की गई 1,24,000/- रुपए की धनराशि प्रत्यर्थी सं. 1, जमा की तारीख (18 अप्रैल, 1987) से 12% वार्षिक ब्याज सहित याचियों को प्रतिपूर्ति करेगा । यह धनराशि याचियों को तुरंत संदाय करने के लिए कलक्टर के पास जमा की जाएगी ।

22. प्रत्यर्थी सं. 1 विवादित भूमि का कब्जा याचियों से वापस लेने का हकदार होगा और वह उपर्युक्त धनराशि जमा करने के पश्चात् ही अपना नाम राजस्व अभिलेख में नामांतरित कराएगा । तब तक याचियों को विवादित संपत्ति किसी भी रीति में अंतरित करने, उसकी प्रकृति को परिवर्तित करने या उस पर कोई प्रभार प्रभारित करने से रोका जाता है ।

23. रिट याचिका का तद्नुसार निपटान किया जाता है ।

रिट याचिका तद्नुसार निपटाई गई ।

मह.

पी. सुरेन्द्रन

बनाम

पी. गोपा कुमार और एक अन्य

तथा

पी. गोपा कुमार और एक अन्य

बनाम

पी. सुरेन्द्रन

तारीख 2 अगस्त, 2010

न्यायमूर्ति पीयूष सी. कुरियाकोज और न्यायमूर्ति सी. के. अब्दुल रहीम

केरल भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) अधिनियम, 1965 – धारा 11(2)(ख), 11(3) और 11(4)(ii) – किराएदारी – मकान-मालिक की वास्तविक आवश्यकता – प्राधिकारी द्वारा विभाजन में प्राप्त अंश की सीमा तक बेदखली का आदेश पारित करना – जहां यह साबित हो जाता है कि मकान-मालिक को भवन की वास्तविक आवश्यकता है वहां संपूर्ण भवन की बेदखली के लिए आदेश पारित किया जा सकता है ।

मकान-मालिक और किराएदार दोनों ने किराया नियंत्रण अपील प्राधिकरण के निर्णय से व्यथित होकर ये पुनरीक्षण आवेदन फाइल किए हैं । मकान-मालिक का पुनरीक्षण आवेदन मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपील प्राधिकारी ने साक्ष्य में ऐसा कुछ भी नहीं पाया जिससे कि किराया नियंत्रण न्यायालय के इन निष्कर्षों पर शंका हो कि डा. गोपा कुमार द्वारा दर्शाई गई अपना क्लीनिक प्रारम्भ करने की आवश्यकता वास्तविक है । इसलिए अपील प्राधिकारी ने निष्कर्ष की पुष्टि की और अपने इस मत के आधार पर भागतः बेदखली का आदेश किया कि गोपा कुमार को केवल भवन के उस भाग पर ही बेदखली का आदेश कराने का हक है जो उसे अपने अंश के रूप में विभाजन में प्राप्त हुआ था । निस्संदेह, केरल भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) नियमों के नियम 11 का उपनियम 8 यह उपबंध करता है कि सांविधिक प्राधिकारियों को निर्णय लेते समय निष्पक्षता, न्याय और सुविवेक के सिद्धांतों का पालन करना

चाहिए । जैसा कि इस मामले में है, विवादास्पद भवन बहुत बड़ा भवन नहीं है । मकान-मालिक ने यह आवश्यकता दर्शाई है कि डा. गोपा कुमार, जो कि सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त हुआ है, एक वृहत् बाल रोग क्लीनिक आरम्भ करना चाहता है । न्यायालय का यह मत है कि साम्यापूर्वक विचार करने पर भी जब एक बार आवश्यकता सद्भाविक प्रतीत होती हो तो बेदखली का आदेश पूरे भवन के लिए किया जाना चाहिए, यदि एक बार यह प्रतीत हो कि धारा 11(3) के उपबंध मकान-मालिक के विरुद्ध लागू नहीं होते हैं । यद्यपि, श्री माधवन द्वारा दी गई दलीलों के परिप्रेक्ष्य में न्यायालय द्वारा मामले के साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करने के पश्चात् यह दर्शित होता है कि सांविधिक प्राधिकारी द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि आर. सी. पी. में डा. गोपा द्वारा दर्शाई गई आवश्यकता सद्भाविक है, उचित प्रतीत होता है । न्यायालय को 1965 के अधिनियम 2 की धारा 20 की रूप रेखा के अधीन लिए गए निष्कर्ष में कोई हस्तक्षेप करने की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है । (पैरा 3, 6 और 7)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	2009 (2) के. एच. सी. 712 : **जार्ज के.** बनाम **थंकामा वर्गीज और अन्य ;**	4,5
[2004]	2004 (1) के. एल. टी. 678 : **मार अपरेम कुरी कंपनी लि.** बनाम **डिक्स ;**	4,5
[1977]	ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1357 : **जीवराम रणछोड़दास ठक्कर और एक अन्य** बनाम **तुलसीदास रतनचन्द मंत्री और अन्य ।**	5

सिविल (पुनरीक्षणीय) अधिकारिता : 2005 का पुनरीक्षण आवेदन सं. 479 और 534.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण आवेदन ।

आवेदक की ओर से श्री एम. सी. माधवन

प्रत्यर्थी की ओर से श्री आर. एस. कलकुरा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पीयूष सी. कुरियाकोज ने दिया ।

न्या. कुरियाकोज – मकान-मालिक और किराएदार दोनों ने किराया नियंत्रण अपील प्राधिकरण के उस निर्णय से व्यथित होकर पुनरीक्षण आवेदन फाइल किए हैं जिसमें प्राधिकारी ने परिसर की जो कार्यवाहियों की विषय-वस्तु है, बेदखली (भागतः बेदखली) के आदेश पारित किए हैं । 2005 का किराया नियंत्रण पुनरीक्षण आवेदन सं. 534 मकान-मालिक द्वारा फाइल किया गया है तथा 2005 का किराया नियंत्रण पुनरीक्षण आवेदन सं. 479 किराएदार द्वारा फाइल किया गया है । मकान-मालिक ने किराएदार से धारा 11(2)(ख) के अधीन किराए की बकाया के आधार पर, धारा 11(3) के अधीन अपने अधिभोग की वास्तविक आवश्यकता के आधार पर, धारा 11(4)(ii) के अधीन भवन के उपभोक्ता द्वारा इस रीति में उपयोग किए जाने के आधार पर, जिससे कि उसका मूल्य और उपयोगिता कम हो गई है और इस आधार पर कि धारा 11(4)(ii) के अधीन किराएदार ने एक अन्य भवन पर कब्जा प्राप्त कर लिया है, बेदखली का अनुरोध किया है । किराया नियंत्रण न्यायालय ने धारा 11(2)(ख) और 11(3) के अधीन आवेदन मंजूर कर लिया । अपील प्राधिकारी ने धारा 11(2)(ख) के अधीन आदेश की पुष्टि की थी और धारा 11(3) के अधीन आदेश में संशोधन किया जिससे कि भवन के केवल एक भाग की बेदखली हो जिसका स्वामित्व विभाजन विलेख के अधीन 2005 की आर. सी. आर. सं. 534 में प्रथम पुनरीक्षण में के याची को आबंटित किया गया था । मकान-मालिकों द्वारा फाइल किए गए पुनरीक्षण में उन्होंने भागतः बेदखली के आदेश को आक्षेपित किया जबकि किराएदार ने फाइल किए गए पुनरीक्षण में उसने न केवल भागतः बेदखली के आदेश को अपितु किराए की बकाया के आधार पर पारित किए गए बेदखली के आदेश को भी चुनौती दी थी । धारा 11(2)(ख) के अधीन पारित बेदखली के आदेश की सत्यता के संबंध में कुछ समय के लिए दोनों पक्षों को सुनने के दौरान मकान-मालिकों के विद्वान् काउंसेल श्री आर. एस. कलकुरा ने यह दलील दी कि चूंकि धारा 11(2)(ख) के अधीन बेदखली का आदेश अनंतिम है अतः मकान-मालिक उस आदेश से चिंतित नहीं हैं । मकान-मालिक के विद्वान् काउंसेल की उपरोक्त दलील को ध्यान में रखते हुए हम किराएदार के विद्वान् काउंसेल श्री एम. सी. माधवन के निवेदन को स्वीकार करते हैं और हम धारा 11(2)(ख) के अधीन बेदखली के आदेश को रद्द करते हैं ।

2. अब केवल यह एक ही विषय विचारार्थ शेष है कि क्या धारा 11(3) के अधीन अपील प्राधिकारी द्वारा पारित भागतः बेदखली का आदेश

कायम रखे जाने योग्य है ।

3. मकान-मालिकों का जो कि धारा 11(3) के संदर्भ में भाई-बहन हैं, यह पक्षकथन है कि मकान-मालिक सं. 1 एक सेवानिवृत्त चिकित्सा व्यवसायी है जो कि अपना बाल चिकित्सा क्लीनिक आरम्भ करने के लिए याचिका में दिए गए संपूर्ण भवन पर अपना अधिभोग चाहता है । किराएदार द्वारा वास्तविक आवश्यकता के आधार को विवादित किया गया है और यह दावा किया है कि मकान-मालिक का विचार किसी भी युक्ति से किराएदार को बेदखल करना है । किराया नियंत्रण न्यायालय में विचारण के समय मकान-मालिक ने पी. डब्ल्यू. 1 के रूप में स्वयं अपनी परीक्षा कराई थी । प्रतिपरीक्षा के पश्चात् भी वह अपने इस पक्षकथन पर कायम था कि उसे क्लीनिक आरम्भ करने के लिए संपूर्ण भवन पर कब्जा चाहिए । उसके साक्ष्य ने किराया नियंत्रण न्यायालय को अत्यधिक प्रभावित किया । न्यायालय का यह मत था कि आवश्यकता वास्तविक है और बेदखली का आदेश किया गया था । वह आधार जिसे अपील प्राधिकारी के समक्ष प्रभावी रूप से प्रस्तुत किया गया था, यह था कि किराएदारी पहले ही विघटित हो चुकी है और इसलिए वह व्यक्ति जिसे आवश्यकता है, अर्थात् मकान-मालिक सं. 1 भवन के उस भाग पर बेदखली की वांछा नहीं कर सकता जिस पर उसकी बहन अर्थात् आर. सी. पी. में द्वितीय याची का पूर्ण स्वामित्व है । अपील प्राधिकारी अत्यधिक प्रभावित हुआ था । अपील प्राधिकारी ने यह अवेक्षा की कि याची सं. 2, श्रीमती के. प्रेम कुमारी ने साक्षी के कठघरे में आ कर आर. सी. पी. में दर्शाए गए अपने दावे को सिद्ध नहीं किया था । अपील प्राधिकारी के अनुसार श्रीमती प्रेम कुमारी, भाई और बहन के बीच हुए विभाजन विलेख के अनुसार उसको मिले भवन के आधे भाग की मकान-मालिक है तथा भाई डा. गोपा कुमार धारा 11(3) के प्रयोजन के लिए उस पर कभी भी आश्रित नहीं था । तथापि, अपील प्राधिकारी ने साक्ष्य में ऐसा कुछ भी नहीं पाया जिससे कि किराया नियंत्रण न्यायालय के इन निष्कर्षों पर शंका हो कि डा. गोपा कुमार द्वारा दर्शाई गई अपना क्लीनिक प्रारम्भ करने की आवश्यकता वास्तविक है । इसलिए अपील प्राधिकारी ने निष्कर्ष की पुष्टि की और अपने इस मत के आधार पर भागतः बेदखली का आदेश किया कि गोपा कुमार को केवल भवन के उस भाग पर ही बेदखली का आदेश कराने का हक है जो उसे अपने अंश के रूप में विभाजन में प्राप्त हुआ था ।

4. हमने किराएदार के विद्वान् काउंसेल श्री एम. सी. माधवन और

मकान-मालिक के विद्वान् काउंसेल श्री आर. एस. कलकुरा की दलीलें सुनी । श्री माधवन ने हमारा ध्यान इस न्यायालय द्वारा **मार अपरेम कुरी कम्पनी लि.** बनाम **डिक्स**[1] वाले मामले में दिए गए निर्णय की ओर आकृष्ट किया और यह निवेदन किया कि विद्वान् अपील प्राधिकारी ने वास्तविक रूप से इस निर्णय में अधिकथित सिद्धांतों का अनुसरण किया है । श्री कलकुरा ने **जार्ज के.** बनाम **थंकामा वर्गीज और अन्य**[2] वाले मामले में हमारे निर्णय का निर्देश करते हुए यह दलील दी है कि इस मामले में जहां दोनों मकान-मालिक अर्थात् भाई और बहन किराएदारी को खंडित करने के इच्छुक नहीं थे और प्रश्नगत विभाजन विलेख के निष्पादन के पश्चात् भी उसी किराएदार की किराएदारी को चालू रखने के इच्छुक थे, विद्वान् अपील प्राधिकारी संपूर्ण भवन के एक भाग के मामले में किराया नियंत्रण न्यायालय द्वारा पारित बेदखली के आदेश को प्रतिबंधित करने के प्रयोजन के लिए किराएदारी विघटित करने से संबंधित सिद्धांतों को लागू नहीं कर सकता । श्री एस. सी. माधवन ने अपील प्राधिकारी के इस निष्कर्ष को कि डा. गोपा कुमार द्वारा दर्शाई गई आवश्यकता सद्भाविक थी और किराया नियंत्रण याचिका पूर्णतः खारिज की जानी चाहिए, आक्षेपित करते हुए यह दलील दी कि यदि न्यायालय किराया नियंत्रण न्यायालय द्वारा निकाले गए इस निष्कर्ष की पुष्टि करने की स्थिति में है कि श्री गोपा कुमार द्वारा दर्शाई गई आवश्यकता सद्भाविक है, तो यह संपूर्ण भवन की बेदखली का आदेश करने के लिए उचित हो सकता है ।

5. हमने अधिवक्ताओं द्वारा दी गई दलीलों पर सतर्कतापूर्वक विचार किया । हमारे अनुसार किराएदारी को समाप्त करने की संकल्पना, जिसे इस न्यायालय की खंडपीठ ने **मार अपरेम कुरी कम्पनी**[1] वाले मामले तथा उसके पश्चात् दूसरी खंडपीठ ने **जार्ज** बनाम **थंकामा वर्गीज**[2] वाले मामले में स्पष्ट किया था, वर्तमान मामले में लागू नहीं होती क्योंकि दो मकान-मालिक अर्थात् किराया नियंत्रण याचिका में के याची इस मामले में किराएदार को मूल किराएदारी बनाए रखना चाहते हैं क्योंकि उनके संयुक्त स्वामित्व में एक ही किराएदारी है । **जीवराम रणछोड़दास ठक्कर और एक अन्य** बनाम **तुलसीदास रतनचन्द मंत्री और अन्य**[3] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय का निर्णय जो न्यायमूर्ति वी. आर. कृष्ण अय्यर द्वारा दिया गया

[1] 2004 (1) के. एल. टी. 678.
[2] 2009 (2) के. एच. सी. 712.
[3] ए. आई. आर. 1977 एस. सी. 1357.

था, न्यायोचित किराएदारी को समाप्त किए बिना भी भागतः बेदखली के आदेश को न्यायोचित ठहरा सकता है । वह एक ऐसा मामला था जिसमें उच्चतम न्यायालय ने उस मामले की सभी परिस्थितियों को समग्र रूप से देखते हुए यह पाया कि भवन का एक भाग, जो उस मामले की विषय-वस्तु था, मकान-मालिक को सौंपा जा सकता था और दूसरा भाग किराएदार द्वारा धारित करना अनुज्ञात किया जा सकता था । यह विनिश्चय 'जीयो और जीने दो' की नीति के आधार पर किया गया था । हमारा यह मत है कि बाम्बे कानून की धारा 13(1)(I) जिसपर उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में विचार किया था, केरल विधि की धारा 11 की उपधारा (3) के अनुरूप नहीं है । वस्तुतः बाम्बे कानून की धारा 13(1)(I), केरल विधि की धारा 11(4)(ii) के सदृश है । इस न्यायालय द्वारा धारा 11(4)(iii) के अधीन मामलों में जो मत व्यक्त किया गया है, वह यह है कि जब एक बार यह दर्शा दिया गया हो कि किराएदार द्वारा अन्य किसी भवन पर कब्जा प्राप्त कर लिया गया है जो उसी शहर, नगर या गांव में किराएदार की आवश्यकता के लिए पर्याप्त है तो किराएदार बेदखल किए जाने योग्य है तथा जब यह साबित हो जाता है कि किराएदार ने किसी अन्य भवन पर कब्जा प्राप्त कर लिया है तब यह साबित करने का भार किराएदार पर होगा कि ऐसा भवन उसकी आवश्यकता के लिए पर्याप्त नहीं है ।

6. निस्संदेह, केरल भवन (पट्टा और किराया नियंत्रण) नियमों के नियम 11 का उपनियम 8 यह उपबंध करता है कि सांविधिक प्राधिकारियों को निर्णय लेते समय निष्पक्षता, न्याय और सुविवेक के सिद्धांतों का पालन करना चाहिए । जैसा कि इस मामले में है, विवादास्पद भवन बहुत बड़ा भवन नहीं है । मकान-मालिक ने यह आवश्यकता दर्शाई है कि डा. गोपा कुमार, जो कि सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त हुआ है, एक वृहत् बाल रोग क्लीनिक आरम्भ करना चाहता है । हमारा यह मत है कि साम्यापूर्वक विचार करने पर भी जब एक बार आवश्यकता सद्भाविक प्रतीत होती हो तो बेदखली का आदेश पूरे भवन के लिए किया जाना चाहिए, यदि एक बार यह प्रतीत हो कि धारा 11(3) के उपबंध मकान-मालिक के विरुद्ध लागू नहीं होते हैं ।

7. यद्यपि, श्री माधवन द्वारा दी गई दलीलों के परिप्रेक्ष्य में हमारे द्वारा मामले के साक्ष्य का पुनः मूल्यांकन करने के पश्चात् यह दर्शित होता है कि सांविधिक प्राधिकारी द्वारा निकाला गया यह निष्कर्ष कि आर. सी. पी. में डा. गोपा द्वारा दर्शाई गई आवश्यकता सद्भाविक है, उचित प्रतीत होता

है । हमें 1965 के अधिनियम 2 की धारा 20 के उपबंधों के अधीन निकाले गए निष्कर्ष में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती है । उपरोक्त चर्चा का परिणाम निम्नवत् है ।

8. 2005 का किराया नियंत्रण पुनरीक्षण सं. 479 उस सीमा तक मंजूर किया जाता है, जहां तक वह किराए की बकाया के आधार पर पारित बेदखली के आदेश से संबंधित है । 2005 का आर. सी. आर. सं. 534 उस सीमा तक मंजूर किया जाता है जहां तक वह आर. सी. पी. की विषय-वस्तु से संबद्ध संपूर्ण भवन के संबंध में धारा 11(3) के अधीन किए गए बेदखली के आदेश से संबंधित है ।

9. श्री माधवन का अंतिम निवेदन यह था कि किराएदार को भवन खाली करने के लिए एक वर्ष का समय दिया जाए । श्री कलकुरा ने इस निवेदन का विरोध किया है । तथापि, मामले के संपूर्ण तथ्यों को ध्यान में रखते हुए हम परिसर खाली करने के लिए 31 मार्च, 2011 तक का समय देते हैं जो कि निम्नलिखित शर्तों पर होगा ।

10. किराएदार आज से एक मास के भीतर निष्पादन न्यायालय के समक्ष एक शपथपत्र फाइल करेगा जिसमें 31 मार्च, 2011 से पूर्व उसके कब्जे में विद्यमान संपूर्ण भवन को शांतिपूर्ण ढंग से सुपुर्द करने का आश्वासन दिया जाएगा और वह आज से छह सप्ताह के भीतर किराए की बकाया का, यदि कोई हो, जो कि आर. सी. पी. फाइल करने के पश्चात् देय हो, भुगतान करेगा और जब तक वह सुपुर्दगी नहीं कर देता, चालू दरों पर अधिभोग प्रभारों का भुगतान करता रहेगा । हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि किराएदार को उपरोक्त समय का लाभ तभी मिलेगा जब वह समय पर शपथपत्र फाइल कर देता है ।

मकान-मालिक का पुनरीक्षण आवेदन मंजूर किया गया ।

भ./मह.

नजीर अहमद वार्फी

बनाम

राज्य और अन्य

तारीख 29 जुलाई, 2010

न्यायमूर्ति हसनैन मसूदी

जम्मू-कश्मीर संविधान, 1957 – अनुच्छेद 103 [सपठित जम्मू-कश्मीर सिविल सेवा नियम, 1956 – नियम 23 और विनियम 4(घ)(ii)] – सीधी भर्ती – वरिष्ठता सूची – भावी प्रोन्नति – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर प्रोन्नत व्यक्तियों की सेवा का नियमितीकरण – तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर की गई सेवा भूतलक्षी प्रभाव से उस तारीख से नियमित की जा सकती है जब प्रोन्नति कोटे में स्पष्ट रिक्ति हो – तथापि, ऐसा नियमितीकरण पात्रता, योग्यता और अन्य संबंधित तथ्यों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए – सीधी भर्ती व्यक्ति उस तारीख से जब वह सेवा में नहीं आया था, ज्येष्ठता का दावा नहीं कर सकता ।

याची इस बात से व्यथित था कि उसे सहायक ओषधि नियंत्रक/ सहायक ओषधि विश्लेषक की वरिष्ठता सूची में सही स्थान और स्थिति में नहीं रखा गया है और पश्चात्‌वर्ती प्रोन्नतियों से इनकार किया गया है इसलिए उसने तीन अन्य रिट याचिकाएं अर्थात् 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619, 2007 की रिट याचिका सं. 2 और 2009 की रिट याचिका सं. 1654 फाइल की हैं जिनका पक्षकारों के काउंसेलों की सहमति से निपटान किया गया है । रिट याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – यह उल्लेख किया जा सकता है कि याची की शिकायत यह है कि याची और सुश्री लोतिका खजूरिया जिन्हें सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के रूप में अधिष्ठायी आधार पर तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा नियुक्त किया गया था, श्री आर. एल. दास और अन्य पांच व्यक्तियों से वरिष्ठ थे, जो याची के अनुसार तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 के जारी होने की तारीख को अधीनस्थ सेवा के सदस्य थे । यह प्रकथन इस तथ्य पर विचार किए बिना किया गया

है कि श्री आर. एल. दास और अन्य पांच व्यक्तियों की प्रोन्नति 1970 के भर्ती नियमों से विनियमित होती थी और 1997 के भर्ती नियम श्री आर. एल. दास और 30 नवम्बर, 1994 से तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किए गए अन्य व्यक्तियों को नियमित किए जाने के आदेश में बाधक नहीं है, ऐसा इसलिए भी है क्योंकि नियमितीकरण पूर्णतः 2000 की एस. डब्ल्यू. पी. याचिका सं. 250 में तारीख 3 नवम्बर, 2001 को दिए गए निर्णय के अनुपालन में किया गया था । यह भी उल्लेख किया जा सकता है कि 1970 के भर्ती नियम सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद की रिक्तियों को सीधे भरने के लिए उपबंध नहीं करते हैं । याची ने प्रथमतः डा. आर. एल. दास और अन्य तदर्थ प्रोन्नत व्यक्तियों को तारीख 30 नवम्बर, 1994 से प्रोन्नति को नियमित करने की मंजूरी देने को आक्षेपित किया है जो प्रत्यर्थी सं. 1 के तारीख 3 जून, 2003 के पत्र सं. पी. एस. सी./डी. पी. सी./ड्रग/94/22 और तारीख 1 जुलाई, 2006 के शासकीय आदेश सं. 786-एच. एम. ई./2006 द्वारा संसूचित किया गया तथा साथ ही सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर तारीख 30 नवम्बर, 1994 से श्री आर. एल. दास और पांच अन्य व्यक्तियों की प्रोन्नति को प्रश्नगत करते हुए इसे आधाररहित और गलत बताया है । 1997 के भर्ती नियमों में पहली बार सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर सीधी भर्ती का उपबंध करके सीधी भर्ती के लिए 20% पद आरक्षित किए गए हैं । सुश्री लोतिका खजूरिया और याची सीधी भर्ती के लिए प्रतियोगिता द्वारा तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किए गए थे । यह उल्लेख किया जा सकता है कि तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच. एम. ई./2002 द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया, याची, श्री अशोक गुप्ता, सतीश गुप्ता, सुश्री इरफाना अहमद और श्री एस. एल. कौल को उनके अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नत किया गया था, जिसके पश्चात् उन्होंने सीधी भर्ती का माध्यम चुना और उपरोक्त तारीख से सीधी भर्ती के कोटे में नियुक्त किए गए । प्रत्यर्थी श्री अशोक गुप्ता, श्री सतीश गुप्ता, सुश्री इरफाना और श्री एस. एल. भट्ट, विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग से मंजूरी लंबित रहने के कारण अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के रूप में कार्य करते रहे । इसलिए सुश्री लोतिका

खजूरिया और याची अपनी नियुक्ति अर्थात् तारीख 20 मार्च, 2003 से पूर्व अपनी वरिष्ठता का दावा नहीं कर सकते । यह जानने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी सं. 1 ने क्रमशः श्री अशोक गुप्ता, श्री सतीश गुप्ता, श्री एस. एल. कौल और सुश्री इरफाना अहमद को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करते हुए सीधी भर्ती के कोटे में अनाधिकार हस्तक्षेप किया या प्रोन्नति कोटे को अधिक्रमित किया, यह आवश्यक है कि उस तारीख को नियत किया जाए जिस तारीख को सहायक ओषधि नियंत्रक का पद उपलब्ध हुआ था । आधार यह है कि सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की नियुक्ति की तारीख को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के सभी आठ (8) पद प्रोन्नति द्वारा भर लिए गए थे तो दो प्रोन्नत व्यक्तियों के बारे में यह माना जाएगा कि दो पद अस्थायी व्यवस्था के आधार पर सीधी भर्ती द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की सीधी भर्ती द्वारा भरे हुए थे । जहां प्रोन्नति कोटे में कोई पद शेष रह जाता है वहां ऐसी दशा में निस्संदेह सीधी भर्ती के पश्चात् दो विस्थापित प्रोन्नत व्यक्ति ज्येष्ठता में अंकित हो जाएंगे । वास्तविक विवाद पर ध्यान केन्द्रित करते हुए यह उचित होगा कि तारीख 1 जनवरी, 2002 को जब 1997 के भर्ती नियम प्रवृत होने की उस तारीख की स्थिति पर जब तदर्थ/अंतःकालीन प्रोन्नति दी गई थी और तारीख 20 मार्च, 2003 को जब सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक पद पर नियुक्त किया गया था, विचार किया जाए । इन परिस्थितियों में, उस तारीख को जब 1997 के भर्ती नियम प्रवृत्त हुए थे, सहायक ओषधि नियंत्रक का एक पद रिक्त था और उस तारीख को जब सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के दो पद रिक्त पड़े थे, सुश्री लोतिका खजूरिया और याची को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त किया गया था और 1997 के भर्ती नियमों को ध्यान में रखते हुए केवल छह प्रोन्नत व्यक्ति ऐसे थे जो प्रोन्नति कोटा में थे । इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 1 ने न तो प्रोन्नति कोटे का अतिक्रमण किया और न ही सीधी भर्ती के लिए नियत कोटे को प्राइवेट प्रत्यर्थियों को दिया । ऐसी स्थिति में याची के इस दावे में कोई सार नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा निजी प्रत्यर्थियों को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करने का निदेश देने में सेवा नियमों का उल्लंघन किया गया था या लोतिका खजूरिया और याची की ज्येष्ठता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । अतः ऊपर चर्चा किए गए आधारों पर याची को निजी प्रत्यर्थियों से ज्येष्ठ होने के दावे में कोई बल नहीं है । यह

उल्लेखनीय है कि प्रोन्नत व्यक्तियों की तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर की गई सेवाएं भूतलक्षी प्रभाव से उस तारीख से नियमित की जा सकती हैं जब प्रोन्नति कोटे में स्पष्ट रिक्ति हो और ऐसा पात्रता, योग्यता और अन्य संबंधित तथ्यों के अध्यधीन किया जाएगा और कोई सीधी भर्ती व्यक्ति अपनी नियुक्ति की तारीख से ज्येष्ठता का दावा कर सकता है । सीधी भर्ती नियुक्ति, सीधी भर्ती कोटे में उद्‌भूत रिक्ति की तारीख से पूर्व नहीं की जा सकती क्योंकि सीधी भर्ती व्यक्ति, उस तारीख से जब वह सेवा में नहीं आया था, ज्येष्ठता का दावा नहीं कर सकता । वर्तमान मामले में, प्राइवेट प्रत्यर्थी अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच. एम. ई. द्वारा सभी उपलब्ध रिक्तियों पर 1 जनवरी, 2002 से नियुक्त किए गए थे । बाद में निजी प्रत्यर्थियों की प्रोन्नति विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग की सिफारिश के आधार पर प्रोन्नति कोटे के विरुद्ध, सीधी भर्ती के कोटे या प्रोन्नति कोटे में हस्तक्षेप किए बिना की गई थी । तारीख 25 फरवरी, 1997 को श्री ए. सी. महाजन की प्रोन्नति होने पर प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या घटकर छह रह गई थी जिनपर प्रोन्नत व्यक्ति 1997 के भर्ती नियमों के अधीन प्रोन्नति कोटे का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं । तारीख 31 अक्तूबर, 1997 को श्री जी. एल. अंगूराना की सेवानिवृत्ति के पश्चात् प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या घटकर पांच हो गई जिसके कारण एक प्रोन्नति पद तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था द्वारा नियमितीकरण के लिए कम हो गया था । इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी श्री अशोक गुप्ता को वैध रूप से उस पद पर तारीख 31 अक्तूबर, 1997 से नियमित किया गया । तारीख 29 नवम्बर, 1999 को श्री आर. एल. दास की प्रोन्नति होने पर प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या प्रोन्नति कोटे के छह पदों के विरुद्ध घटकर पांच रह गई । इस प्रकार प्रोन्नति कोटे में एक पद उपलब्ध हो गया, जिस पर तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर कार्य कर रहे व्यक्ति को प्रोन्नत किया जा सकता था और इसलिए तारीख 29 नवम्बर, 1999 से प्रत्यर्थी श्री सतीश गुप्ता को नियमित किए जाने से प्रोन्नति कोटे का अतिक्रमण नहीं होता । यही बात प्रत्यर्थी इरफाना अहमद के बारे में भी सही है जिसे तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर नियुक्त किया गया था तथा तारीख 30 जून, 2002 से उस पद के विरुद्ध नियमित किया गया था जो श्री मोहम्मद असलम खातिब की प्रोन्नति होने से उपलब्ध हुआ था । अतः प्रत्यर्थी सं. 1 ने प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिशें स्वीकार करने में प्रोन्नति कोटे का अतिलंघन या अतिक्रमण नहीं किया था । याची द्वारा सूरज प्रकाश गुप्ता वाले मामले में अधिकथित विधि

का बलपूर्वक अवलंब लिया गया है । दूसरे पक्ष द्वारा पेश की गई विधि याची द्वारा निर्दिष्ट मामले के प्रतिकूल है । उपरोक्त चर्चा से यह निष्कर्ष निकलता है कि मौलिक और सांवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण, जैसा कि याची ने तीन रिट याचिकाओं में अभिकथित किया है, किसी भी प्रकार से नहीं हुआ है । सुश्री लोतिका खजूरिया एकमात्र अभ्यर्थी थीं, जिनकी प्रत्यर्थी सं. 2 ने सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्ति के लिए संस्तुति की थी और इस प्रकार याची से जो प्रतीक्षा सूची में थी, वरिष्ठ थीं और केवल इसलिए नियुक्त किया गया था क्योंकि सुश्री लोतिका खजूरिया प्रतिनियुक्ति पर थीं, सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद की वरिष्ठता सूची में उच्च स्थान पर रखे जाने की दावेदार थीं, किन्तु चूंकि सुश्री लोतिका खजूरिया ने स्वयं को ज्येष्ठता सूची में रखे जाने को प्रश्नगत नहीं किया था और न्यायालय के सम्मुख अपना पक्ष नहीं रखा था । अतः यह उचित नहीं होगा कि मामले के इस पहलू पर विचार न किया जाए । (पैरा 27, 28, 29, 34, 35 और 37)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2008]	2008 ए. आई. आर. एस. सी. डब्ल्यू. 7971 : **मुकुल साकिया और अन्य** बनाम **असम राज्य और अन्य ;**	36
[2000]	(2000) 7 एस. सी. सी. 561 : **सूरज प्रकाश गुप्ता और अन्य** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य सरकार और अन्य** ।	30, 35

आरम्भिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2009 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1654, 2007 की सी./डब्ल्यू. एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2 और 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619.

जम्मू-कश्मीर संविधान, 1957 के अनुच्छेद 103 के अधीन रिट याचिकाएं ।

याची की ओर से श्री आर. ए. जान

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री एम. वाई. भट्ट

न्यायमूर्ति हसनैन मसूदी – याची तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किया गया था । ऐसा प्रतीत होता है कि उसने पिछले सात वर्षों में सरकारी ड्यूटी के निर्वहन के स्थान पर विधि द्वारा स्थापित न्यायालयों में अधिक समय व्यतीत किया है । अपनी नियुक्ति के उपरान्त याची की लगभग छह रिट याचिकाएं अर्थात् 2004 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 343, 2004 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 599, 2005 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1085, 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619, 2007 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2 और 2009 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1654 रजिस्ट्रीकृत की गई हैं । याची द्वारा प्रारम्भ की गई मुकदमेबाजी में प्रत्यर्थियों अर्थात् प्रोन्नत सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक को पक्षकार बनाया गया है । सुश्री इरफाना अहमद, सहायक ओषधि नियंत्रक ने दो रिट याचिकाएं अर्थात् 2005 की एस. डब्ल्यू. पी सं. 821 और 2005 की सं. 549 फाइल की है और याची के सहकर्मी श्री मुश्ताक अहमद खतीब ने 2004 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 382 फाइल की है ।

2. 2004 की रिट याचिका एस. डब्ल्यू. पी. सं. 343, तारीख 6 जुलाई, 2004 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी और यह अभिनिर्धारित किया गया था कि याची को अस्थायी व्यवस्था के रूप में उप-नियंत्रक, ओषधि कश्मीर के पद पर बने रहने का हकदार नहीं माना गया है । 2004 की रिट याचिका सं. 599 और 2005 की रिट याचिका सं. 1085 को तारीख 2 जून, 2006 के आदेश द्वारा एक अन्य प्रोन्नत सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक द्वारा फाइल की गई दो याचिकाओं के साथ विनिश्चित किया गया था । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि तारीख 20 मार्च, 2003 के आदेश द्वारा सहायक नियंत्रक ओषधि के पद पर की गई याची की नियुक्ति वैध थी, जबकि लोक सेवा आयोग के तारीख 31 अक्तूबर, 2002 को भेजे गए पत्र सं. पी. एस. सी./ डी. आर./31 असिस्टेंट ड्रग/2 वाई में याची को प्रतीक्षा सूची में रखा दिखाया गया था । प्रत्यर्थियों को यह निदेश दिया गया था कि वे अन्य सहायक नियंत्रक ओषधि के मामले में विभागीय प्रोन्नति समिति से अनापत्ति के अध्यधीन तदर्थ आधार पर प्रोन्नति के लिए विचार करें और वरिष्ठता सूची तैयार करने की प्रक्रिया को पूरा करके सहायक नियंत्रक ओषधि तथा सीधी भर्ती व्यक्तियों को, नियमों के अनुसार उन्हें उनके स्थान पर रखें ।

3. सीधी भर्ती व्यक्ति (वर्तमान याची) और प्रोन्नत व्यक्तियों के बीच यह विवाद वरिष्ठता सूची में उन्हें रखने के स्थान और भविष्य में उन्हें प्रोन्नति का हकदार बनाने के बारे में है ।

4. याची इस बात से व्यथित था कि उसे सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक की वरिष्ठता सूची में सही स्थान और स्थिति में नहीं रखा गया है और पश्चात्वर्ती प्रोन्नतियों से इनकार किया गया है इसलिए उसने तीन अन्य रिट याचिकाएं अर्थात् 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619, 2007 की रिट याचिका सं. 2 और 2009 की रिट याचिका सं. 1654 फाइल की हैं जिनका पक्षकारों के काउंसेलों की सहमति से निपटान किया जा रहा है ।

5. याचिकाएं सुनवाई के लिए स्वीकार की गईं । प्रत्यर्थियों के विद्वान् काउंसेल ने याचिकाएं ग्रहण करने के पश्चात् जारी की जाने वाली सूचना को त्यक्त किया और उनके अनुरोध पर तीनों याचिकाओं में दिए गए जबाव को ही प्रत्युत्तर माना गया । याची ने कोई प्रत्युत्तर फाइल करना पसन्द नहीं किया ।

6. निपटान हेतु लंबित रिट याचिकाओं में दर्शाई गई शिकायतों पर विचार करने से पूर्व यह उचित होगा कि उल्लिखित तथ्यों का संक्षिप्त उल्लेख किया जाए, अर्थात् – याची और प्रत्यर्थी सर्वश्री अशोक गुप्ता, सतीश गुप्ता और सुश्री इरफाना अहमद ने स्वास्थ्य और आयुर्विज्ञान शिक्षा विभाग में ओषधि निरीक्षक के पदों पर क्रमशः तारीख 4 अगस्त, 1989, 29 जनवरी, 1977, 8 दिसम्बर, 1983 और 4 अगस्त, 1989 को पदभार ग्रहण किया था और तदुपरान्त उन्हें वरिष्ठ ओषधि नियंत्रक/इंस्ट्रूमेंट टेक्नीशियन के ग्रेड में क्रमशः तारीख 10 नवम्बर, 1994, 29 नवम्बर, 1989 और 10 नवम्बर, 1994 को प्रोन्नत किया गया था ।

7. राज्य लोक सेवा आयोग (प्रत्यर्थी सं. 2) ने सक्षम प्राधिकारी के अनुरोध पर तारीख 24 अक्तूबर, 2000 को 2000 की पी. एस. सी. अधिसूचना सं. 22 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के एक पद के लिए विज्ञापन प्रकाशित किया । याची और उसकी सहयोगी सुश्री लोतिका खजूरिया, वरिष्ठ ओषधि निरीक्षक ने विज्ञापन सूचना के जवाब में आवेदन दिया । यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि जम्मू-कश्मीर ओषधि और खाद्य नियंत्रण (राजपत्रित सेवा) भर्ती नियम, 1997 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'भर्ती

नियम, 1997' कहा गया है) का नियम 8 कार्यरत अभ्यर्थियों को भी सीधी भर्ती द्वारा अपनी बारी पर सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति के अवसर के लिए हकदार बनाता है । इसी दौरान प्रशासनिक अत्यावश्यकता के कारण, उपरोक्त रिट याचिका में वर्णित याची और प्रत्यर्थियों तथा उनके सहकर्मियों लोकिता खजूरिया, शुबन लाल कौल को तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच.एम.ई./2002 द्वारा उनके अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर प्रोन्नत कर दिया गया, जिस पर विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग की अनापत्ति प्राप्त होनी है ।

8. प्रत्यर्थी सं. 2 ने आवश्यक परीक्षा लेने के उपरान्त, अपने तारीख 21 अक्तूबर, 2002 के पत्र सं. पी. एस. सी./डी. आर./3/सहायक ओषधि/2002 द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त करने की सिफारिश की । याची को प्रतीक्षा सूची में रखा गया था । प्रत्यर्थी सं. 1 ने प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिश को स्वीकार किया और तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त किया और चूंकि नियुक्त की गई कर्मचारी पहले से ही राज्य एड्स सोसाइटी, संघ राज्यक्षेत्र, चंडीगढ़ में प्रतिनियुक्ति पर थी इसलिए याची को जिसे प्रतीक्षा सूची में रखा गया था, सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक की रिक्ति पर नियुक्त कर दिया गया जो उपरोक्त प्रतिनियुक्ति के कारण उपलब्ध हो गया था । सुश्री लोतिका खजूरिया को प्रतिनियुक्ति से लौटने पर पुनः सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद का पदभार सौंप दिया गया था जोकि श्री एस. एल. भट्ट, सहायक ओषधि की अधिवर्षिता के कारण पद रिक्त हो गया था ।

9. तारीख 2 जून, 2006 के निर्णय के कारण, जिसके द्वारा प्रत्यर्थियों से यह कहा गया था कि वे प्रत्यर्थी सर्वश्री अशोक कुमार गुप्ता, शुबन लाल कौल, सतीश कुमार गुप्ता और श्रीमती इरफाना अहमद का मामला विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग को भेजने के लिए कार्रवाई करें और जहां तक व्यवहार्य हो, यह प्रक्रिया एक मास में पूरी कर ली जाए और प्रत्यर्थी सं. 1 उपरोक्त प्रत्यर्थियों के जिन्हें पहले ही अपने वेतन और

ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर तारीख 1 जनवरी, 2002 के आदेश सं. 01-एच. एम. ई./2002 द्वारा नियुक्त किया जा चुका है, मामले को अनापत्ति प्राप्त करने हेतु प्रत्यर्थी सं. 2 को निर्दिष्ट करें ।

10. प्रत्यर्थी सं. 2 ने तारीख 28 दिसम्बर, 2006 के पत्र सं. पी. एस. सी./डी. पी. सा./ड्रग/94/23 द्वारा उपरोक्त प्रत्यर्थियों और श्रीमती पूर्णिमा काबू को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नत करने के लिए इजाजत प्रदान कर दी । तारीख 25 मार्च, 2008 के शासकीय आदेश सं. 265-एच. एम. ई./2008 द्वारा सूचना प्राप्त होने पर प्रत्यर्थी सं. 1 ने श्री अशोक कुमार गुप्ता और चार अन्य व्यक्तियों की नियुक्ति को नीचे सारणी में दर्शाई गई तारीखों से नियमित कर दिया :–

क्रम सं.	अधिकारी का नाम	सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति की तारीख
1.	श्री अशोक कुमार	तारीख 26-2-1997 से मीमांसात्मक और तारीख 1-1-2002 से नियमित ।
2.	श्री सतीश गुप्ता	तारीख 29-11-1997 से मीमांसात्मक और तारीख 1-1-2002 से नियमित ।
3.	सुश्री इरफाना अहमद	तारीख 30-6-2002 से ।
4.	सुश्री रिफात आरिफा	तारीख 9-12-2003 से ।
5.	श्रीमती पूर्णिमा काबू	तारीख 1-7-2004 से मीमांसात्मक और तारीख 30-3-2005 से नियमित ।

11. इस स्तर पर यह उचित होगा कि याची द्वारा फाइल याचिका अर्थात् 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619, 2007 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2 और 2009 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1654 में किए गए पक्षकथन पर विचार किया जाए ।

2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619

12. याची ने यह पक्षकथन किया है कि प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 प्राइवेट प्रत्यर्थियों अर्थात् सर्वश्री अशोक गुप्ता, सतीश गुप्ता और सुश्री इरफाना

अहमद को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त करने के लिए हितबद्ध थे और जम्मू-कश्मीर ओषधि और प्रसाधन अधिनियम-भर्ती नियम, 1997 की उपेक्षा करके और सूरज प्रकाश गुप्ता वाले मामले में इस विषय पर घोषित विधि की उपेक्षा करके प्रोन्नत कराने में हितबद्ध थे । याची का पक्षकथन यह है कि सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के काडर में प्रोन्नति का कोटा निःशेष हो चुका था और उस काडर में ऐसा कोई स्थान रिक्त नहीं था जिस पर प्रस्तावित नियुक्ति को प्रोन्नति के आधार पर भरा जा सके । याची को यह आशंका थी कि प्राइवेट प्रत्यर्थियों को प्रोन्नति द्वारा प्रस्तावित नियुक्ति करके सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक पद की वरिष्ठता सूची में याची की स्थिति को परिवर्तित किया गया है ।

13. याची ने रिट याचिका में किए गए प्रकथनों के आधार पर इस घोषणा के लिए परमादेश प्रकृति की रिट जारी करने की ईप्सा की है कि सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद के चयन के लिए प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 द्वारा अपनाई गई प्रक्रिया में 1997 के भर्ती नियमों का उल्लंघन किया गया है । याची ने उत्प्रेषण रिट द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति द्वारा नियुक्त करने की प्रक्रिया को अभिखंडित करने और परमादेश की प्रकृति की रिट जारी करके प्रत्यर्थी सं. 3 को, प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 को प्रोन्नत किए जाने से रोकने, प्रत्यर्थी सं. 3 को भर्ती नियम, 1997 के अनुसार प्रोन्नति द्वारा नियुक्त करने और सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद की वरिष्ठता सूची में याची की स्थिति को बदलने से रोकने का आदेश करने का अनुरोध किया है ।

2007 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 02

14. 2007 की रिट याचिका एस. डब्ल्यू. पी. सं. 02 में का याची प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा भेजी गई तारीख 28 दिसम्बर, 2006 के संसूचना पत्र सं. पी. एस. सी./डी. पी. सी./ड्रग/94/23 से व्यथित हुआ है, जो प्रत्यर्थी सं. 1 को भेजी गई थी और जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 ने सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 को भूतलक्षी प्रभाव से पद पर नियमित करने की अनुमति दी गई है ।

15. याची का यह पक्षकथन है कि सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक का पद तारीख 31 जनवरी, 2005, 30 अप्रैल, 2005

और 31 अक्तूबर, 2005 को उपलब्ध हुआ था, इसलिए प्रत्यर्थी सं. 1 ने प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 की क्रमशः तारीख 2 जून, 1997, 29 नवम्बर, 1999 और 30 जून, 2002 से नियमित रूप से प्रोन्नति द्वारा नियुक्त करके भारी भूल की है । याची के अनुसार प्रत्यर्थियों द्वारा की गई कार्रवाई 1997 के भर्ती नियमों के विरुद्ध है और यह सूरज प्रकाश गुप्ता वाले मामले में अधिकथित विधि के भी विरुद्ध है । याची ने यह अभिकथन किया है कि वह तारीख 20 मार्च, 2003 को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त होने पर जम्मू-कश्मीर ओषधि और खाद्य नियंत्रण (राजपत्रित) सेवा का उसी तारीख से सदस्य बन गया था और प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 तारीख 20 मार्च, 2003 से और याचिका फाइल किए जाने की तारीख से भी अधीनस्थ सेवा के सदस्य हैं और प्रत्यर्थी सं. 2 ने उनकी प्रोन्नति को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करके प्रत्यर्थियों को याची से ज्येष्ठ बना दिया था । याची के अनुसार प्रस्तावित कार्रवाई भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 से 16 के उल्लंघन में है तथा याची को सेवा के मामले में समान अवसर के अधिकार से इनकार करने के बराबर है । यह कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 ने प्रत्यर्थी सं. 4 से 6 की प्रोन्नति को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करके सूरज प्रकाश गुप्ता वाले मामले में अधिकथित विधि के अधीन अनुज्ञेय प्रोन्नति कोटा से अधिक फायदा दे दिया है । याची ने यह अनुरोध किया है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 को भेजी गई तारीख 20 दिसम्बर, 2006 की संसूचना को आरम्भतः शून्य और 1997 के भर्ती नियमों के विरुद्ध घोषित किया जाए । याची ने प्रत्यर्थियों को यह आदेश जारी करने की प्रार्थना की है कि वे उपरोक्त सूचना या 1997 के भर्ती नियमों के अधीन याची की वरिष्ठता पर कोई प्रतिकूल प्रभाव डालने की कार्रवाई न करें ।

2009 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1654

16. वह तात्कालिक हेतुक जिसके कारण याची को यह रिट याचिका फाइल करनी पड़ी थी, तारीख 28 सितम्बर, 2008 का शासकीय आदेश सं. 416-एस. एम. ई./2008 है जिसके द्वारा प्रोन्नत सहायक ओषधि नियंत्रक श्री गुप्ता को ओषधि नियंत्रक खाद्य संगठन, जम्मू-कश्मीर सरकार का भारसाधक नियुक्त किया गया है । याची के अनुसार उपरोक्त शासकीय आदेश 2007 की एस. डब्ल्यू. पी. याचिका सं. 02 में तारीख 24 मार्च, 2008 को किए गए न्यायालय के आदेश के और 1997 के भर्ती नियमों के पूर्णतया उल्लंघन में है । याची ने दो अन्य रिट याचिकाओं में भी

इन्हीं प्रकथनों को दोहराते हुए इस बात पर जोर दिया है कि याची तारीख 20 मार्च, 2003 को जम्मू-कश्मीर सरकार की ओषधि और खाद्य नियंत्रण (राजपत्रित सेवा) का सदस्य बन गया था जब रिट याचिका के प्रत्यर्थी सं. 5 श्री गुप्ता विभाग की अधीनस्थ सेवा के सदस्य थे । याची ने यह दलील दी है कि प्रत्यर्थी सं. 5 का भूतलक्षी प्रभाव से तारीख 20 नवम्बर, 1999 से नियमित आधार पर प्रोन्नत किया जाना भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 में गारंटीकृत याची के मूल अधिकारों का उल्लंघन है और यह 1997 के भर्ती नियमों के भी विरुद्ध है । याची के अनुसार भूतलक्षी प्रभाव से प्रोन्नति अविद्यमान पद के विरुद्ध की गई है और प्रत्यर्थियों ने वस्तुतः अपनी अविधिक कार्रवाई द्वारा प्रत्यर्थी सं. 5 को याची से ज्येष्ठ बना दिया है । संक्षिप्ततः याची ने स्वयं को प्रत्यर्थी सं. 5 से वरिष्ठ होने का दावा किया है और वरिष्ठ होने के नाते ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्ति के अधिकार का दावा किया है । याची प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 द्वारा उसके अभ्यावेदन में दिए गए जवाब से व्यथित हुआ है और इसलिए वह रिट याचिका फाइल करने के लिए मजबूर हुआ है । याची ने तारीख 30 अगस्त, 2009 के शासकीय आदेश सं. 416-एच. एम. ई./2009 को आरम्भतः शून्य घोषित करने तथा 1997 के भर्ती नियमों के विरुद्ध घोषित करने के लिए अनुरोध किया है । याची ने उपरोक्त शासकीय आदेश को अभिखंडित करने के लिए उत्प्रेषण रिट जारी करने और प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को प्रश्नगत शासकीय आदेश को लागू न करने के लिए परमादेश रिट जारी करने की प्रार्थना की है । याची ने प्रत्यर्थियों को नियंत्रक, ओषधि और खाद्य नियंत्रण संगठन के पद पर भर्ती नियम, 1997 के अनुसरण में याची की नियुक्ति का आदेश करने और इस नियुक्ति के विद्यमान रहने तक याची को अधिष्ठायी या स्थानापन्न आधार पर नियुक्त करने के लिए समादेश जारी करने की प्रार्थना की है ।

17. वे तथ्य और परिस्थितियां, जिन्होंने याची को लगातार तीन रिट याचिकाएं फाइल करने के लिए मजबूर किया, भिन्न हो सकती हैं किन्तु इनमें शिकायतें एक जैसी ही हैं और प्रत्यर्थियों द्वारा तीनों याचिकाओं में लिए गए आधार एक जैसे ही हैं । याची का आरम्भ से ही यह पक्षकथन है कि याची सीधी भर्ती द्वारा तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किया गया था जबकि अन्य प्रत्यर्थी श्री अशोक गुप्ता, सतीश गुप्ता और सुश्री इरफाना अहमद जम्मू-कश्मीर ओषधि और खाद्य नियंत्रण संगठन

(राजपत्रित) सेवा में नहीं आए थे इसलिए याची निजी प्रत्यर्थियों से वरिष्ठ है और अगले उच्च पद पर प्रोन्नति के लिए विचार किए जाने का अधिकार रखता है ।

18. दूसरी ओर, प्रत्यर्थियों द्वारा यह आधार लिया गया है कि याची तथा निजी प्रत्यर्थी तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच. एम. ई./2002 द्वारा अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर प्रोन्नत किए गए थे और यह प्रोन्नति भर्ती नियम, 1997 के अनुसार विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग द्वारा की गई थी, दो प्रोन्नत व्यक्ति, क्रमशः नजीर अहमद वानी-याची और लोतिका खजूरिया ने प्रोन्नति के माध्यम को छोड़कर सीधी भर्ती को अपनाया, याची और लोतिका खजूरिया दोनों को तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किया गया था जबकि निजी प्रत्यर्थी भी सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर अपने वेतन और ग्रेड में लगातार सेवा कर रहे हैं, उच्च न्यायालय द्वारा 2004 की एस. डब्ल्यू. पी. याचिका सं. 599 और 2005 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1085 में तारीख 2 जून, 2006 को दिए गए निर्णय के अनुपालन में निजी प्रत्यर्थियों को नियमित किए जाने का मामला विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और प्रत्यर्थी सं. 2 ने निजी प्रत्यर्थियों की भूतलक्षी प्रभाव से सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियमित नियुक्ति की सिफारिश की थी जिसके पश्चात् निजी प्रत्यर्थियों के पक्ष में औपचारिक आदेश जारी किए गए थे । प्रत्यर्थियों के अनुसार निजी प्रत्यर्थियों की प्रोन्नति को नियमित करने के लिए शासकीय आदेश उन सभी पक्षों के संयुक्त अनुरोध पर जारी किए गए थे जिन्होंने न्यायालय के समक्ष यह कहा था कि यदि गतिरोध जारी रखना अनुज्ञात किया जाता है तो उन्हें नुकसान होगा । प्रत्यर्थियों ने इस बात पर जोर दिया कि निजी प्रत्यर्थियों का इस तारीख से नियमितीकरण और प्रोन्नति कोटे में पद सूरज प्रकाश वाले मामले में अधिकथित विधि के अनुसार उपलब्ध हो गए थे । निजी प्रत्यर्थियों ने इस बात पर बल दिया कि वे याची से वरिष्ठ हैं और वे वरिष्ठता के क्रम में विभाग में अगले उच्च पद पर प्रोन्नत किए जाने के लिए विचार में लिए जाने के हकदार हैं । इस बात पर जोर दिया गया है कि याची को जिसका कथन प्रत्यर्थियों पर निर्भर है, रिट याचिकाएं फाइल करने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि उसने यह स्वयं स्वीकार किया है

कि वह सुश्री लोतिका खजूरिया से कनिष्ठ है, जिसने निजी प्रत्यर्थियों की वरिष्ठता को प्रश्नगत करने की आवश्यकता नहीं समझी । श्री गुप्ता के ओषधि और खाद्य नियंत्रक संगठन के भारसाधक के पद पर नियुक्ति के संबंध में, प्रत्यर्थियों ने यह दलील दी है कि श्री गुप्ता को तारीख 30 सितम्बर, 2009 के आदेश सं. 416-एच. एम. ई./2009 द्वारा अपने वेतन और ग्रेड पर रहते हुए अगले आदेशों तक केवल नियंत्रक, ओषधि और खाद्य नियंत्रण संगठन, जम्मू-कश्मीर के पद का कार्यभार दिया गया था और 2007 की एस. डब्ल्यू. पी. याचिका सं. 20 में तारीख 24 मार्च, 2008 को दिए गए आदेश को दृष्टि में रखते हुए व्यवस्था करना प्रत्यर्थियों का अधिकार था । प्रत्यर्थियों ने श्री गुप्ता को अधिष्ठायी आधार पर प्रोन्नत करने या किसी भी रीति से याची के अधिकार का हनन करने से इनकार किया है । यह उल्लेखनीय है कि सुश्री लोतिका खजूरिया को जो कि याची से वरिष्ठ है, उपरोक्त वर्णित शासकीय आदेश को प्रश्नगत करने का याची के मुकाबले बेहतर अधिकार उपलब्ध है किन्तु उन्होंने आदेश को चुनौती नहीं दी है और यदि याची को अपने मामले में सफलता मिलती है तो सुश्री लोतिका खजूरिया का नाम न कि याची का नाम नियंत्रक ओषधि, जम्मू-कश्मीर ओषधि और खाद्य नियंत्रण संगठन के पद पर नियुक्ति के लिए विचार में लिया जाएगा ।

19. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया जो कि पक्षों के बीच वर्षों से चली आ रही मुकदमेबाजी के कारण अत्यधिक बोझिल हो गया है ।

20. प्रस्तुत की गई याचिकाओं का परिणाम निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर पर निर्भर करता है :–

> "(i) क्या उन तारीखों पर सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद प्रोन्नति कोटा में उपलब्ध थे जिन तारीखों से प्राइवेट प्रत्यर्थियों को तारीख 25 मार्च, 2008 के शासकीय आदेश सं. एच. एम. ई./2008 द्वारा नियमित किया गया था ?
>
> (ii) क्या प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने निजी प्रत्यर्थियों को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति कोटा से आधिक्य में नियमित करने का निदेश दिया था ।"

21. अब हम उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर देने के लिए अभिवचनों और अभिलेख की जांच करेंगे ।

22. जम्मू-कश्मीर ओषधि और खाद्य नियंत्रण (राजपत्रित) सेवा भर्ती नियम, 1997 (संक्षेप में '1997' के भर्ती नियम) 1997 में विरचित किए गए थे और तारीख 3 फरवरी, 1997 के एस. आर. ओ. 56, 1997 द्वारा अधिसूचित किए गए थे । 1997 के भर्ती नियमों का नियम 5 इस प्रकार है :–

1997 के भर्ती नियमों का नियम 5

"5. **अर्हताएं और भर्ती की रीति** –

(i) कोई व्यक्ति सेवा में किसी वर्ग, श्रेणी या ग्रेड में किसी पद पर नियुक्ति या प्रोन्नति के लिए तब तक पात्र नहीं होगा या होगी जब तक कि उसके पास अनुसूची-II में वर्णित अर्हताएं न हों और वह तत्समय प्रवृत्त नियमों और आदेशों में यथाउपबंधित भर्ती को अन्य अपेक्षाएं पूरी न करता हो ।

(ii) सेवा में नियुक्ति –

(क) सीधी भर्ती द्वारा (जिसके अंतर्गत स्थानांतरण द्वारा नियुक्ति सम्मिलित है,)

(ख) प्रोन्नति द्वारा; और

(ग) अनुसूची में प्रत्येक पद के विरुद्ध अनुपात और रीति में भागतः सीधी भर्ती द्वारा और भागतः प्रोन्नति द्वारा :

परन्तु जहां कोई पद नियमों के अनुसार उपयुक्त अर्हताएं रखने वाले व्यक्ति के उपलब्ध न होने के कारण प्रोन्नति द्वारा नहीं भरा जा सकता है वहां उस पद को सीधी भर्ती और साथ-साथ आयोग की पूर्व मंजूरी से भरा जाएगा ।"

23. सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के मामले में अनुसूची-II भर्ती की निम्नलिखित रीति को विहित करती है :–

श्रेणी	वर्ग	पदनाम	ग्रेड	सीधी भर्ती के लिए न्यूनतम अर्हताएं	भर्ती की रीति
III	(क)	सहायक ओषधि	2125-3600	विधि द्वारा भारत में स्थापित	(i) 20% सीधी भर्ती द्वारा ।

		नियंत्रक/ सहायक ओषधि विश्लेषक		विश्वविद्यालय से फार्मेसी या फार्मेसी रसायन, क्लीनिकल फार्माक्लोजी या माइक्रोबायोलोजी में विशेषज्ञता के साथ स्नातकोत्तर	(ii) ओषधि और खाद्य (अधीनस्थ) सेवा के वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी और वरिष्ठ ओषधि निरीक्षक, इंस्ट्रूमेंट टेक्नीशियन के नियमों में निर्धारित अर्हताएं पूरी करते हैं, प्रोन्नति द्वारा निम्नलिखित अनुपात में, 80% – (i) वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी 20% (ii) वरिष्ठ ओषधि निरीक्षक/इंस्ट्रूमेंट टेक्नीशियन 60%

24. 1997 के भर्ती नियमों के बनाए जाने से पूर्व, ओषधि और खाद्य नियंत्रण संगठन, स्वास्थ्य और परिवार नियोजन विभाग में भर्ती और प्रोन्नति, तारीख 29 अप्रैल, 1971 की अधिसूचना एस. आर. ओ. सं. 200 में अधिसूचित जम्मू-कश्मीर स्वास्थ्य (राजपत्रित सेवा) भर्ती नियम, 1970 द्वारा की जाती थी । 1970 के भर्ती नियम सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर सीधी भर्ती के लिए उपबंध नहीं करते; यहां तारीख 5 अप्रैल, 1985 की अधिसूचना सं. एस. आर. ओ. 147 द्वारा प्रतिस्थापित अनुसूची (भाग-I) प्रविष्टि-V(क) का उल्लेख किए जाने की आवश्यकता है :–

2	(क)	300-750	मेडीसन में डिग्री/जैव रसायन,	वरिष्ठ

[v	सहायक ओषधि नियंत्रक/ सहायक ओषधि विश्लेषक		फार्मेसी, वैश्लेषिक रसायन, फार्मास्यूटिकल रसायन में मास्टर डिग्री के साथ ओषधि और/या मान्यताप्राप्त रसायन विश्लेषण प्रयोगशाला में एक वर्ष का अनुभव या फार्मेसी में स्नातक के साथ सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त प्रयोगशाला में ओषधि और/या रसायन के विश्लेषण का तीन वर्ष का अनुभव	ओषधि निरीक्षक में से प्रोन्नति द्वारा]

25. प्रत्यर्थी सं. 1 को 1991 में तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किया गया था । श्री पी. एन. कौल और श्री ए. सी. महाजन, वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी/वरिष्ठ ओषधि निरीक्षक/इंस्ट्रूमेंट टेक्नीशियन के काडर में भर्ती होकर सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त हुए । श्री पी. एन. कौल और श्री ए. सी. महाजन की तदर्थ नियुक्ति तारीख 29 नवम्बर, 1991 के शासकीय आदेश सं. 892-एच. एम. ई./1991 द्वारा तदर्थ आधार पर छह अन्य वरिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारियों/वरिष्ठ ओषधि निरीक्षकों/इंस्ट्रूमेंट टेक्नीशियनों के रूप में नियुक्ति की गई थी । यह उल्लेखनीय है कि सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के काडर में मंजूर पद आठ (8) हैं और सभी आठ (8) पद 1991 में तदर्थ आधार पर प्रोन्नति द्वारा भरे गए थे । उसके पश्चात् प्रत्यर्थी सं. 1 ने सभी आठ (8) तदर्थ सहायक ओषधि नियंत्रकों/सहायक ओषधि विश्लेषकों के मामलों को प्रत्यर्थी सं. 2 को अनुमोदन के लिए निर्दिष्ट किया था जिससे कि उन्हें नियमित करने के आदेश किए जा सकें । प्रत्यर्थी सं. 2 ने मामले पर विचार करने के पश्चात् श्री पी. एन. कौल और श्री ए. सी. महाजन को सहायक ओषधि नियंत्रक/ सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नत किए जाने की मंजूरी दे दी । तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किए गए अन्य छह व्यक्ति अर्थात क्रमशः श्री आर. एल. दास, श्री जी. एल. अंगूराना, श्री मोहम्मद असलम, श्री एम. के. बख्शी, श्री मुश्ताक अहमद खातीब और श्री शिबन लाल कौल से संबंधित

मामलों को प्रोन्नति के लिए मंजूरी नहीं दी गई थी । तथापि, श्री आर. एल. दास और पांच अन्य तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किए गए व्यक्ति, तदर्थ आधार पर सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर सेवा में बने रहे थे । श्री जी. एल. अंगूराना, जो कि 31 अक्तूबर, 1997 को सेवानिवृत्त हो गए थे, को छोड़कर तदर्थ प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों ने इस न्यायालय के समक्ष यह आग्रह करते हुए रिट याचिका फाइल की थी कि उन्हें प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति के लिए मंजूरी दे दी गई थी और प्रत्यर्थी सं. 1 ने मंजूरी प्राप्त होने के बाद भी नियमित करने के आदेश जारी नहीं किए । 2000 की रिट याचिका एस. डब्ल्यू. पी. सं. 256 के रूप में रजिस्ट्रीकृत रिट याचिका तारीख 3 नवम्बर, 2001 को मंजूर की गई थी और याचियों को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर तारीख 30 नवम्बर, 1994 से प्रोन्नत किए जाने का हकदार माना गया था । तारीख 3 नवम्बर, 2001 के निर्णय के आधार पर श्री आर. एल. दास और अन्य तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों से संबद्ध मामला पुनः प्रत्यर्थी सं. 2 के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और तारीख 26 मई, 2003 को प्रत्यर्थी सं. 2 ने विभागीय प्रोन्नति समिति की सभा बुलाई और समिति ने सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर कार्यरत सभी अधिकारियों को तारीख 30 नवम्बर, 1994 से प्रोन्नत किए जाने की मंजूरी प्रदान कर दी । प्रत्यर्थी सं. 2 ने अपने विनिश्चय की सूचना प्रत्यर्थी सं. 1 को तारीख 3 जून, 2003 के पत्र सं. पी. एस. सी./ डी. पी. सी./ड्रग/94/22 द्वारा दी थी । तारीख 3 नवम्बर, 2001 के निर्णय के अनुपालन में प्रत्यर्थी सं. 1 ने तारीख 1 जुलाई, 2006 के शासकीय आदेश सं. 786-एच. एम. ई./2006, जिसे आज तक आक्षेपित नहीं किया गया है, द्वारा श्री आर. एल. दास और पांच अन्य व्यक्तियों को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर, तारीख 30 नवम्बर, 1994 से प्रोन्नत किए जाने के लिए अनुमोदन प्राप्त किया ।

26. याची का पक्षकथन यह है कि श्री आर. एल. दास और पांच अन्य व्यक्ति जो यद्यपि सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक का पद उस समय तक तदर्थ आधार पर धारित किए हुए थे जब तक कि उनके नामों का प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नत किए जाने के लिए अनुमोदन किया जाना था, अधीनस्थ सेवा के सदस्य बने हुए थे और 1997 के भर्ती नियमों

को ध्यान में रखते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा उनकी प्रोन्नति को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित नहीं किया जा सकता था, किसी भी फायदे से वंचित हैं और उन्होंने भूलवश यह तथ्य प्रस्तुत किया है कि तारीख 1 जुलाई, 2006 का आदेश सं. 786-एच. एम. ई./2006 इस न्यायालय के तारीख 3 नवम्बर, 2001 के आदेश के अनुपालन में जारी किया गया था ।

27. यह उल्लेख किया जा सकता है कि याची की शिकायत यह है कि याची और सुश्री लोतिका खजूरिया जिन्हें सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के रूप में अधिष्ठायी आधार पर तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा नियुक्त किया गया था, श्री आर. एल. दास और अन्य पांच व्यक्तियों से वरिष्ठ थे, जो याची के अनुसार तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 के जारी होने की तारीख को अधीनस्थ सेवा के सदस्य थे । यह प्रकथन इस तथ्य पर विचार किए बिना किया गया है कि श्री आर. एल. दास और अन्य पांच व्यक्तियों की प्रोन्नति 1970 के भर्ती नियमों से विनियमित होती थी और 1997 के भर्ती नियम श्री आर. एल. दास और 30 नवम्बर, 1994 से तदर्थ आधार पर प्रोन्नत किए गए अन्य व्यक्तियों को नियमित किए जाने के आदेश में बाधक नहीं है, ऐसा इसलिए भी है कि क्योंकि नियमितीकरण पूर्णतः 2000 की एस. डब्ल्यू. पी. याचिका सं. 250 में तारीख 3 नवम्बर, 2001 को दिए गए निर्णय के अनुपालन में किया गया था । यह भी उल्लेख किया जा सकता है कि 1970 के भर्ती नियम सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद की रिक्तियों को सीधे भरने के लिए उपबंध नहीं करते हैं । याची ने प्रथमतः डा. आर. एल. दास और अन्य तदर्थ प्रोन्नत व्यक्तियों को तारीख 30 नवम्बर, 1994 से प्रोन्नति को नियमित करने की मंजूरी देने को आक्षेपित किया है जो प्रत्यर्थी सं. 1 के तारीख 3 जून, 2003 के पत्र सं. पी. एस. सी./डी. पी. सी./ड्रग/94/22 और तारीख 1 जुलाई, 2006 के शासकीय आदेश सं. 786-एच. एम. ई./2006 द्वारा संसूचित किया गया तथा साथ ही सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर तारीख 30 नवम्बर, 1994 से श्री आर. एल. दास और पांच अन्य व्यक्तियों की प्रोन्नति को प्रश्नगत करते हुए इसे आधार रहित और गलत बताया है ।

28. 1997 के भर्ती नियमों में पहली बार सहायक ओषधि

नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर सीधी भर्ती का उपबंध करके सीधी भर्ती के लिए 20% पद आरक्षित किए गए हैं । सुश्री लोतिका खजूरिया और याची सीधी भर्ती के लिए प्रतियोगिता द्वारा तारीख 20 मार्च, 2003 के शासकीय आदेश सं. 260-एच. एम. ई./2003 द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किए गए थे । यह उल्लेख किया जा सकता है कि तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच. एम. ई./2002 द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया, याची, श्री अशोक गुप्ता, सतीश गुप्ता, सुश्री इरफाना अहमद और श्री एस. एल. कौल को उनके अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नत किया गया था, जिसके पश्चात् उन्होंने सीधी भर्ती का माध्यम चुना और उपरोक्त तारीख से सीधी भर्ती के कोटे में नियुक्त किए गए । प्रत्यर्थी श्री अशोक गुप्ता, श्री सतीश गुप्ता, सुश्री इरफाना और श्री एस. एल. भट्ट, विभागीय प्रोन्नति समिति/लोक सेवा आयोग से मंजूरी लंबित रहने के कारण अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के रूप में कार्य करते रहे । इसलिए सुश्री लोतिका खजूरिया और याची अपनी नियुक्ति से अर्थात् तारीख 20 मार्च, 2003 से पूर्व अपनी वरिष्ठता का दावा नहीं कर सकते । यह जानने के लिए कि क्या प्रत्यर्थी सं. 1 ने क्रमशः श्री अशोक गुप्ता, श्री सतीश गुप्ता, श्री एस. एल. कौल और सुश्री इरफाना अहमद को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करते हुए सीधी भर्ती के कोटे में अनाधिकार हस्तक्षेप किया या प्रोन्नति कोटे को अधिक्रमित किया, यह आवश्यक है कि उस तारीख को नियत किया जाए जिस तारीख को सहायक ओषधि नियंत्रक का पद उपलब्ध हुआ था । आधार यह है कि सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की नियुक्ति की तारीख को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के सभी आठ (8) पद प्रोन्नति द्वारा भर लिए गए थे तो दो प्रोन्नत व्यक्तियों के बारे में यह माना जाएगा कि दो पद अस्थायी व्यवस्था के आधार पर सीधी भर्ती द्वारा सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की सीधी भर्ती द्वारा भरे हुए थे । जहां प्रोन्नति कोटे में कोई पद शेष रह जाता है वहां ऐसी दशा में निस्संदेह सीधी भर्ती के पश्चात् दो विस्थापित प्रोन्नत व्यक्ति ज्येष्ठता में अंकित हो जाएंगे । वास्तविक विवाद पर ध्यान केन्द्रित करते हुए यह उचित होगा कि तारीख 1 जनवरी, 2002 को जब 1997 के भर्ती नियम प्रवृत्त हुए थे और उस तारीख की स्थिति पर जब तदर्थ/अंतःकालीन प्रोन्नति दी गई थी और

तारीख 20 मार्च, 2003 पर जब सुश्री लोतिका खजूरिया और याची की सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक पद पर नियुक्त किया गया था, विचार किया जाए ।

03-02-1997

(क) तारीख 3 फरवरी, 1997 को, जब 1997 में भर्ती नियम प्रवृत्त हुए थे, स्थिति –

क्रम सं.	अधिकारियों की विशिष्टियां	से	से नियमित
01	श्री ए. सी. महाजन	1991	1991
02	श्री आर. एल. दास	1991	प्रतीक्षा में
03	श्री जी. एल. अंगूराना	1991	-उपरोक्त-
04	श्री एम. असलम खातीब	1991	-उपरोक्त-
05	श्री एम. के. बक्शी	1991	-उपरोक्त-
06	श्री मुस्ताक अहमद खातीब	1991	-उपरोक्त-
07	श्री एस. एल. कौल	1991	-उपरोक्त-

(ख) तारीख 1 जनवरी, 2002 को, जब प्रत्यर्थियों को तदर्थ/ अस्थायी व्यवस्था आधार पर प्रोन्नति दी गई थी, स्थिति –

क्रम सं.	अधिकारियों की विशिष्टियां	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था आधार पर
01	श्री एम. असलम खातीब	1991
02	श्री एम. के. बक्शी	1991
03	श्री मुस्ताक अहमद खातीब	1991
04	श्री एस. एल. कौल	1991
05	श्री अशोक गुप्ता	01-01-2002
06	श्री सतीश गुप्ता	01-01-2002
07	सुश्री इरफाना अहमद	01-01-2002

08	सुश्री लोतिका खजूरिया	01-01-2002
09	श्री नजीर अहमद वानी	01-01-2002

(ग) तारीख 03-02-1997 से 20-03-2003 तक की अवधि में उपलब्ध रिक्तियों का विवरण –

01	25-02-1997	श्री ए. सी. महाजन की प्रोन्नति के कारण
02	31-10-1997	श्री जी. एल. अंगूराना की सेवानिवृत्ति के कारण
03	29-11-1999	श्री आर. एल. दास की प्रोन्नति के कारण
04	30-06-2002	श्री मोहम्मद असलम खातीब की प्रोन्नति के कारण

(घ) प्रत्यर्थियों का भूतलक्षी प्रभाव से नियमितीकरण –

01	श्री अशोक गुप्ता	26-02-1997 से सिद्धांततः और 01-01-2002 से नियमित रूप से	श्री ए. सी. महाजन की प्रोन्नति से रिक्त पद
02	श्री सतीश गुप्ता	29-11-1999 से सिद्धांततः और 01-01-2002 से नियमित रूप से	श्री आर. एल. दास की प्रोन्नति से रिक्त पद
03	सुश्री इरफाना अहमद	03-06-2002 से	श्री मो. असलम खातीब की प्रोन्नति से रिक्त पद

(ङ) तारीख 20 मार्च, 2003 को स्थिति, जब याची और लोतिका खजूरिया को सीधी भर्ती द्वारा सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्त किया गया था –

01	श्री एम. के. बक्शी	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 1991 से प्रोन्नत ।
02	श्री एस. एल. कौल	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 1991 से

		प्रोन्नत ।
03	श्री मुस्ताक अहमद खातीब	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 1991 से प्रोन्नत ।
04	श्री अशोक गुप्ता	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 01-01-2002 से प्रोन्नत ।
05	श्री सतीश गुप्ता	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 01-01-2002 से प्रोन्नत ।
06	सुश्री इरफाना अहमद	तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था पर 01-01-2002 से प्रोन्नत ।

29. इन परिस्थितियों में, उस तारीख को जब 1997 के भर्ती नियम प्रवृत्त हुए थे, सहायक ओषधि नियंत्रक का एक पद रिक्त था और उस तारीख को जब सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के दो पद रिक्त पड़े थे, सुश्री लोतिका खजूरिया और याची को सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर नियुक्त किया गया था और 1997 के भर्ती नियमों को ध्यान में रखते हुए केवल छह प्रोन्नत व्यक्ति ऐसे थे जो प्रोन्नति कोटा में थे । इस प्रकार प्रत्यर्थी सं. 1 ने न तो प्रोन्नति कोटे का अतिक्रमण किया और न ही सीधी भर्ती के लिए नियत कोटे को प्राइवेट प्रत्यर्थियों को दिया । ऐसी स्थिति में याची के इस दावे में कोई सार नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा निजी प्रत्यर्थियों को भूतलक्षी प्रभाव से नियमित करने का निदेश देने में सेवा नियमों का उल्लंघन किया गया था या लोतिका खजूरिया और याची की ज्येष्ठता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा था । अतः ऊपर चर्चा किए गए आधारों पर याची को निजी प्रत्यर्थियों से ज्येष्ठ होने के दावे में कोई बल नहीं है ।

30. चूंकि रिट याचिका की दोनों पक्षों ने **सूरज प्रकाश गुप्ता और अन्य** बनाम **जम्मू-कश्मीर राज्य सरकार और अन्य**[1] वाले मामले में अधिकथित विधि का अवलंब लिया है इसलिए यहां यह लाभप्रद होगा कि निर्णय के सुसंगत भाग को नीचे उद्धृत किया जाए । उच्चतम न्यायालय ने जम्मू-कश्मीर सिविल सेवा, 1956 (सी. सी. ए. नियम, 1956) के सुसंगत नियम की अवेक्षा करने के पश्चात् इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

[1] (2000) 7 एस. सी. सी. 561.

"52. .... नियम 23 भर्ती की विभिन्न रीतियों के बीच कोई विभेद नहीं करता । यह सुस्थापित है कि सीधी भर्ती के मामले में परिवीक्षा केवल उसके चयन की तारीख से प्रारम्भ हो सकती है और वह ऐसे चयन के पश्चात् ही स्थायी पद धारित कर सकता है । सेवा विधि शास्त्र (बिन्दु 4 की चर्चा के तथ्य में देखिए) के अनुसार कोई सीधी भर्ती व्यक्ति अपने चयन की तारीख से पहले की तारीख से नियुक्ति का दावा नहीं कर सकता । जहां तक प्रोन्नत किए गए व्यक्ति तथा ऐसे व्यक्ति का संबंध है, जो स्थानांतरण द्वारा भर्ती किया गया है, ऐसे व्यक्तियों के नियम 23 के अधीन सेवा में नियुक्त किए जाने से पूर्व, सबसे पहले उनकी परिवीक्षा प्रारम्भ होती है । उसके पश्चात् वह व्यक्ति नियम 23 के अधीन परिवीक्षाधीन व्यक्ति बनता है । जब एक बार वह परिवीक्षा पर होता है और यदि स्थायी काडर में अधिष्ठायी रिक्ति होती है जिस पर प्रोन्नत व्यक्ति या भर्ती किए गए व्यक्ति को स्थानांतरण द्वारा समायोजित किया जाता है और यदि ऐसी रिक्ति नियुक्ति (अर्थात् प्रोन्नति या स्थानांतरण द्वारा नियुक्ति) का आदेश जारी किए जाने के पूर्व उद्भूत हुई थी तब उसे नियम 23 के अधीन सेवा (अर्थात् नियमित रूप से) में ऐसी पूर्ववर्ती तारीख से भूतलक्षी प्रभाव से (या जैसा मामला हो, उस पश्चात्वर्ती तारीख से) जिससे वह गैर-पेंशन योग्य (अस्पष्ट पेंशन योग्य) ड्यूटी पर सतत् रूप से रहा हो (देखें 'सेवा का सदस्य परिभाषित' करने वाला) नियम 2(ङ) नियुक्त किया जा सकेगा । निश्चित रूप से यह अवधि ऐसी अवधि होगी जिसमें वह व्यक्ति अस्थायी व्यवस्था या तदर्थ आधार पर पद धारित करता हो । 'किसी व्यक्ति को सेवा में प्रोन्नत' किए जाने का आदेश नियमित रूप से पूर्ववर्ती तारीख और पूर्ववर्ती तारीख से परिवीक्षा का आदेश साथ-साथ पारित किया जा सकता है । अतः नियम 23 के अधीन, अस्थायी, अंतरकालीन व्यवस्था या तीन मास से अधिक नियुक्ति पर पद धारित करने वाला व्यक्ति परिवीक्षाधीन हो सकता है और सेवा में भूतलक्षी प्रभाव से नियमित आधार पर नियुक्त किया जा सकता है ।"

31. आगे इस प्रकार मत व्यक्त किया गया :–

"56. यह सही है कि जहां नियम 15 अस्थायी 'नियुक्ति' के मामले में पूर्ववर्ती तारीख से परिवीक्षा प्रारम्भ करने को अनुज्ञात करता है, वहां इसका यह अर्थ नहीं है कि किसी अस्थायी रूप से प्रोन्नत

व्यक्ति या अस्थायी रूप से स्थानांतरण के आधार पर नियुक्त व्यक्ति के संबंध में पूर्ववर्ती तारीख से परिवीक्षा आरम्भ नहीं की जा सकती । हमारे मतानुसार यह शक्ति नियम 23 में ही निहित है, क्योंकि यह परिवीक्षाधीन व्यक्ति को भूतलक्षी प्रभाव से किसी सेवा में नियुक्त किए जाने के बारे में उपबंध करता है, जब एक बार किसी प्रोन्नत व्यक्ति या स्थानांतरण द्वारा भर्ती व्यक्ति को परिवीक्षा पर नियुक्त कर दिया जाता है, उसको नियम 23 के अधीन कोटे के सदस्य के रूप में नियुक्ति को अनुज्ञात किया गया है । अतः यह स्पष्ट है कि किसी सदस्य को भूतलक्षी प्रभाव से नियुक्त करने की शक्ति में ऐसे व्यक्ति को उस पूर्ववर्ती तारीख से परिवीक्षा के प्रारम्भ करने की शक्ति विवक्षित है, जब उसके कोटे में कोई स्पष्ट रिक्ति उद्‌भूत हुई थी । हम यह परिकल्पना नहीं कर सकते कि नियम बनाने वाले प्राधिकारी ने प्रोन्नत व्यक्तियों या स्थानांतरण आधार पर भर्ती किए गए व्यक्तियों द्वारा की गई तदर्थ या अंतरकालीन व्यवस्था के आधार पर की गई सेवा को नियमित करने में होने वाले विलम्ब को दृष्टिगत नहीं किया और केवल नियम 14 के अधीन नियुक्तियों के मामलों में हो रहे विलम्ब को ही ध्यान में रखा ।"

32. उच्चतम न्यायालय ने इस दलील को कि जहां तदर्थ नियुक्ति 6 माह से अधिक तक चालू रहती है वहां सरकार द्वारा लोक सेवा आयोग से परामर्श न किया जाना तदर्थ सेवा को अनस्तित्वयुक्त बना देता है और ऐसी सेवा बाद में लोक सेवा आयोग से परामर्श करने पर भी नियमित नहीं की जा सकती, अस्वीकार करते हुए इस प्रकार मत व्यक्त किया :–

"59. हम यह अभिनिर्धारित नहीं कर सकते कि आयोग से परामर्श किए बिना किसी प्रोन्नत व्यक्ति को छह मास से अधिक की संपूर्ण सेवा अविद्यमान मानी जानी चाहिए और पूर्णतया शून्य मानी जानी चाहिए और केवल नियमों के अनुसार की गई सेवा ही भूतलक्षी प्रभाव से नियमित की जा सकती है ।"

33. न्यायालय ने आगे इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

"69. इस प्रकार यह अभिनिर्धारित करने का पूर्ण अधिकार है कि तदर्थ, अस्थायी सेवा आयोग से परामर्श करने के पश्चात् प्रोन्नति कोटे में हुई रिक्ति की पूर्ववर्ती तारीख से योग्यता, पात्रता, उपयुक्तता और वार्षिक गोपनीय रिपोर्टों पर विचार करते हुए, नियमित की जा

सकती है । इसलिए तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर प्रोन्नत व्यक्तियों द्वारा की गई छह मास से अधिक की सेवा और विनियम 4(घ)(ii) के अनुसार लोक सेवा आयोग से परामर्श के बिना सेवा अविद्यमान नहीं मानी जा सकती । यह बाद में आयोग से प्रोन्नति कोटे के पदों के संबंध में परामर्श करके और वार्षिक गोपनीय रिपोर्टों आदि पर आधारित पात्रता और उपयुक्तता के अध्यधीन नियमित की जा सकती है । केवल वह अवधि जो कोटे के बाहर की गई है या वह अवधि जो कोटे के भीतर तब की गई जब प्रोन्नत व्यक्ति पात्र नहीं था या योग्य नहीं पाया गया था, विवर्जित की जाएगी ।"

34. यह उल्लेखनीय है कि प्रोन्नत व्यक्तियों की तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर की गई सेवाएं भूतलक्षी प्रभाव से उस तारीख से नियमित की जा सकती हैं जब प्रोन्नति कोटे में स्पष्ट रिक्ति हो और ऐसी पात्रता, योग्यता और अन्य संबंधित तथ्यों के अध्यधीन किया जाएगा और कोई सीधी भर्ती व्यक्ति अपनी नियुक्ति की तारीख से ज्येष्ठता का दावा कर सकता है । सीधी भर्ती नियुक्ति, सीधी भर्ती कोटे में उद्भूत रिक्ति की तारीख से पूर्व नहीं की जा सकती क्योंकि सीधी भर्ती व्यक्ति, उस तारीख से जब वह सेवा में नहीं आया था, ज्येष्ठता का दावा नहीं कर सकता ।

35. वर्तमान मामले में, प्राइवेट प्रत्यर्थी अपने वेतन और ग्रेड में सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर तारीख 1 जनवरी, 2002 के शासकीय आदेश सं. 01-एच. एम. ई. द्वारा सभी उपलब्ध रिक्तियों पर 1 जनवरी, 2002 से नियुक्त किए गए थे । बाद में निजी प्रत्यर्थियों की प्रोन्नति विभागीय प्रोन्नति समिति/ लोक सेवा आयोग की सिफारिश के आधार पर प्रोन्नति कोटे के विरुद्ध, सीधी भर्ती के कोटे या प्रोन्नति कोटे में हस्तक्षेप किए बिना की गई थी । तारीख 25 फरवरी, 1997 को श्री ए. सी. महाजन की प्रोन्नति होने पर प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या घटकर छह रह गई थी जिनपर प्रोन्नत व्यक्ति 1997 के भर्ती नियमों के अधीन प्रोन्नति कोटे का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं । तारीख 31 अक्तूबर, 1997 को श्री जी. एल. अंगूराना की सेवानिवृत्ति के पश्चात् प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या घटकर पांच हो गई जिसके कारण एक प्रोन्नति पद तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था द्वारा नियमितीकरण के लिए कम हो गया था । इन परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी श्री अशोक गुप्ता को वैध रूप से उस पद पर तारीख 31 अक्तूबर, 1997 से नियमित किया गया । तारीख

29 नवम्बर, 1999 को श्री आर. एल. दास की प्रोन्नति होने पर प्रोन्नत व्यक्तियों की संख्या प्रोन्नति कोटे के छह पदों के विरुद्ध घटकर पांच रह गई । इस प्रकार प्रोन्नति कोटे में एक पद उपलब्ध हो गया, जिस पर तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर कार्य कर रहे व्यक्ति को प्रोन्नत किया जा सकता था और इसलिए तारीख 29 नवम्बर, 1999 से प्रत्यर्थी श्री सतीश गुप्ता को नियमित किए जाने से प्रोन्नति कोटे का अतिक्रमण नहीं होता । यही बात प्रत्यर्थी इरफाना अहमद के बारे में भी सही है जिसे तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर नियुक्त किया गया था तथा तारीख 30 जून, 2002 से उस पद के विरुद्ध नियमित किया गया था जो श्री मोहम्मद असलम खातीब की प्रोन्नति होने से उपलब्ध हुआ था । अतः प्रत्यर्थी सं. 1 ने प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिशें स्वीकार करने में प्रोन्नति कोटे का अतिलंघन या अतिक्रमण नहीं किया था । याची द्वारा **सूरज प्रकाश गुप्ता**[1] वाले मामले में अधिकथित विधि का बलपूर्वक अवलंब लिया गया है । दूसरे पक्ष द्वारा पेश की गई विधि याची द्वारा निर्दिष्ट मामले के प्रतिकूल है ।

36. यह किसी का भी पक्षकथन नहीं है कि निजी प्रत्यर्थी सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद पर प्रोन्नति के पात्र नहीं थे । अन्यथा भी चूंकि याची और निजी प्रत्यर्थी दो अलग-अलग स्रोतों से आए हैं, इसलिए याची तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था द्वारा प्रोन्नत व्यक्तियों के नियमितीकरण को प्रश्नगत करने के अधिकारी नहीं हैं । **मुकुल साकिया और अन्य** बनाम **असम राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में जहां कि सी. डी. पी. ओ. के पदों की चयन सूची अभ्यर्थियों ने तदर्थ/अस्थायी व्यवस्था के आधार पर प्रोन्नत किए गए व्यक्तियों को नियमित किए जाने को इस आधार पर प्रश्नगत किया था कि उनको नियमों के अनुसार नियमित नहीं किया गया था तथा इस प्रकार भरे गए पदों को चयन सूची के अभ्यर्थियों में से भरा जाना चाहिए, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया :–

> "अपीलार्थी और निजी प्रत्यर्थी ने पूर्णतया अलग-अलग आधार लिए हैं । निजी प्रत्यर्थियों की सेवाएं प्रोन्नत व्यक्तियों की रिक्तियों के

---

[1] 2007 (7) एस. सी. सी. 561.

[2] ए. आई. आर. 2008 एस. सी. डब्ल्यू. 7971.

विरुद्ध नियमित कर दी गई थीं और अपीलार्थी और निजी प्रत्यर्थियों के विधिक अधिकारों के स्रोत दो अलग-अलग प्रकार के स्रोत हैं तथा उनके संबद्ध अधिकारों की एक-दूसरे से तुलना नहीं की जा सकती और इसलिए प्रत्यर्थियों की सेवाओं को नियमित करने के परिणामस्वरूप भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के अधीन मूल अधिकारों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है ।"

37. उपरोक्त चर्चा से यह निष्कर्ष निकलता है कि मौलिक और संवैधानिक अधिकारों का अतिक्रमण, जैसा कि याची ने तीन रिट याचिकाओं में अभिकथित किया है, किसी भी प्रकार से नहीं हुआ है । श्रीमती लोतिका खजूरिया एकमात्र अभ्यर्थी थी, जिसकी प्रत्यर्थी सं. 2 ने सहायक ओषधि नियंत्रक के पद पर नियुक्ति के लिए संस्तुति की थी और इस प्रकार याची से जो प्रतीक्षा सूची में था, वरिष्ठ थी और केवल इसलिए नियुक्त किया गया था क्योंकि श्रीमती लोतिका खजूरिया प्रतिनियुक्ति पर थी और सहायक ओषधि नियंत्रक/सहायक ओषधि विश्लेषक के पद की वरिष्ठता सूची में उच्च स्थान पर रखे जाने की दावेदार थी, किन्तु चूंकि श्रीमती लोतिका खजूरिया ने स्वयं को ज्येष्ठता सूची में रखे जाने को प्रश्नगत नहीं किया था और न्यायालय के सम्मुख अपना पक्ष नहीं रखा था, अतः यह उचित नहीं होगा कि मामले के इस पहलू पर विचार न किया जाए ।

38. इन परिस्थितियों में और उपरोक्त चर्चा के आधार पर 2009 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1654, 2007 की सी./डब्ल्यू. एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2 और 2006 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 1619 सभी संबंधित सिविल प्रकीर्ण याचिकाओं के साथ खर्चों सहित खारिज की जाती हैं ।

रिट याचिकाएं खारिज की गईं ।

भट./मह.

भारत संघ और अन्य

बनाम

मोहिन्दर सिंह

तारीख 8 मार्च, 2013

मुख्य न्यायमूर्ति एम. एम. कुमार और न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर

सीमा सुरक्षा बल अधिनियम, 1968 – धारा 11(2) और 62 [सपठित सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 – नियम 22 और 177] – सीमा सुरक्षा बल सेवा – स्थानांतरण – कर्मचारी द्वारा आदेशों की तामील से बचकर आदेशों का अनुपालन न करना – सेवोन्मुक्ति – रिट याचिका द्वारा चुनौती – पते में परिवर्तन का अभिवाक् – मंजूरी – राज्य द्वारा अपील – जहां कोई कर्मचारी विभाग को दिए गए अपने आवासीय पते में परिवर्तन करता है तो उसका यह कर्तव्य है कि वह नए पते से विभाग को सूचित करे – नियोजक का यह कर्तव्य नहीं है कि वह कर्मचारी की ऐसे पते की तलाश करे जो उसके अभिलेखों में नहीं है – कर्मचारी अपनी ही कमी का फायदा नहीं ले सकता ।

यह अपील 2002 की एल. डब्ल्यू. पी. सं. 2247 में रिट न्यायालय द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2009 को पारित उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा रिट याची द्वारा फाइल की गई रिट याचिका, याचिका में उल्लिखित आधारों पर मंजूर करते हुए याची को तारीख 31 जनवरी, 2001 से सेवा से पदच्युत करने के आदेश को अभिखंडित करते हुए याचिका मंजूर की गई है । अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – रिट याची ने अपना पदभार ग्रहण करते समय तथा 15 दिन की आकस्मिक छुट्टी के लिए आवेदन करते समय अपना पता मकान नं. 642-ए, डाकखाना गांधी नगर, जिला जम्मू (जम्मू और कश्मीर) दिया था । उसे तारीख 1 नवंबर, 1999 को अपना पदभार ग्रहण करना था किंतु उसने अपनी अस्वस्थता के आधार पर अनुपस्थित रहना पसंद किया था । उस पर रजिस्ट्रीकृत पत्रों की तथा सूचनाओं की उसके द्वारा दिए गए पते पर तामील की गई थी किंतु उसने कोई जवाब नहीं दिया । यदि याची ने अपना मकान बदल दिया था तो उसका यह कर्तव्य था कि वह अपने

आवासीय पते के परिवर्तन के बारे में अपनी इकाई को सूचित करे । तथापि, वह ऐसा करने में विफल रहा । यहां यह उल्लेखनीय है कि याची ने तारीख 20 जनवरी, 2001 को निष्पादित अखंडनीय मुख्तारनामे की प्रति रिट याचिका के अभिलेख पर प्रस्तुत की है और इस मुख्तारनामे में उसका आवास 642-ए, गांधी नगर, जम्मू उपदर्शित किया गया है । अतः यह पूर्णतया स्पष्ट है कि तारीख 20 जून, 2001 को रिट याची गांधी नगर, जम्मू के पते पर रह रहा था । इसके अतिरिक्त रिट याचिका के साथ उपाबद्ध तारीख 1 अप्रैल, 2000 की सूचना और अभिस्वीकृति से जो रिट याची को उसकी इकाई द्वारा भेजी गई थी, यह प्रकट होता है कि उसने (रिट याची ने) अपने सेवा अभिलेखों में अपना आवास का पता 642-ए, गांधी नगर, जम्मू के रूप में उपदर्शित किया था । उसने कभी भी अपीलार्थियों को अपने पते के परिवर्तन के बारे में सूचित नहीं किया जिसके लिए वह सिविल सेवा आचरण नियमों के अनुसार आबद्ध था । रिट याची ने स्वयं यह उपदर्शित किया है कि वह दिल्ली उप-मार्ग जम्मू स्थित नए आवास में तारीख 26 अप्रैल, 2000 को चला गया था जिसका यह अर्थ है कि वह उस तारीख से पूर्व गांधी नगर, जम्मू में रह रहा था । यदि ऐसा था तो उसने किस प्रकार तारीख 20 जनवरी, 2001 को अपना आवासीय पता 642-ए, गांधी नगर, जम्मू उपदर्शित करते हुए अखंडनीय मुख्तारनामा निष्पादित कराया जबकि उसके अनुसार वह तारीख 26 अप्रैल, 2000 को दिल्ली उपमार्ग, जम्मू स्थित अपने नए मकान में पहले ही चला गया था । अतः याची अपने ही बनाए हुए जाल में फंस गया क्योंकि सभी रजिस्ट्रीकृत पत्र, सूचनाएं और कारण बताओ सूचनाएं तारीख 20 जनवरी, 2001 के पूर्व 642-ए, गांधी नगर, जम्मू के पते पर तामील की गई थीं इसलिए रिट याची के कथन को मानने के लिए कोई गुंजाइश नहीं रह जाती । अतः याची द्वारा रिट याचिका के पैरा 8 में लिया गया अभिवाक् स्वयं उसके दावे को झुठलाता है । अपीलार्थियों ने भी उक्त पैरा में किए गए कथनों से इनकार किया है । इसके अतिरिक्त यह भी आश्चर्यजनक रूप से उल्लेखनीय है कि रिट याची द्वारा अपनी इकाई को तारीख 15 जनवरी, 2000 को भेजी गई सूचना में भी उसने यह कहा है कि उसने अपनी तैनाती के रद्दकरण के लिए इस न्यायालय में रिट याचिका फाइल की है और उक्त मामले में विनिश्चय आने तक वह अपना पदभार ग्रहण नहीं करेगा । उक्त पत्र की अंतर्वस्तु स्वयं उसके आचरण को उपदर्शित करती है इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह जांच कार्यवाहियों से अवगत था । सामान्यतया आरोप पत्र की डाक द्वारा तामील

की जाती है जब कोई कर्मचारी अप्राधिकृत रूप से स्वयं अनुपस्थित हो जाए या फरार हो जाए या अन्यथा आरोप पत्र की तामील से बचे । फरार कर्मचारी अक्सर अपने अंतिम पते पर उपलब्ध नहीं होते हैं । नैसर्गिक रूप से कार्यालय संदेशवाहक द्वारा उनको भेजा गया आरोप पत्र या अन्य संसूचनाएं उन्हें प्राप्त नहीं होतीं । डाक द्वारा भेजे गए दस्तावेज भी 'उपलब्ध नहीं', 'नहीं पाए गए', 'स्थान छोड़कर चले गए हैं' आदि जैसे डाक पृष्ठांकनों के साथ वापस आ जाते हैं । इस निर्णय में यथा-अधिकथित 'वास्तविक तामील' की अपेक्षा अनुशासनिक प्राधिकारी को ऐसे कर्मचारी के विरुद्ध आगे कार्यवाही करने के लिए कठिन बना देती है जो कि स्वयं आरोप पत्र की तामील से बच रहा हो । यदि कोई कर्मचारी कार्यालय में उपस्थित नहीं होता है तो आरोप पत्र उसके अंतिम ज्ञात पते पर ही भेजा जाएगा । उपर्युक्त अभिकथित परिस्थितियों में रिट याची ने अनुशासनिक बल के सदस्य के रूप में व्यवहार नहीं किया है और उसने विधिक प्रक्रिया से बचने के सभी प्रयास किए हैं इसलिए उसे सेवा में बने रहने का कोई अधिकार नहीं है । उपर्युक्त को दृष्टिगत करते हुए न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि अपीलार्थी-रिट प्रत्यर्थियों ने रिट याची के अंतिम ज्ञात पते पर समय-समय पर रजिस्ट्रीकृत पत्र, सूचनाएं और कारण बताओ सूचनाएं जारी करते समय विधिक प्रक्रिया और विधिक आज्ञा का अनुसरण किया है । (पैरा 4, 5, 6, 7, 9 और 10)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[1997] 1997 के. एल. जे. 76 :
(डा.) मुहम्मद हुसैन वानी बनाम **राज्य और अन्य** । 8

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2009 की लेटर्स पेटेंट अपील एस. डब्ल्यू. सं. 30.

2002 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2247 में रिट न्यायालय (उच्च न्यायालय) द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2009 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध लेटर्स पेटेंट अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री अजय शर्मा

प्रत्यर्थी की ओर से श्री बी. एस. सलाथिया और सुश्री कामिनी ठाकुर

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति मंसूर अहमद मीर ने दिया ।

न्या. मीर – यह अपील 2002 की एल. डब्ल्यू. पी. सं. 2247 में रिट न्यायालय द्वारा तारीख 2 जनवरी, 2009 को पारित उस निर्णय और आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा रिट याची द्वारा फाइल की गई रिट याचिका, याचिका में उल्लिखित आधारों पर मंजूर करते हुए याची को तारीख 31 जनवरी, 2001 से सेवा से पदच्युत करने के आदेश को अभिखंडित करते हुए याचिका मंजूर की गई है ।

2. संक्षेप में तथ्य इस प्रकार हैं कि रिट याची को तारीख 24 मई, 1983 को सीमा सुरक्षा बल में कांस्टेबल के रूप में भर्ती किया गया था । रिट याची को तारीख 11 जनवरी, 1999 के आदेश द्वारा सीमा सुरक्षा बल की पांचवीं बटालियन में तैनात किया गया था और तद्नुसार उसे तारीख 16 अप्रैल, 1999 को अभिमुक्त किया गया था । तथापि, याची ने उक्त बटालियन में पद ग्रहण करने के बजाय तारीख 17 मई, 1999 तक अनुपस्थित रहना पसंद किया और इसलिए पांचवीं बटालियन में नियुक्त करने का आदेश इस निदेश के साथ रद्द किया गया कि वह सीमा सुरक्षा बल की 71वीं बटालियन में अपना पद ग्रहण करे । उसे यह आदेश रजिस्ट्रीकृत डाक द्वारा भेजा गया था । तथापि, रिट याची ने अपनी स्वेच्छा से तारीख 2 अगस्त, 1999 को उक्त बटालियन में अपना पद ग्रहण किया जबकि वह लगभग 108 दिन की अवधि तक छुट्टी लिए बिना अनुपस्थित रहा था जिसके लिए उसका संक्षिप्ततः विचारण किया गया था और उसे गंभीर चेतावनी दी गई थी । इसके पश्चात् रिट याची ने तारीख 17 मई, 1999 के आदेश को जिसके द्वारा उसे पांचवीं बटालियन में तैनात करने का आदेश किया गया था, प्रश्नगत करते हुए 2000 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 95 फाइल की थी । उक्त रिट याचिका तारीख 9 अप्रैल, 2001 के निर्णय द्वारा खारिज की गई थी और उक्त निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई अपील (2001 की लेटर्स पेटेंट अपील सं. एस. डब्ल्यू. सं. 223) का भी वही परिणाम हुआ और उसे तारीख 17 अप्रैल, 2002 को खारिज कर दिया गया । इसी दौरान रिट याची तारीख 11 अक्तूबर, 1999 से तारीख 30 अक्तूबर, 1999 तक पांच दिन की आकस्मिक छुट्टी पर चला गया । उसे तारीख 1 नवंबर, 1999 को अपना पदभार ग्रहण करना था किंतु जब वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन करने के लिए ड्यूटी पर नहीं आया तो उसे तारीख 4 नवंबर, 1999, 18 नवंबर, 1999 और तारीख 7 दिसंबर, 1999

के तीन रजिस्ट्रीकृत डाक पत्रों द्वारा ड्यूटी ज्वाइन करने के लिए निदेश दिया गया । जब वह ऐसा करने में विफल रहा तो न्यायिक जांच की गई जैसा कि सीमा सुरक्षा बल अधिनियम, 1968 (जिसे आगे संक्षेप में 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 62 के उपबंधों के अधीन अपेक्षित है । यह जांच तारीख 7 दिसंबर, 1999 के आदेश द्वारा की गई थी और पीठासीन अधिकारी ने तारीख 27 दिसंबर, 1999 को जांच पूरी की जिसमें रिट याची को चेतावनी जारी करने और कारण बताओ सूचना जारी करने की सिफारिश की गई थी । इसके पश्चात् रिट याची ने तारीख 28 दिसंबर, 1999, 15 जनवरी, 2000 और 20 जनवरी, 2000 को तीन संसूचनाएं भेजीं जिसमें उसने अपनी बाईं टांग में दर्द होने के कारण पदभार ग्रहण करने में असमर्थता व्यक्त की । उसने अपनी तारीख 15 जनवरी, 2000 की संसूचना में यह भी कहा कि उसने अपनी तैनाती के रद्दकरण के लिए इस न्यायालय में एक रिट याचिका फाइल की है और उक्त मामले में विनिश्चय आने तक वह अपना पदभार ग्रहण नहीं करेगा । रिट याची के जवाब पर विचार करने के पश्चात् उसे सीमा सुरक्षा बल नियम, 1969 (जिन्हें आगे संक्षेप में 'नियम' कहा गया है) के नियम 22 के अधीन उसके द्वारा दिए गए उस पते पर जो उसने सीमा सुरक्षा बल में नियुक्त करते समय दिया था, तारीख 7 सितंबर, 2000 को कारण बताओ सूचना तामील की गई । उसने यह पता 15 दिन की छुट्टी का आवेदन करते समय भी दिया था जो मकान सं. 642-ए डाकखाना गांधी नगर, जिला जम्मू (जम्मू और कश्मीर) के रूप में दिया गया था । तथापि, प्रत्यर्थी ने कोई जवाब नहीं दिया । परिणामतः उसे तारीख 31 जनवरी, 2001 के आदेश द्वारा नियमों के नियम 177 के साथ पठित अधिनियम की धारा 11(2) के निबंधनों में सेवा से हटा दिया गया । उक्त आदेश तारीख 31 जनवरी, 2001 के यूनिट आदेश सं. स्था./71/बटालियन/डिसमिसल/2001/915-1025 में प्रकाशित किया गया था । रिट याची ने इससे व्यथित होकर स्वयं को सेवा से हटाए जाने के आदेश के विरुद्ध सीमा सुरक्ष बल के महानिदेशक के समक्ष अपील फाइल की थी । तथापि, उक्त अपील के लंबन के दौरान उसने अपने पदच्युति आदेश को प्रश्नगत करते हुए 2002 की एस. डब्ल्यू. पी. सं. 2247 फाइल की । रिट न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थियों ने रिट याची को सेवा से हटाते समय नियमों के नियम 22 के

अधीन यथा अपेक्षित प्रक्रिया का पालन नहीं किया है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि जांच अधिकारी तथा अपीलार्थियों का यह कर्तव्य था कि वे दिए गए पते पर रिट याची पर कारण बताओ सूचना की तामील सुनिश्चित करें और यदि पता उपलब्ध नहीं था तो सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 5 नियम 17 का अनुसरण करें ।

3. हमने पक्षकारों की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेलों को सुना और हमारा यह सुविचारित मत है कि रिट न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क विधितः सही नहीं हैं और निम्नलिखित कारणों से आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाना चाहिए ।

4. रिट याची ने अपना पदभार ग्रहण करते समय तथा 15 दिन की आकस्मिक छुट्टी के लिए आवेदन करते समय अपना पता मकान नं. 642-ए, डाकखाना गांधी नगर, जिला जम्मू (जम्मू और कश्मीर) दिया था । उसे तारीख 1 नवंबर, 1999 को अपना पदभार ग्रहण करना था किंतु उसने अपनी अस्वस्थता के आधार पर अनुपस्थित रहना पसंद किया था । उस पर रजिस्ट्रीकृत पत्रों की तथा सूचनाओं की उसके द्वारा दिए गए पते पर तामील की गई थी किंतु उसने कोई जवाब नहीं दिया । यहां रिट याचिका के पैरा 7, 8 और 9 को उद्धृत करना सुसंगत होगा :–

> "7 यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि याची सीमा सुरक्षा बल में अपनी नियुक्ति की तारीख से अपने सगे भाई श्री ओमकार चंद डोगरा जो कि सीमा सुरक्षा बल में उप कमांडेंट हैं, के साथ मकान सं. 642-ए, गांधी नगर, जम्मू में रह रहा था । उक्त आवासीय मकान आवेदक के उपर्युक्त भाई के नाम में था जिसका उसने तारीख 9 मई, 2000 को विक्रय कर दिया था । विक्रय विलेख की प्रति संलग्न की जाती है और इसे उपाबंध-ए के रूप में चिह्नांकित किया जाता है ।
>
> 8. पारिवारिक व्यवस्था के अनुसरण में और उपर्युक्त मकान के विक्रय के पश्चात् याची ने दिल्ली उपमार्ग (किसान आटा चक्की के निकट) जम्मू में तारीख 26 अप्रैल, 2000 को अपना स्वयं का मकान क्रय कर लिया था । अतः याची तारीख 26 अप्रैल, 2000 को अपने नए मकान में चला गया था और इस तारीख तक वह उसी मकान में रह रहा है । दस्तावेजों की प्रति जिससे याची द्वारा उक्त मकान को क्रय करना साबित होता है, संलग्न की जाती है जिसे

उपाबंध-बी के रूप में चिह्नांकित किया गया है ।

9. ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 7 सितंबर, 2000 को कारण बताओ सूचना सं. स्था./71वीं बटालियन/एस. सी. एन./2000/2126-28 तथा दूसरी तारीख 1 जनवरी, 2001 की कारण बताओ सूचना सं. स्था./71वीं बटालियन/एस. सी. एन./001 जारी की थी जो कि याची को कभी भी प्राप्त नहीं हुई क्योंकि याची को उक्त सूचनाएं पूर्वतर पते अर्थात् मकान सं. 642-ए, गांधी नगर, जम्मू के पते पर भेजी गई थीं जहां याची पहले रह रहा था और उसके पश्चात् उक्त पता ऊपर दिए गए पते के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था । चूंकि याची को कारण बताओ सूचना प्राप्त नहीं हुई इसलिए याची ने उपर्युक्त अभिकथित सूचना के जवाब में कोई उत्तर नहीं दिया ।"

5. यदि याची ने अपना मकान बदल दिया था तो उसका यह कर्तव्य था कि वह अपने आवासीय पते के परिवर्तन के बारे में अपनी इकाई को सूचित करे । तथापि, वह ऐसा करने में विफल रहा । यहां यह उल्लेखनीय है कि याची ने तारीख 20 जनवरी, 2001 को निष्पादित अखंडनीय मुख्तारनामे की प्रति रिट याचिका के अभिलेख पर प्रस्तुत की है और इस मुख्तारनामे में उसका आवास 642-ए, गांधी नगर, जम्मू उपदर्शित किया गया है । अतः यह पूर्णतया स्पष्ट है कि तारीख 20 जून, 2001 को रिट याची गांधी नगर, जम्मू के पते पर रह रहा था । इसके अतिरिक्त रिट याचिका के साथ उपाबद्ध तारीख 1 अप्रैल, 2000 की सूचना और अभिस्वीकृति से जो रिट याची को उसकी इकाई द्वारा भेजी गई थी, यह प्रकट होता है कि उसने (रिट याची ने) अपने सेवा अभिलेखों में अपना आवास का पता 642-ए, गांधी नगर, जम्मू के रूप में उपदर्शित किया था । उसने कभी भी अपीलार्थियों को अपने पते के परिवर्तन के बारे में सूचित नहीं किया जिसके लिए वह सिविल सेवा आचरण नियमों के अनुसार आबद्ध था । रिट याची ने स्वयं यह उपदर्शित किया है कि वह दिल्ली उप-मार्ग जम्मू स्थित नए आवास में तारीख 26 अप्रैल, 2000 को चला गया था जिसका यह अर्थ है कि वह उस तारीख से पूर्व गांधी नगर, जम्मू में रह रहा था । यदि ऐसा था तो उसने किस प्रकार तारीख 20 जनवरी, 2001 को अपना आवासीय पता 642-ए, गांधी नगर, जम्मू उपदर्शित करते हुए अखंडनीय मुख्तारनामा निष्पादित कराया जबकि उसके अनुसार वह तारीख 26 अप्रैल, 2000 को दिल्ली उप-मार्ग, जम्मू स्थित अपने नए मकान में

पहले ही चला गया था । अतः याची अपने ही बनाए हुए जाल में फंस गया क्योंकि सभी रजिस्ट्रीकृत पत्र, सूचनाएं और कारण बताओ सूचनाएं तारीख 20 जनवरी, 2001 के पूर्व 642-ए, गांधी नगर, जम्मू के पते पर तामील की गई थीं इसलिए रिट याची के कथन को मानने के लिए कोई गुंजाइश नहीं रह जाती । अतः याची द्वारा रिट याचिका के पैरा 8 में लिया गया अभिवाक् स्वयं उसके दावे को झुठलाता है । अपीलार्थियों ने भी उक्त पैरा में किए गए कथनों से इनकार किया है ।

6. इसके अतिरिक्त यह भी आश्चर्यजनक रूप से उल्लेखनीय है कि रिट याची द्वारा अपनी इकाई को तारीख 15 जनवरी, 2000 को भेजी गई सूचना में भी उसने यह कहा है कि उसने अपनी तैनाती के रद्दकरण के लिए इस न्यायालय में रिट याचिका फाइल की है और उक्त मामले में विनिश्चय आने तक वह अपना पदभार ग्रहण नहीं करेगा । उक्त पत्र की अंतर्वस्तु स्वयं उसके आचरण को उपदर्शित करती है इसलिए यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि वह जांच कार्यवाहियों से अवगत था ।

7. सामान्यतया आरोप पत्र की डाक द्वारा तामील की जाती है जब कोई कर्मचारी अप्राधिकृत रूप से स्वयं अनुपस्थित हो जाए या फरार हो जाए या अन्यथा आरोपपत्र की तामील से बचे । फरार कर्मचारी अक्सर अपने अंतिम पते पर उपलब्ध नहीं होते हैं । नैसर्गिक रूप से कार्यालय संदेशवाहक द्वारा उनको भेजा गया आरोप पत्र या अन्य संसूचनाएं उन्हें प्राप्त नहीं होतीं । डाक द्वारा भेजे गए दस्तावेज भी 'उपलब्ध नहीं', 'नहीं पाए गए', 'स्थान छोड़कर चले गए हैं' आदि जैसे डाक पृष्ठांकनों के साथ वापस आ जाते हैं । इस निर्णय में यथा-अधिकथित 'वास्तविक तामील' की अपेक्षा अनुशासनिक प्राधिकारी को ऐसे कर्मचारी के विरुद्ध आगे कार्यवाही करने के लिए कठिन बना देती है जो कि स्वयं आरोप पत्र की तामील से बच रहा हो । यदि कोई कर्मचारी कार्यालय में उपस्थित नहीं होता है तो आरोपपत्र उसके अंतिम ज्ञात पते पर ही भेजा जाएगा ।

8. इस न्यायालय ने **(डा.) मुहम्मद हुसैन वानी** बनाम **राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि नियोजक से यह प्रत्याशित नहीं है कि वह कर्मचारी पर कारण बताओ सूचना की तामील करने के लिए पूरे विश्व में ऐसे फरार कर्मचारी को तलाश करे । विभाग कारण बताओ सूचना की उस पते पर तामील करेगा जो नियोजक को उपलब्ध है ।

---

[1] 1997 के. एल. जे. 76.

9. उपर्युक्त अभिकथित परिस्थितियों में रिट याची ने अनुशासनिक बल के सदस्य के रूप में व्यवहार नहीं किया है और उसने विधिक प्रक्रिया से बचने के सभी प्रयास किए हैं इसलिए उसे सेवा में बने रहने का कोई अधिकार नहीं है ।

10. उपर्युक्त को दृष्टिगत करते हुए हमारा यह सुविचारित मत है कि अपीलार्थी-रिट प्रत्यर्थियों ने रिट याची के अंतिम ज्ञात पते पर समय-समय पर रजिस्ट्रीकृत पत्र, सूचनाएं और कारण बताओ सूचनाएं जारी करते समय विधिक प्रक्रिया और विधिक आज्ञा का अनुसरण किया है ।

11. ऊपर उल्लिखित कारणों से हम अपील मंजूर करते हुए हमारे समक्ष आक्षेपित निर्णय को अपास्त करते हैं और इसके साथ ही साथ सभी सिविल प्रकीर्ण आवेदनों, यदि कोई हों, को भी खारिज करते हैं और परिणामतः रिट याचिका खारिज की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

मह.

(2013) 1 सि. नि. प. 246 **राजस्थान**

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

मछला और अन्य

तथा

यूनाइटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

मुन्ना लाल और अन्य

तारीख 27 सितम्बर, 2012

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163-क, 166 और 173 – मोटर दुर्घटना – दावा – ट्रक के चालक द्वारा ट्रक के इन्डीकेटर जलाए बिना तथा पत्थर आदि से रुकावट बनाए बिना ट्रक को सड़क पर खड़ा करना – दुर्घटना – जिम्मेदारी – जहां ट्रक के चालक द्वारा ट्रक के

इन्डीकेटर या लाइट जलाए बिना या पत्थर आदि की रुकावट बनाए बिना ट्रक को सड़क पर खड़ा कर दिया गया हो वहां उसकी ओर से लापरवाही और असावधानी मानी जाएगी – ऐसे किसी कार्य से नुकसान पहुंचने वाला पक्ष क्षतिपूर्ति और प्रतिकर के लिए हक़दार होगा ।

अपीलार्थी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण एवं विशेष न्यायाधीश (डकैती प्रभावित क्षेत्र), धौलपुर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 24.5.2011 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हैं । अपीलें खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि अपीलाधीन निर्णय के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति राशि की अदायगी की जिम्मेदारी अपीलार्थी बीमा कम्पनी की ही मानी गई है एवं न्यू इंडिया इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड को जिम्मेदारी से गलत रूप से मुक्त किया गया है । उनका कथन है कि जिस वाहन चालक की गफलत व लापरवाही के कारण मृतक की मृत्यु हुई है वह वाहन यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के यहां बीमित था । इस प्रकार विद्वान् अधिकरण ने अपीलार्थी बीमा कम्पनी की जिम्मेदारी गलत रूप से मानी है जबकि पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य से जिम्मेदारी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की बनती है । इसके विपरीत प्रत्यर्थीगण के विद्वान् अधिवक्तागण का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है । न्यायालय ने उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त न्यायालय अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलों में बल नहीं पाता है । न्यायालय के विन्रम मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है । अतः अपीलार्थी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें निरस्त की जाती हैं । (पैरा 4, 5, 6 और 7)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2011 की एकलपीठ सिविल विविध अपील संख्या 3862 और 3861.

मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण द्वारा तारीख 24 मई, 2011 को पारित आदेश के विरुद्ध अपीलें ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री अजीत भण्डारी और जितेन्द्र मिश्रा
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री संजय सिंघल, बी. बी. ओझा और डी. के. गर्ग

न्यायमूर्ति महेश चन्द्र शर्मा – अपीलार्थी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण एवं विशेष न्यायाधीश (डकैती प्रभावित क्षेत्र), धौलपुर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 24 मई, 2011 के विरुद्ध प्रस्तुत की गई हैं । चूंकि उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलों के अन्तर्गत अधिकरण के एक ही निर्णय को चुनौती दी गई है, जिससे इनका निस्तारण इस एक ही निर्णय के द्वारा किया जा रहा है ।

2. प्रकरण के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स ने अधिकरण के समक्ष क्लेम याचिका इन तथ्यों के साथ प्रस्तुत की कि दिनांक 3 सितम्बर, 2008 को मृतक सुरेश अपनी गाड़ी टाटा-407 जिसका नम्बर आरजे-05/जी-0554 में ग्वालियर से सेमर माइक्रापिन कम्पनी लि., ग्वालियर का सामान सप्लाई करने ग्वालियर से भरतपुर, डीग, नदबई सामान भरकर गई उस समय उक्त कम्पनी द्वारा सामान के साथ अपनी कम्पनी का कर्मचारी कुलदीप भी उक्त ट्रक में बैठकर गया था । जब उक्त ट्रक सामान सप्लाई करके नदबई से वापस आ रहा था तो राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 11 पर मंगल पेट्रोल पम्प के सामने रात्रि के करीब 10 बजे रोड पर ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 लापरवाहीपूर्वक खड़ा था तथा इस ट्रक के पीछे या साईड के चालक द्वारा इण्डीकेटर नहीं जलाए गए और न ही उक्त ट्रक के पीछे या साईड में कोई पत्थर ही डाले गए । रात्रि का समय होने के कारण सामने से आ रहे वाहनों की लाईट की चकाचौंध के कारण टाटा-407 वाला ट्रक खड़े हुए ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 से टकरा गया जिसमें टाटा-407 के चालक सुरेश व उसमें बैठे कुलदीप की मृत्यु हो गई । मृतक सुरेश द्वारा टाटा-407 का बीमा कराते समय व्यक्तिगत दुर्घटना के लिए अप्रार्थी संख्या 4 बीमा कम्पनी को प्रीमियम भी अदा किया गया था । अप्रार्थी संख्या 1 ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 का रजिस्टर्ड स्वामी, अप्रार्थी संख्या 2 चालक एवं अप्रार्थी संख्या 3 उक्त ट्रक की बीमा कम्पनी है जो सभी उक्त कथित दुर्घटना के लिए संयुक्त रूप से एवं पृथक्-पृथक् रूप से उत्तरदायी हैं ।

3. प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स द्वारा प्रस्तुत क्लेम याचिका के नोटिस याचिका के विपक्षीगण को जारी किए गए । विपक्षीगण की ओर से जवाब प्रस्तुत किया गया, जिसमें क्लेम याचिका के तथ्यों से इनकार करते हुए याचिका खारिज किए जाने की प्रार्थना की गई । विद्वान् अधिकरण ने पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर चार विवाद्यक विरचित किए । तत्पश्चात् साक्ष्य लेखबद्ध किए जाने एवं बहस सुनने के उपरान्त विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण एवं विशेष न्यायाधीश (डकैती प्रभावित क्षेत्र), धौलपुर ने अपने निर्णय दिनांक 24 मई, 2011 के द्वारा अपील संख्या 3862/2011 के प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्ट्स को 4,74,000/- रुपए एवं अपील संख्या 38612/2011 के प्रत्यर्थीगण-क्लेमेन्टस को 11,41,000/- रुपए क्षतिपूर्ति राशि दिलाए जाने का आदेश पारित किया गया एवं उक्त क्षतिपूर्ति राशि की अदायगी की जिम्मेदारी क्लेम याचिका के अप्रार्थी संख्या 3 अर्थात् मुकेशचन्द्र अग्रवाल, करन सिंह एवं यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की मानी गई । उक्त निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड की ओर से उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलें इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत की गई हैं ।

4. अपीलार्थी के विद्वान् अधिवक्ता का तर्क है कि अपीलाधीन निर्णय के अन्तर्गत क्षतिपूर्ति राशि की अदायगी की जिम्मेदारी अपीलार्थी बीमा कम्पनी की ही मानी गई है एवं न्यू इंडिया इंश्योरेन्स कम्पनी लिमिटेड को जिम्मेदारी से गलत रूप से मुक्त किया गया है । उनका कथन है कि जिस वाहन चालक की गफलत व लापरवाही के कारण मृतक की मृत्यु हुई है वह वाहन यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के यहां बीमित था । इस प्रकार विद्वान् अधिकरण ने अपीलार्थी बीमा कम्पनी की जिम्मेदारी गलत रूप से मानी है जबकि पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य से जिम्मेदारी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड की बनती है ।

5. इसके विपरीत प्रत्यर्थीगण के विद्वान् अधिवक्तागण का तर्क है कि विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है । यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के विद्वान् अधिवक्ता श्री संजय सिंघल ने इस न्यायालय का ध्यान अपीलाधीन निर्णय के निम्न भाग की ओर आकर्षित कराया :–

"इस प्रकरण में प्र. सू. रि. स्वयं ट्रक संख्या आरजे-05/जी-

1127 पर मौजूद खल्लासी/चालक देशराज द्वारा दर्ज करवाई गई है । उक्त प्र. सू. रि. में देशराज ने यह स्पष्ट रूप से उल्लिखित किया है कि दिनांक 3 सितम्बर, 2008 को भुसावर से ऋतुराज मिनरल एण्ड माईन्स जो गांव कारवान (भुसावर) पर है से ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 से सिल्का सेन्ट भरकर करीब 6 बजे सायं आगरा के लिए रवाना हुए थे । करीब रात्रि 9.30 बजे मंगल पेट्रोल पम्प के सामने एन. एच. 11 पर हमारी गाड़ी का पिछला टायर फट गया और गाड़ी ड्राईवर ने खड़ी कर दी और टायर बदलने का विचार कर रहे थे । हमने गाड़ी के पीछे पत्थर वगैरह नहीं लगाए, पुरानी गाड़ी होने की वजह से पार्किंग लाईट नहीं जल रही थी । दस बजे लगभग मेटाडोर संख्या आरजे-11/जी-0554 बड़ी तेज गति से चलते हुए आई और खड़ी गाड़ी में टक्कर मार दी । (रेस इप्सा लोक्यूटर) घटना स्वयं बोलती है के सिद्धांत का अनुसरण किया जाए तो इस दुर्घटना में यह स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है कि जो वाहन संख्या आरजे-05/जी-1127 सड़क के बीचों-बीच में खड़ा था और उक्त गाड़ी पुरानी थी इस कारण पार्किंग लाईट नहीं जलाई थी और गाड़ी के पीछे पत्थर आदि लगाकर सुरक्षा व्यवस्था भी नहीं की गई थी और घटना रात्रि के दस बजे घटित होना बताया गया है । नेशनल हाईवे पर बीचों-बीच गाड़ी को खड़ा करना, गाड़ी की पार्किंग लाईट नहीं जलाना और पत्थर आदि नहीं लगाकर कोई सुरक्षा भी नहीं करना स्पष्ट रूप से (रेस इप्सा लोक्यूटर) घटना स्वयं बोलती है के सिद्धांत को आकर्षित करते हैं । क्योंकि नेशनल हाईवे पर चलने वाला वाहन अचानक इस बात का ज्ञान नहीं कर सकता कि नेशनल हाईवे पर बीचों-बीच सड़क पर अंधेरे में बिना लाईट व पत्थर वगैरह लगाए बिना तथा बिना सुरक्षा व्यवस्था के कोई वाहन खड़ा हो । ऐसी स्थिति में घटनास्थल पर मौजूद परिस्थितिजन्य साक्ष्य से यह प्रमाणित है कि दिनांक 3 सितम्बर, 2008 को रात्रि 10 बजे मंगल पेट्रोल पम्प के सामने एन. एच. 11 पर मृतक द्वारा टाटा-407 रजि. नं. आरजे-11/जी-0554 को चलाकर ले जाते समय ट्रक सं. आरजे-05/जी-1127 के सड़क के बीच में बिना इंडीकेटर जलाए एवं बिना वाहन के चारों ओर पत्थर लगाए लापरवाहीपूर्वक खड़ा करने से घटित दुर्घटना में सुरेश व कुलदीप की मृत्यु हो गई । जिसके लिए ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 के वाहन चालक द्वारा

गाड़ी को बिना पार्किंग लाईट जलाए एवं बिना सुरक्षा व्यवस्था के तथा पत्थर नहीं लगाने के कारण दुर्घटना घटित होने से इस दुर्घटना के लिए ट्रक संख्या आरजे-05/जी-1127 के वाहन स्वामी, चालक तथा बीमा कम्पनी अप्रार्थी संख्या 1 लगायत 3 संयुक्त रूप से एवं पृथक्-पृथक् रूप से उत्तरदायी माने जाएंगे ।

जहां तक दुर्घटना में लिप्त वाहन संख्या आरजे-11/जी-0554 को दुर्घटना के लिए उत्तरदायी माने जाने का प्रश्न है, उपरोक्त विवेचन के अनुसार उक्त ट्रक के चालक की दुर्घटना में कोई लापरवाही या गलती होना नहीं पाया गया है इसलिए उक्त वाहन की बीमा कम्पनी अप्रार्थी सं. 4 व अप्रार्थी सं. 5 को दुर्घटना के उत्तरदायित्व से मुक्त किया जाना न्यायोचित प्रतीत होता है । अतः इस विवाद्यक का निर्णय इस प्रकार प्रार्थीगण के पक्ष में तथा अप्रार्थी अनावेदक संख्या 1 लगायत 3 के विरुद्ध किया जाता है ।"

6. मैंने उभयपक्ष के विद्वान् अधिवक्तागण के तर्कों पर मनन किया । अपीलाधीन निर्णय का ध्यानपूर्वक अवलोकन किया । अपीलाधीन निर्णय का अवलोकन करने के उपरान्त मैं अपीलार्थी की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों अपीलें में बल नहीं पाता हूं । मेरे विनम्र मत में विद्वान् अधिकरण का निर्णय पूर्णतया विधिसम्मत है, जिसमें हस्तक्षेप किए जाने का कोई आधार नहीं है ।

7. अतः अपीलार्थी यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड की ओर से प्रस्तुत उपरोक्त वर्णित दोनों सिविल विविध अपीलें निरस्त की जाती हैं । मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण एवं विशेष न्यायाधीश (डकैती प्रभावित क्षेत्र), धौलपुर द्वारा पारित निर्णय दिनांक 24 मई, 2011 की पुष्टि की जाती है । दोनों अपीलों के साथ संलग्न स्थगन प्रार्थनापत्र भी निरस्त किया जाता है ।

अपीलें खारिज की गईं।

मही./मह.

हिमाचल ग्राम शिक्षा सोसाइटी, बिनौला

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 4 अगस्त, 2010

न्यायमूर्ति सुरजीत सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 – नर्सिंग प्रशिक्षण संस्थान – स्थापना के लिए मंजूरी – राज्य में जी. एन. एम. पाठ्यक्रम और बी. एस. सी. नर्सिंग पाठ्यक्रमों के स्थापन के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों/मानदंडों के अनुरूप ही अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया जा सकता है ।

याची एक सोसाइटी है, जिसका ग्राम बिनौला में एक भवन है । जिसमें 41,069 वर्ग फुट क्षेत्र निर्मित है । इस भवन का निर्माण 4.3 एकड़ के भू-खंड पर किया गया है । इसका निर्माण सामान्य नर्सिंग कोर्स जैसे पाठ्यक्रमों को चलाने के लिए किया गया था । याची ने इस भवन में नर्सिंग संस्थान स्थापित करने के लिए और अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी करने के लिए आवेदन किया था । तारीख 4 अगस्त, 2007 के पत्र द्वारा अनापत्ति प्रमाणपत्र प्रति उपाबंध पी-3 जारी किया गया था । याची के पक्ष में जारी किए गए अनापत्ति प्रमाणपत्र पर कतिपय व्यक्तियों द्वारा इस न्यायालय में रिट याचिकाएं फाइल करके आक्षेप किया गया था । राज्य ने उस रिट याचिका में उत्तर फाइल किया था, उस रिट याचिका की सुनवाई के दौरान यह कथन किया गया था कि नर्सिंग पाठ्यक्रम चलाने वाले सभी संस्थानों को जारी किए गए अनापत्ति प्रमाणपत्र वापस ले लिए जाएंगे और अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी करने के नए मार्गदर्शक सिद्धांत तथा मानदंड जारी किए जाएंगे । उपरोक्त कथन को ध्यान में रखते हुए रिट याचिकाओं का निपटान कर दिया गया था । जिसके कारण याची को जारी किया गया अनापत्ति प्रमाणपत्र प्रत्याहृत कर लिया गया था । जिससे व्यथित होकर यह रिट याचिका फाइल की गई । रिट याचिका तद्नुसार निपटाते हुए,

अभिनिर्धारित – तारीख 31 जनवरी, 2009 की निरीक्षण रिपोर्ट प्रति उपाबंध पी-21 से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं. 4 की भूमि का क्षेत्र और

निर्मित क्षेत्र सघन नहीं है । रिपोर्ट के अनुसार निर्मित क्षेत्र 78,612 वर्ग फुट है, जिसमें 18 विभिन्न भवन हैं जो एक भवन या भवन के एक ब्लाक में न होकर विभिन्न स्थानों पर हैं और ये भवन एक ही भू-खंड पर भी स्थित नहीं हैं और इसका यह अर्थ है कि रिपोर्ट में दर्शित किया गया 8.3 एकड़ क्षेत्र अलग-अलग भू-खंड पर समाहित है जो विभिन्न स्थानों पर और विभिन्न गांवों में स्थित हैं । उपाबंध आर-1 से भी यह प्रतीत होता है कि भूमि एक भाग में होनी चाहिए और संपूर्ण निर्मित क्षेत्र उसी भूमि पर होना चाहिए । वस्तुतः मार्गदर्शक सिद्धांतों/मानदंडों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली के अनुसार "भूमि" और "भवन" शब्दों का अंतर्निहित अर्थ संपूर्ण भूमि क्षेत्र के एक भाग से और उस भू-खंड पर निर्मित क्षेत्र से है । प्रत्यर्थी सं. 4 के मामले में ऐसा नहीं है । उपरोक्त वर्णित स्थिति को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 के पक्ष को अनापत्ति प्रमाणपत्र/आवश्यकता प्रमाणपत्र मंजूर करने की कार्रवाई की पुष्टि नहीं की जा सकती क्योंकि यह उनके अपने मार्गदर्शक सिद्धांतों और मानदंडों उपाबंध आर-1 के भी विरुद्ध है । अतः तारीख 28 जनवरी, 2009 का पत्र उपाबंध पी-17 जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को आवश्यकता और साध्यता प्रमाणपत्र/अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया गया है, अभिखंडित किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 को यह निदेश दिया जाता है कि वे उपाबंध आर-1 में विहित अपने मार्गदर्शक सिद्धांतों और मानदंडों तथा ऊपर किए गए संप्रेक्षण को ध्यान में रखते हुए मामले की पुनः परीक्षा करें । वे याची या प्रत्यर्थी सं. 4 या उनके काउंसेल द्वारा मुख्य सचिव (स्वास्थ्य) को इस आदेश की प्रति प्रस्तुत किए जाने के 15 दिन के भीतर अंतिम निर्णय लेंगे और प्रत्यर्थी सं. 4 के संस्थान में जी. एन. एम. और बी. एस. सी. नर्सिंग पाठ्यक्रमों में अंतिम निर्णय तक प्रवेश अनुज्ञात नहीं किए जाएंगे । विनिश्चय उपरोक्त निदेशों के अनुरूप लिया जाएगा । (पैरा 8 और 9)

आरम्भिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2009 की सी. डब्ल्यू. सी. सं. 359.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से — श्री जे. एल. भारद्वाज, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 की ओर से — श्री रमेश ठाकुर, सहायक महाधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 4 की ओर से श्री अजय मोहन गोयल, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 5 की ओर से श्री रविन्दर ठाकुर, अधिवक्ता

न्यायमूर्ति सुरजीत सिंह – याची एक सोसाइटी है, जिसका ग्राम बिनौला में एक भवन है । जिसमें 41,069 वर्ग फुट क्षेत्र निर्मित है । इस भवन का निर्माण 4.3 एकड़ के भू-खंड पर किया गया है । इसका निर्माण सामान्य नर्सिंग कोर्स जैसे पाठ्यक्रमों को चलाने के लिए किया गया था । याची ने इस भवन में नर्सिंग संस्थान स्थापित करने के लिए और अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी करने के लिए आवेदन किया था । तारीख 4 अगस्त, 2007 के पत्र द्वारा अनापत्ति प्रमाणपत्र प्रति उपाबंध पी-3 जारी किया गया था । याची के पक्ष में जारी किए गए अनापत्ति प्रमाणपत्र पर कतिपय व्यक्तियों द्वारा इस न्यायालय में रिट याचिकाएं फाइल करके आक्षेप किया गया था । राज्य ने उस रिट याचिका में उत्तर फाइल किया था, उस रिट याचिका की सुनवाई के दौरान यह कथन किया गया था कि नर्सिंग पाठ्यक्रम चलाने वाले सभी संस्थानों को जारी किए गए अनापत्ति प्रमाणपत्र वापस ले लिए जाएंगे और अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी करने के नए मार्गदर्शक सिद्धांत तथा मानदंड जारी किए जाएंगे । उपरोक्त कथन को ध्यान में रखते हुए रिट याचिकाओं का निपटान कर दिया गया था । जिसके कारण याची को जारी किया गया अनापत्ति प्रमाणपत्र प्रत्याहृत कर लिया गया था ।

2. तत्पश्चात्, तारीख 7 जून, 2008 को जारी अधिसूचना द्वारा नए मार्गदर्शक सिद्धांत/मानदंड, प्रति उपाबंध पी-7 अधिकथित किए गए थे । तारीख 27 जून, 2008 को समाचारपत्र में एक विज्ञापन, प्रति उपाबंध पी-8, जी. एन. एम. और बी. एस. सी. नर्सिंग संस्थानों को स्थापित करने के लिए प्रस्थापना आवेदन आमंत्रित किए गए थे । ऐसा ही एक संस्थान बिलासपुर जिले के क्षेत्र में स्थापित किया जाना आशयित था और इस संस्थान का जोनल चिकित्सालय, बिलासपुर तथा प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र घुमरविन, पंजगेन और नमहोल से सहबद्ध किया जाना था । नर्सिंग प्रशिक्षण संस्थान स्थापित करने के लिए सात आवेदक थे । याची और प्रत्यर्थी सं. 4 उन आवेदकों में थे । उन भवनों का जिनमें याची, प्रत्यर्थी सं. 4 और अन्य आवेदकों द्वारा पाठ्यक्रम संचालित किए जाने थे, तारीख 27 सितम्बर, 2008 को निरीक्षण किया गया था । निरीक्षण के दौरान यह पाया गया कि

याची के पास 4.3 एकड़ का एक भू-खंड था जिसमें 41,069 वर्ग फुट क्षेत्र में भवन का निर्माण किया गया था ।

3. उसी दिन या उसके पास के दिनों में प्रत्यर्थी सं. 4 और अन्य आवेदकों के परिसरों का निरीक्षण किया गया था । तत्पश्चात् याची और प्रत्यर्थी सं. 4 को तारीख 3 जनवरी, 2009 तक अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किए जाने के लिए दावे के समर्थन में अतिरिक्त दस्तावेज/सूचना प्रस्तुत करना अनुज्ञात किया गया था । प्रत्यर्थी सं. 4 ने उपरोक्त तारीख के अवसान के पश्चात् अतिरिक्त दस्तावेज/सूचना प्रस्तुत की थी । ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्यर्थी सं. 4 ने तारीख 21 जनवरी, 2009 के आस-पास अपने दस्तावेज प्रस्तुत किए थे ।

4. तारीख 23 जनवरी, 2009 को याची और प्रत्यर्थी सं. 4 के परिसरों का पुनः निरीक्षण किया गया था । प्रत्यर्थी के अधिभोग में 8.30 एकड़ भूमि तथा 72,000 वर्ग फुट क्षेत्र नर्सिंग संस्थान संचालित किए जाने के लिए उपलब्ध होना ज्ञापित किया गया था । मामला निदेशक स्तर की मूल्यांकन समिति के समक्ष प्रस्तुत किया गया था और उक्त समिति ने अपनी रिपोर्ट उपाबंध आर-1 द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 के पक्ष में अनापत्ति प्रमाणपत्र देने की सिफारिश की थी । उपरोक्त रिपोर्ट के आधार पर प्रत्यर्थी सं. 4 के पक्ष में सरकार द्वारा, जो कि प्रत्यर्थी सं. 1 है, तारीख 28 जनवरी, 2009 को उपाबंध पी-17 द्वारा अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया गया था ।

5. याची की दलील यह है कि प्रत्यर्थी सं. 4 के अधिभोग में तारीख 23 जनवरी, 2009 की रिपोर्ट उपाबंध पी-21 में दर्शाया गया क्षेत्र नहीं है । याची का यह भी अभिकथन है कि प्रत्यर्थी सं. 4 के परिसर में एक अन्य संस्थान, अर्थात् एक विद्यालय भी चलाया जा रहा है जबकि नए मार्गदर्शक सिद्धांत/मानदंड यह उपबंध करते हैं कि उस पक्षकार को प्राथमिकता दी जाएगी जिसके परिसर में कोई अन्य संस्थान नहीं चलाया जा रहा है । यह भी अभिकथित किया गया है कि विज्ञापन के अनुसार प्रस्तावित संस्थान और अस्पताल/प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, जिससे प्रस्तावित संस्थान जुड़ा हुआ है, के बीच का अंतर 30 कि. मी. से अधिक नहीं होना चाहिए, जबकि प्रत्यर्थी सं. 4 के परिसरों में ऐसे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र से 30 कि. मी. से अधिक का अंतर है । यह भी अभिकथित किया गया है कि जब तारीख 3

जनवरी, 2009 तक अतिरिक्त दस्तावेज/सूचना प्रस्तुत की जानी थी और प्रत्यर्थी सं. 4 नियत समय के भीतर कोई दस्तावेज/सूचना प्रस्तुत नहीं कर सका था तो उसे तारीख 21 जनवरी, 2009 को या उसके पश्चात् दस्तावेज/सूचना प्रस्तुत करने की मंजूरी नहीं दी जानी चाहिए थी । प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा प्रस्तुत किए गए दस्तावेज बनावटी हैं ।

6. प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 की ओर से (संयुक्त रूप से) और प्रत्यर्थी सं. 4 की ओर से उत्तर फाइल किए गए हैं । प्रत्यर्थी सं. 5 जो कि भारतीय नर्सिंग परिषद् है, ने अलग से उत्तर फाइल किया है । प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा यह अभिवाक् किया गया है कि चूंकि उसको उपलब्ध क्षेत्र और निर्मित क्षेत्र याची की भूमि के क्षेत्र और निर्मित क्षेत्र की तुलना में अधिक है इसलिए, उसे ठीक ही अनापत्ति प्रमाणपत्र और जी. एन. एम. नर्सिंग पाठ्यक्रम संचालित करने की मंजूरी दी गई है । प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 ने भी ऐसा ही आधार लिया है । यह प्रत्याख्यान किया गया है कि ऐसे चार परिसर की जहां नर्सिंग पाठ्यक्रम संचालित किए जाने हैं, सरकारी अस्पतालों से तीन की दूरी 30 कि. मी. से अधिक है । यह कहा गया है कि केवल एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, अर्थात् नमहोल, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र जिसमें कि केवल छह बिस्तर हैं, की दूरी 30 कि. मी. से कुछ ज्यादा है ।

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

8. तारीख 31 जनवरी, 2009 की निरीक्षण रिपोर्ट प्रति उपाबंध पी-21 से यह स्पष्ट है कि प्रत्यर्थी सं. 4 की भूमि का क्षेत्र और निर्मित क्षेत्र सघन नहीं है । रिपोर्ट के अनुसार निर्मित क्षेत्र 78,612 वर्ग फुट है, जिसमें 18 विभिन्न भवन हैं जो एक भवन या भवन के एक ब्लाक में न होकर विभिन्न स्थानों पर हैं और ये भवन एक ही भू-खंड पर भी स्थित नहीं हैं और इसका यह अर्थ है कि रिपोर्ट में दर्शित किया गया 8.3 एकड़ क्षेत्र अलग-अलग भू-खंड पर समाहित है जो विभिन्न स्थानों पर और विभिन्न गांवों में स्थित हैं । उपाबंध आर-1 से भी यह प्रतीत होता है कि भूमि एक भाग में होनी चाहिए और संपूर्ण निर्मित क्षेत्र उसी भूमि पर होना चाहिए । वस्तुतः मार्गदर्शक सिद्धांतों/मानदंडों में प्रयुक्त पारिभाषिक शब्दावली के अनुसार "भूमि" और "भवन" शब्दों का अंतर्निहित अर्थ संपूर्ण भूमि क्षेत्र के एक भाग

से और उस भू-खंड पर निर्मित क्षेत्र से है । प्रत्यर्थी सं. 4 के मामले में ऐसा नहीं है ।

9. उपरोक्त वर्णित स्थिति को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 के पक्ष को अनापत्ति प्रमाणपत्र/आवश्यकता प्रमाणपत्र मंजूर करने की कार्रवाई की पुष्टि नहीं की जा सकती क्योंकि यह उनके अपने मार्गदर्शक सिद्धांतों और मानदंडों उपाबंध आर-1 के भी विरुद्ध है । अतः तारीख 28 जनवरी, 2009 का पत्र उपाबंध पी-17 जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 को आवश्यकता और साध्यता प्रमाणपत्र/अनापत्ति प्रमाणपत्र जारी किया गया है, अभिखंडित किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 1 से 3 को यह निदेश दिया जाता है कि वे उपाबंध आर-1 में विहित अपने मार्गदर्शक सिद्धांतों और मानदंडों तथा ऊपर किए गए संप्रेक्षण को ध्यान में रखते हुए मामले की पुनः परीक्षा करें । वे याची या प्रत्यर्थी सं. 4 या उनके काउंसेल द्वारा मुख्य सचिव (स्वास्थ्य) को इस आदेश की प्रति प्रस्तुत किए जाने के 15 दिन के भीतर अंतिम निर्णय लेंगे और प्रत्यर्थी सं. 4 के संस्थान में जी. एन. एम. और बी. एस. सी. नर्सिंग पाठ्यक्रमों में अंतिम निर्णय तक प्रवेश अनुज्ञात नहीं किए जाएंगे । विनिश्चय उपरोक्त निदेशों के अनुरूप लिया जाएगा ।

10. यह दलील दी गई है कि पिछले वर्ष, अभिखंडित सूचना उपाबंध पी-17 के आधार पर जी. एन. एम. पाठ्यक्रम में 40 छात्रों को प्रवेश दिया गया था । यह निदेश दिया जाता है कि अभिखंडित उपाबंध पी-17 का उन छात्रों पर प्रभाव नहीं पड़ेगा जो पहले ही प्रत्यर्थी सं. 4 के संस्थान में जी. एन. एम. पाठ्यक्रम में प्रवेश ले चुके हैं और उन्हें प्रशिक्षण पाठ्यक्रम पूरा करने की मंजूरी दी जाएगी । तद्नुसार, उपरोक्त रीति में रिट याचिका का निपटान किया जाता है ।

रिट याचिका तद्नुसार निपटाई गई ।

भट./मह.

एच. एम. स्टील लिमिटेड (मैसर्स)

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 5 अगस्त, 2010

न्यायमूर्ति सुरजीत सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित वित्तीय नियम, 1971 – परिशिष्ट 10 और नियम 15.2] – सरकार द्वारा जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु निविदाएं आमंत्रित किया जाना – याची द्वारा कम प्रस्थापना करने पर भी मध्य स्तर के उद्योग के आधार पर अधिमान दिए जाने का दावा करना – अधिमान दिए जाने से संबंधित नियम निरसित करके नए नियम जारी किया जाना – याची इस आधार पर अधिमान का दावा नहीं कर सकता – तथापि, प्रत्यर्थियों को याची को दिए गए आश्वासन के आधार पर पुनः विचार करने के लिए आदेश किया जा सकता है ।

सरकार द्वारा जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए निविदाएं आमंत्रित की गई थीं । मुख्य अभियंता द्वारा याची के हक में सिफारिश किए जाने के बावजूद उसे आर्डर नहीं दिए गए जिससे व्यथित होकर याची ने यह सिविल रिट याचिका फाइल की । रिट याचिका का तद्नुसार निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – पक्षकारों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि याची द्वारा कोट की गई दर न्यूनतम नहीं थी । इतना ही नहीं, यह 13वीं न्यूनतम दर थी । प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 द्वारा कोट की गई दरें, याची द्वारा कोट की गई दरों से कम थीं । तथापि, निविदाएं प्रस्तुत करने और उन्हें खोलने के पश्चात् याची ने एक पत्र (तारीख 12 नवम्बर, 2009, उपाबंध पी-12) लिखा था । पत्र में यह कहा गया था कि याची की फर्म हिमाचल में स्थित है, यह मध्यम स्तर के उद्योगों के अधीन मूल्य के अधिमान हेतु अर्हित है, अन्य फर्मों से इसकी दरें अधिक होने पर भी उसके प्रस्ताव पर विचार किया जाना चाहिए । उपरोक्त पत्र, प्रति उपाबंध पी-12 के माध्यम से याची के प्रतिनिधियों को बातचीत के लिए बुलाया गया था । उपरोक्त पत्र के माध्यम से हुई चर्चा में याची ने भाग लिया था और उसने 4480 एम.

टी., जी. आई. पाइपों की प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा दी गई न्यूनतम दर पर आपूर्ति का प्रस्ताव किया था । मुख्य अभियंता ने यह सिफारिश की थी कि याची से 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति की मांग की जाए । उपाबंध पी-17 में याची द्वारा प्रस्तावित मात्रा से कम की आपूर्ति के कारण दिए गए हैं और वे ये हैं कि याची के पास उतनी मात्रा में उत्पादन करने की क्षमता नहीं है जितनी कि उसने प्रस्तावित की थी, क्योंकि स्टील अथार्टी आफ इंडिया लि. के साथ हुए करार के अनुसार, सेल के साथ उसके द्वारा हस्ताक्षरित सहमति के ज्ञापन के आधार पर, उसके पास कुल 1200 एम. टी. कच्चा माल ही था । 2009 के नियमों के तारीख 13 अगस्त, 2009 से लागू होने पर, 1971 के वित्तीय नियम निरसित हो गए थे । निविदाएं आमंत्रित करने की सूचना तारीख 19 अगस्त, 2009 को या यह कहा जा सकता है कि 1971 के नियमों को निरसित होने के पश्चात् प्रकाशित हुई थी, जिसका याची द्वारा अवलंब लिया गया है । निःसंदेह, 1971 के नियमों का नियम 15.2 (निरसित नियम) यह उपबंध करता है कि क्रय उपरोक्त 1971 के नियमों के परिशिष्ट 10 में अंतर्विष्ट भण्डार नियमों के अनुसार किया जाएगा । किन्तु न्यायालय का यह मत है कि परिशिष्ट 10 में अंतर्विष्ट भंडार नियम, वित्तीय नियम, 2009 के नियम 194 के निरसन खंड के आधार पर विद्यमान नहीं रह गए हैं । 2009 के नियमों के उपनियम (2) द्वारा प्ररूपों, अनुदेशों, अधिसूचनाओं, कार्यालय आदेशों, परिपत्रों, पत्रों कार्यालय ज्ञापनों, प्रत्यायोजनों, स्पष्टीकरणों, निर्देशिकाओं या निरसित नियमों के अधीन जारी या बनाए गए किसी प्रकार के अन्य पत्राचार, उस सीमा तक, जहां तक वह 2009 के नियमों से असंगत न हों, व्यावृत्त हैं । 1971 के नियमों के मुख्य भाग के परिशिष्ट 10 के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह 2009 के नियमों के नियम 194 द्वारा व्यावृत्त हैं । अतः याची यह नहीं कह सकता कि वह हिमाचल प्रदेश के वित्तीय नियम, 1971 के भाग-2 के परिशिष्ट 10 में अंतर्निहित भंडार नियमों के आधार पर हिमाचल प्रदेश क्षेत्र में उसकी निर्माण इकाई स्थित होने के कारण उसे आपूर्ति करने के लिए अधिमान का अधिकार प्राप्त है । तथापि, यह तथ्य रह जाता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा याची को यह समझाया गया था कि परिशिष्ट 10 के सिद्धांत अभी भी लागू हैं जब उसने तारीख 18 नवम्बर, 2009 के पत्र प्रति पी-14 द्वारा उसके प्रतिनिधि को चर्चा के लिए आमंत्रित किया था । इससे याची की यह प्रत्याशा जागृत हो गई थी कि जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश उसे ही दिया जाएगा । वस्तुतः प्रत्यर्थी सं. 2 ने स्क्रीनिंग समिति को यह सिफारिश की

थी कि 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश याची को दिया जाए, जबकि समिति ने केवल 600 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश याची को देने का निर्णय लिया था । प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह भी सिफारिश की थी कि याची को 500 एम. टी. के जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए आदेश दिया जाए । यह सिफारिश अन्य फर्मों अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 तक को आपूर्ति के आदेश दिए जाने के लिए भी की गई थी । स्क्रीनिंग समिति ने यह निर्णय लिया था कि प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 को जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु आदेश दिया जाए, किन्तु याची को कोई आदेश नहीं दिया गया और न ही स्क्रीनिंग समिति द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिशों को स्वीकार न करने के लिए कोई कारण दिए गए थे । मामले की सुनवाई की पिछली तारीख को अभिलेख मंगाया गया था और प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिश संबंधी तथ्य और स्क्रीनिंग समिति का प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 को आदेश भेजने को निर्णय के संबंध में जो अभिलेख द्वारा एकत्रित जानकारी पर आधारित था, बताया गया था । उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, रिट याचिका, प्रत्यर्थी सं. 1 को यह निदेश देते हुए निपटाई जाती है कि वह 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 की प्रथम सिफारिश पर विचार करे और याची के पक्ष में की गई 500 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु आदेश पर भी विचार करे और आज से एक सप्ताह के भीतर मामला स्क्रीनिंग समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जाए और स्क्रीनिंग समिति यह मामला अपने समक्ष पेश किए जाने के 10 दिन के भीतर अंतिम निर्णय ले । (पैरा 8, 10, 12, 13, 14 और 15)

आरम्भिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2009 की सी. डब्ल्यू. सी. सं. 4540.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से — सर्वश्री जे. एस. भोगल, वरिष्ठ अधिवक्ता और सुनीत गोयल

प्रत्यर्थियों की ओर से — सर्वश्री अंकुश दाय सूद, रमेश ठाकुर, आर. एल. सूद, अर्जुन लाल और के. डी. सूद

न्यायमूर्ति सुरजीत सिंह – याची मुख्य अभियंता, सिंचाई और लोक स्वास्थ्य विभाग, प्रत्यर्थी सं. 2 के तारीख 26 नवम्बर, 2009 के पत्र, प्रति

उपाबंध पी-17 से व्यथित हुआ है, जिसमें यह सिफारिश की गई थी कि याची को सीमित मात्रा में केवल 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए ही आदेश दिए जाएंगे, जबकि निविदा के अनुसार 4400 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए निविदा आमंत्रित की गई थी । याची के अनुसार उसकी हिमाचल प्रदेश के काला अम्ब में एक निर्माण इकाई है और वित्तीय नियम, 1971, विशेष रूप से परिशिष्ट 10 के अनुसार हिमाचल प्रदेश की निर्माण इकाइयों को उनके द्वारा निर्मित किए गए माल की आपूर्ति के मामले में अधिमान दिया जाएगा और कम से कम 30 प्रतिशत माल ऐसी इकाइयों से क्रय किया जाएगा ।

2. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 अर्थात् हिमाचल प्रदेश राज्य और मुख्य अभियंता ने याचिका का विरोध किया है । उनके अनुसार वित्तीय नियम, 1971 उन नियमों के परिशिष्ट 10 के साथ 2009 के नियमों द्वारा, जो कि तारीख 13 अगस्त, 2009 से प्रवृत्त हुए हैं, निरसित कर दिए गए हैं अर्थात् निविदाएं आमंत्रित करने की सूचना की तारीख से पूर्व ही निरसित कर दिए गए हैं और इसलिए याची वित्तीय नियम, 1971 विशेष रूप से परिशिष्ट 10 के इन नियमों के बल पर कोई अनुतोष पाने का हकदार नहीं है ।

3. याचिका के लम्बित रहने के दौरान, याची सहित विभिन्न लोगों को जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए आदेश दिए गए थे । याची को जी. आई. पाइपों के 600 एम. टी. आपूर्ति हेतु आदेश दिया गया था, क्योंकि स्क्रीनिंग समिति ने मुख्य अभियंता की सिफारिश उपाबंध पी-17 के बावजूद यह निर्णय लिया था कि याची को 600 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश दिया जाए ।

4. याची ने प्रत्युत्तर फाइल किया था जिसमें उसने यह कहा था कि 1971 के नियमों के परिशिष्ट 10 के मार्गदर्शक सिद्धांत पूर्णतया लागू थे और इसलिए वह (याची) आपूर्ति के आदेश दिए जाने के मामले में अधिमान पाने का हकदार है ।

5. प्रत्युत्तर फाइल किए जाने के उपरान्त मुख्य अभियंता ने स्क्रीनिंग समिति को एक और सिफारिश की थी जिसमें कतिपय आपूर्तिकर्ताओं को, जिनके याची सहित प्रस्ताव स्वीकार किए गए थे, अतिरिक्त आपूर्ति किए जाने के आदेश दिए जाने का उल्लेख किया गया था । इनमें याची का नाम भी सम्मिलित किया गया था और यह सिफारिश की गई थी कि उन्हें

500 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के आदेश दिए जाएं । तथापि, स्क्रीनिंग समिति ने याची को आपूर्ति का कोई भी आदेश नहीं दिया । अन्य आपूर्तिकर्ताओं को आदेश दिए गए थे ।

6. सुनवाई के समय प्रार्थना किए जाने पर न्यायालय ने निदेश दिया कि यदि याची यह चाहता है कि उसे भी अन्य आपूर्तिकर्ताओं के साथ जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए आदेश दिए जाएं तो अन्य आपूर्तिकर्ताओं को भी रिट याचिका में पक्षकार बनाया जाए । परिणामस्वरूप प्रत्यर्थी सं. 3 से प्रत्यर्थी सं. 8 को भी पक्षकार बनाया गया था ।

7. मैंने पक्षकारों के काउंसेलों को सुना और अभिलेख तथा संबद्ध नियमों का परिशीलन किया ।

8. पक्षकारों का यह स्वीकृत पक्षकथन है कि याची द्वारा कोट की गई दर न्यूनतम नहीं थी । इतना ही नहीं, यह 13वीं न्यूनतम दर थी । प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 द्वारा कोट की गई दरें, याची द्वारा कोट की गई दरों से कम थीं । तथापि, निविदाएं प्रस्तुत करने और उन्हें खोलने के पश्चात् याची ने एक पत्र (तारीख 12 नवम्बर, 2009, उपाबंध पी-12) लिखा था । पत्र में यह कहा गया था कि याची की फर्म हिमाचल में स्थित है, यह मध्यम स्तर के उद्योगों के अधीन मूल्य के अधिमान हेतु अर्हित है, अन्य फर्मों से इसकी दरें अधिक होने पर भी उसके प्रस्ताव पर विचार किया जाना चाहिए । उपरोक्त पत्र, प्रति उपाबंध पी-12 के माध्यम से याची के प्रतिनिधियों को बातचीत के लिए बुलाया गया था । उपरोक्त पत्र के माध्यम से हुई चर्चा में याची ने भाग लिया था और उसने 4480 एम. टी., जी. आई. पाइपों की प्रत्यर्थी सं. 3 द्वारा दी गई न्यूनतम दर पर आपूर्ति का प्रस्ताव किया था । मुख्य अभियंता ने यह सिफारिश की थी कि याची से 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति की मांग की जाए । उपाबंध पी-17 में याची द्वारा प्रस्तावित मात्रा से कम की आपूर्ति के कारण दिए गए हैं और वे यह हैं कि याची के पास उतनी मात्रा में उत्पादन करने की क्षमता नहीं है जितनी कि उसने प्रस्तावित की थी, क्योंकि स्टील अथार्टी आफ इंडिया लि. के साथ हुए करार के अनुसार, सेल के साथ उसके द्वारा हस्ताक्षरित सहमति के ज्ञापन के आधार पर, उसके पास कुल 1200 एम. टी. कच्चा माल ही था ।

9. याची ने यह दलील दी है कि पूर्ववर्ती वर्षों में उसने प्रत्यर्थी सं. 2 को लगभग 4400 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति की थी और

इसलिए, मुख्य अभियंता द्वारा दिए गए आधार उचित प्रतीत नहीं होते हैं ।

10. 2009 के नियमों के तारीख 13 अगस्त, 2009 से लागू होने पर, 1971 के वित्तीय नियम निरसित हो गए थे । निविदाएं आमंत्रित करने की सूचना तारीख 19 अगस्त, 2009 को या यह कहा जा सकता है कि 1971 के नियमों को निरसित होने के पश्चात् प्रकाशित हुई थी, जिसका याची द्वारा अवलंब लिया गया है । निःसंदेह, 1971 के नियमों का नियम 15.2 (निरसित नियम) यह उपबंध करता है कि क्रय उपरोक्त 1971 के नियमों के परिशिष्ट 10 में अंतर्विष्ट भण्डार नियमों के अनुसार किया जाएगा, किन्तु मेरा यह मत है कि परिशिष्ट 10 में अंतर्विष्ट भंडार नियम, वित्तीय नियम, 2009 के नियम 194 के निरसन खंड के आधार पर विद्यमान नहीं रह गए हैं ।

11. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि 1971 के नियमों के परिशिष्ट 10 में अंतर्विष्ट भंडार नियम, 2009 के नियमों के नियम 194 के उप-नियम (2) द्वारा व्यावृत्त हो गए हैं जो इस प्रकार हैं :–

> "(2) ऐसे निरसन के होते हुए भी, कोई प्ररूप, अनुदेश, अधिसूचना, कार्यालय आदेश, परिपत्र, पत्र, कार्यालय ज्ञापन, प्रत्यायोजन, स्पष्टीकरण, संहिताएं, निर्देशिका या किसी भी प्रकार से किया गया कोई पत्राचार, जो कि इस प्रकार निरसित किए गए नियमों के अधीन जारी किया गया है, जहां तक वे इन नियमों से असंगत न हों, तब तक प्रवृत्त रहेंगे जब तक कि वे इन नियमों द्वारा अधिक्रमित न कर दिए गए हों :
>
> परन्तु इस प्रकार निरसित नियमों के उपबंधों के अधीन किया या की गई कोई कार्रवाई इन नियमों के तत्स्थानी उपबंधों के अधीन विधिमान्य रूप से की गई समझी जाएगी ।"

12. 2009 के नियमों के उपनियम (2) द्वारा प्ररूपों, अनुदेशों, अधिसूचनाओं, कार्यालय आदेशों, परिपत्रों, कार्यालय ज्ञापनों, प्रत्यायोजनों, स्पष्टीकरणों, निर्देशिकाओं या निरसित नियमों के अधीन जारी या बनाए गए किसी प्रकार के अन्य पत्राचार, उस सीमा तक, जहां तक वह 2009 के नियमों से असंगत न हों, व्यावृत्त हैं । 1971 के नियमों के मुख्य भाग के परिशिष्ट 10 के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कि यह 2009 के नियमों के नियम 194 द्वारा व्यावृत्त हैं । अतः याची यह नहीं कह

सकता कि वह हिमाचल प्रदेश के वित्तीय नियम, 1971 के भाग-2 के परिशिष्ट 10 में अंतर्निहित भंडार नियमों के आधार पर हिमाचल प्रदेश क्षेत्र में उसकी निर्माण इकाई स्थित होने के कारण उसे आपूर्ति करने के लिए अधिमान का अधिकार प्राप्त है ।

13. तथापि, यह तथ्य रह जाता है कि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा याची को यह समझाया गया था कि परिशिष्ट 10 के सिद्धांत अभी भी लागू हैं जब उसने तारीख 18 नवम्बर, 2009 के पत्र प्रति पी-14 द्वारा उसके प्रतिनिधि को चर्चा के लिए आमंत्रित किया था । इससे याची की यह प्रत्याशा जागृत हो गई थी कि जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश उसे ही दिया जाएगा । वस्तुतः प्रत्यर्थी सं. 2 ने स्क्रीनिंग समिति को यह सिफारिश की थी कि 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश याची को दिया जाए, जबकि समिति ने केवल 600 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति का आदेश याची को देने का निर्णय लिया था ।

14. प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह भी सिफारिश की थी कि याची को 500 एम. टी. के जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए आदेश दिया जाए । यह सिफारिश अन्य फर्मों अर्थात् प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 तक को आपूर्ति के आदेश दिए जाने के लिए भी की गई थी । स्क्रीनिंग समिति ने यह निर्णय लिया था कि प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 को जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु आदेश दिया जाए, किन्तु याची को कोई आदेश नहीं दिया गया और न ही स्क्रीनिंग समिति द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिशों को स्वीकार न करने के लिए कोई कारण दिए गए थे । मामले की सुनवाई की पिछली तारीख को अभिलेख मंगाया गया था और प्रत्यर्थी सं. 2 की सिफारिश संबंधी तथ्य और स्क्रीनिंग समिति का प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 को आदेश भेजने के निर्णय के संबंध में जो अभिलेख द्वारा एकत्रित जानकारी पर आधारित था, बताया गया था ।

15. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, प्रत्यर्थी सं. 1 को यह निदेश देते हुए रिट याचिका निपटाई जाती है कि वह 1200 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति के लिए प्रत्यर्थी सं. 2 की प्रथम सिफारिश पर विचार करे और याची के पक्ष में की गई 500 एम. टी., जी. आई. पाइपों की आपूर्ति हेतु आदेश पर भी विचार करे और आज से एक सप्ताह के भीतर मामला स्क्रीनिंग समिति के समक्ष प्रस्तुत किया जाए और स्क्रीनिंग समिति यह मामला अपने समक्ष पेश किए जाने के 10 दिन के भीतर अंतिम निर्णय ले ।

16. एतद्द्वारा दिए गए निदेश प्रत्यर्थी सं. 3 से 8 को पहले ही दिए जा चुके आपूर्ति के आदेशों पर प्रभाव नहीं डालेंगे क्योंकि मामले के अभिलेख से जिसका परिशीलन सुनवाई की पिछली तारीख को किया गया था, यह दर्शित होता है कि लगभग 900 एम. टी. के जी. आई. पाइपों का अभी भी क्रय किया जाना शेष है ।

17. तद्नुसार, रिट याचिका का निपटान किया जाता है । मुख्य याचिका के अंतिम निपटान को दृष्टिगत करते हुए पूर्व में किए गए अंतरिम आदेश प्रवर्तन में नहीं रहेंगे । लम्बित आवेदन, यदि कोई हों, निपटान किए गए समझे जाएंगे ।

18. इस आदेश की एक प्रति अपर महाधिवक्ता को दस्ती दी जाए और वह यह सुनिश्चित करेंगे कि प्रति सरकार के संबद्ध सचिव को अनुपालन हेतु किसी भी हाल में कल तक पहुंचा दी जाए ।

रिट याचिका का तद्नुसार निपटारा किया गया ।

भ./मह.

(2013) 1 सि. नि. प. 265 **हिमाचल प्रदेश**

संतोष शर्मा (श्रीमती)

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 18 जून, 2011

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 14, 16 और 226 [सपठित केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 का नियम 2(छ) और केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 का नियम 5] – रिट – केन्द्रीय सरकारी सेवक द्वारा जाली प्रमाणपत्रों के आधार पर कपट और दुर्व्यपदेशन द्वारा नियुक्ति प्राप्त करना – जांच के दौरान उसकी नियुक्ति का नियमितीकरण नहीं करके सेवा समाप्त करना – सेवक की मृत्यु होना – आश्रित कुटुम्ब सदस्यों द्वारा सेवक के उपदान, कुटुम्ब पेंशन आदि की

मांग करना – विभाग द्वारा इनकार करना – यदि अभिलेख पर के साक्ष्यों से यह साबित होता है कि सरकारी सेवक ने जाली प्रमाणपत्रों के आधार पर कपट और दुर्व्यपदेशन द्वारा नियुक्ति प्राप्त की है तो उसके द्वारा की गई सम्पूर्ण सेवाएं भी गलत और अवैध हो जाएंगी जिनके आधार पर उपदान, कुटुम्ब पेंशन आदि की मांग करना भी गलत, अवैध और अविधिमान्य होगा ।

वर्तमान मामले में, याची का पति डा. आर. पी. शर्मा ने तारीख 19 नवम्बर, 1977 को प्रत्यर्थी-विभाग में सेवा ग्रहण की थी । डा. आर. पी. शर्मा का कार्य और आचरण सभी प्रकार से अपने ज्येष्ठ प्राधिकारियों के सम्पूर्ण समाधानप्रद था किन्तु डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं नियमित नहीं की गई थीं । उन्होंने अपनी सेवाओं को नियमित करने के लिए सक्षम प्राधिकारियों को कई बार अभ्यावेदन दिया था किन्तु इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ था । डा. आर. पी. शर्मा आरम्भिक प्रक्रम पर तीन वर्षों के लिए संविदा आधार पर नियुक्त हुए थे किन्तु वे प्रत्यर्थी-विभाग की सेवा में 28 वर्षों से भी अधिक अवधि के लिए सेवा में बने रहे । डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं का नियमितीकरण का मामला पत्राचार के अधीन बना रहा । तारीख 31 अगस्त, 2001 को डा. आर. पी. शर्मा का मामला लोक सेवा आयोग के पास भेजा गया और उससे उनकी नियमितीकरण के लिए विचार करने की सिफारिश की गई । कार्मिक विभाग ने यह सलाह दी थी कि लोक सेवा आयोग की सलाह आवश्यक है । संसूचना में यह भी कथन किया गया कि यह अनुचित होगा यदि डा. आर. पी. शर्मा की सम्पूर्ण सेवा रद्द कर दी जाए । डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं के नियमितीकरण के बारे में मामला विभाग में पत्राचार के अधीन रहा । इसी बीच में, डा. आर. पी. शर्मा को तारीख 23 दिसम्बर, 2003 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया जिसमें यह अभिकथित था कि वह बिहार चिकित्सा परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है किन्तु जांच करने पर यह पाया गया कि डा. आर. पी. शर्मा, बिहार चिकित्सा परिषद् में रजिस्ट्रीकृत नहीं हैं, डा. आर. पी. शर्मा को एम. बी. बी. एस. डिग्री के साथ मूल प्रमाणपत्रों को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया । डा. आर. पी. शर्मा ने दिसम्बर, 2003 में सक्षम प्राधिकारी के पास अपेक्षित दस्तावेजों को भेजा और तारीख 1 जनवरी, 2004 की संसूचना द्वारा विभाग को भी संसूचित किया । डा. आर. पी. शर्मा ने पहले ही, तारीख 21 जून, 2002 को सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अपनी एम. बी. बी. एस. डिग्री प्रस्तुत कर चुका था । याची ने प्राधिकारियों के समक्ष कुटुम्ब पेंशन और अन्य फायदों को मंजूर करने के लिए अपने मामले को बार-बार

दोहराया और याची को जी. पी. एफ. निधि निर्मुक्त किया जाए । तथापि, उसे तारीख 17 अगस्त, 2004 की संसूचना द्वारा कुटुम्ब पेंशन कागजातों को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया किन्तु याची को पेंशन निर्मुक्त नहीं किया गया । इसके प्रतिकूल याची को तारीख 29 मार्च, 2004 की संसूचना द्वारा यह सूचित किया गया कि डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं तारीख 28 फरवरी, 2004 को समाप्त कर दी गई हैं । इससे व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका फाइल की गई । न्यायालय द्वारा याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – डा. आर. पी. शर्मा को तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन द्वारा संविदा आधार पर नियुक्त किया गया था । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में, यह कथन किया गया है कि नियुक्ति, अस्थायी सेवा नियम, 1965 द्वारा शासित नहीं होगी । डा. आर. पी. शर्मा तीन वर्षों के लिए नियुक्त हुआ था किन्तु किसी तरह से या अन्य कारणों से वह सेवा में निरन्तर बना रहा । यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन के पश्चात् कोई अन्य नियुक्ति पत्र, तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित अवधि समाप्त होने के पश्चात् डा. आर. पी. शर्मा के पक्ष में जारी किया गया था । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित अवधि के पश्चात् सेवा में डा. आर. पी. शर्मा का निरन्तर बने रहना तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित निबंधनों के अलावा अन्य निबंधन निर्मित नहीं हो सकते हैं । इस प्रकार, यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि डा. आर. पी. शर्मा तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उल्लिखित निबंधनों और शर्तों पर ही विभाग में निरन्तर सेवा करता रहा । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन के निबंधन और शर्त सं. VIII के अनुसार, केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति में लागू नहीं होते हैं, अतएव, उसकी सेवाएं केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 के नियम 5 का अवलंब लेते हुए समाप्त नहीं की जा सकती हैं । किन्तु, इससे किसी भी तरह से याची का मामला साबित नहीं होता है । डा. आर. पी. शर्मा विभाग में संविदा कर्मचारी के रूप में आत्महत्या करने तक, तारीख 1 मार्च, 2004 तक सेवा में निरन्तर बना रहा जिस तारीख को डा. आर. पी. शर्मा की मृत्यु को ध्यान में रखते हुए उसके संविदा नियोजन को समाप्त समझा जाएगा । याचिका में अन्तर्ग्रस्त महत्वपूर्ण प्रश्न डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति के बारे में है । पक्षकारों का सामान्य पक्षकथन यह है कि डा. आर. पी. शर्मा तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन द्वारा संविदा आधार पर नियुक्त हुआ था । यह अत्यधिक

आचर्श्यजनक है कि डा. आर. पी. शर्मा अपनी नियुक्ति के नियमितीकरण के लिए लोक सेवा आयोग का सामना किए बिना विभाग में 26 वर्षों से भी अधिक समय तक सेवा करता रहा, यद्यपि, तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में यह उपबंधित था कि उसे नियमित नियुक्ति के लिए लोक सेवा आयोग में आवेदन करना मंजूर किया जाएगा और चयन की दशा में प्रथम प्रयास में ही उसकी संविदा सेवा की सभी प्रयोजनों, जिसमें ज्येष्ठता सम्मिलित है, के लिए गणना की जाएगी । इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि क्यों डा. आर. पी. शर्मा ने अपनी सेवा के नियमितीकरण के लिए लोक सेवा आयोग का सामना नहीं किया । वह लोक सेवा आयोग का सामना किए बिना सरकार की शक्तियों का अवलंब लेते हुए अपनी सेवा का नियमितीकरण कराना चाहता था । लोक सेवा आयोग का सामना करने की डा. आर. पी. शर्मा की अनिच्छा उन तथ्यों जो बाद में प्रकट हुए, को ध्यान में रखते हुए बिना हेतुक का था । यह प्रतीत होता है कि उसे यह प्रत्याशा थी कि यदि वह लोक सेवा आयोग के माध्यम से नियमितीकरण के लिए प्रयास करेगा तो उसका पिटारा खुल जाएगा और वह संविदा आधार पर भी अपनी नियुक्ति बचा नहीं सकेगा । (पैरा 16 और 17)

अभिलेख पर यह आया है कि रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद्, पटना से तारीख 22 अक्तूबर, 2002 के पत्र द्वारा यह निवेदन किया गया था कि वह सत्यापित करें कि क्या डा. आर. पी. शर्मा वस्तुतः उक्त परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है । रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् ने तारीख 25 नवम्बर, 2003 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि अभिलेखों का सत्यापन करने पर यह पाया गया कि डा. राम प्रताप, पुत्र श्री ब्रह्मा नन्द, निवासी ग्राम चन्डी, जिला सोलन इस परिषद् में रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977 द्वारा रजिस्ट्रीकृत नहीं है । रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977, वही है जिसे याची ने फाइल किया है और अपनी दलील के समर्थन में यह अवलंब लिया है कि डा. आर. पी. शर्मा, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है । याची ने ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय द्वारा जारी एम. बी. बी. एस. की डिग्री अभिलेख पर रखी है यह दर्शित करते हुए कि राम प्रताप शर्मा (डा. आर. पी. शर्मा) वर्ष 1976 में दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय से अभिकथित तौर पर एम. बी. बी. एस. उत्तीर्ण की है । प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय ने तारीख 1 नवम्बर, 2004 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि उनके अभिलेखों के अनुसार डा. राम प्रताप शर्मा न तो उक्त मेडिकल कालेज में नामांकित हैं

न ही एम. बी. बी. एस. की अंतिम परीक्षा में उपस्थित हुआ था । याची ने प्रत्यर्थियों के आधार (दलील) का विरोध किया इस आधार पर कि प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज के तारीख 1 नवम्बर, 2004 के पत्र को अभिलेख पर नहीं रखा गया है । प्रत्यर्थियों के इस आधार पर अविश्वास करने का यह आधार नहीं है कि डा. आर. पी. शर्मा ने जाली दस्तावेजों के आधार पर नियोजन प्राप्त किया था । याची का आधार यह नहीं है कि प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) का तारीख 15 अक्तूबर, 2010 का शपथपत्र उन सामग्रियों के अनुसार नहीं है जो सरकार के पास हैं । याची ने प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज के विरुद्ध कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं की है जब उसे सरकार ने यह सूचित किया था कि डा. राम प्रताप शर्मा दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय में न तो नामांकित है न ही अंतिम एम. बी. बी. एस. परीक्षा में उपस्थित हुआ है । याची ने रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् के विरुद्ध भी कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं की है जिसने सरकार को यह सूचित किया था कि डा. राम प्रताप शर्मा इस परिषद् में रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977 के अधीन रजिस्ट्रीकृत नहीं है । विभाग ने डा. आर. पी. शर्मा को कारण बताओ नोटिस जारी किया था किन्तु कारण बताओ नोटिस का उत्तर देने के बजाय डा. आर. पी. शर्मा ने प्रत्यर्थियों द्वारा उठाए गए आधार पर आत्महत्या कर ली । प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) के विरुद्ध भी कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं है । (पैरा 18, 19 और 20)

डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति कपट और दुर्व्यपदेशन से दूषित थी और तथ्यों पर जिसकी जानकारी डा. आर. पी. शर्मा को थी, सत्य नहीं थी अपितु मिथ्या थी, इसलिए, डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं का कोई फायदा याची या डा. आर. पी. शर्मा को नहीं दिया जा सकता है । इन परिस्थितियों में, डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं के नियमितीकरण का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है । याची, विभाग से डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं के कारण कुटुम्ब पेंशन की हकदार नहीं है । इस प्रकार, किसी भी दृष्टिकोण से देखने पर याची का कोई मामला नहीं बनता है । (पैरा 26)

निर्दिष्ट निर्णय

पैरा

[2008] (2008) 4 एस. सी. सी. 612 :
भारत संघ बनाम **दत्ता रे पुत्र नामदेव मंडेकर और अन्य ;** 24

[2005] (2005) 7 एस. सी. सी. 605 :
भाऊराव दग्दू पारकर बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य ;** 22

[2005] (2005) 7 एस. सी. सी. 690 :
बैंक आफ इंडिया और एक अन्य बनाम **अविनाश डी. मांडिविकर और अन्य ;** 23

[1988] (1988) 2 एस. सी. सी. 18 :
शकुंतला देवी बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य ;** 15

[1956] (1956) 1 इलाहाबाद ई. आर. 341 :
लजरुस इस्टेट लिमिटेड बनाम **बिस्ले ।** 21

आरम्भिक (सिविल) अधिकारिता : 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 12087.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सुश्री रंजना परमार, अधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से सुश्री रूमा कौशिक, अपर महाधिवक्ता के साथ श्री जे. एस. राणा, सहायक महाधिवक्ता

प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से कोई नहीं

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – याची ने राज्य को यह निर्देश देने के लिए निवेदन किया है कि वह उसे उसके पति डा. आर. पी. शर्मा की मृत्यु की तारीख से कुटुम्ब पेंशन के साथ ही बकाया प्रदान करे । यह भी निवेदन किया गया है कि याची को अन्य सेवानिवृत्ति फायदों जैसे उपदान, छुट्टी नकदीकरण आदि को ब्याज सहित निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाए । वैकल्पिक रूप में, यह निवेदन किया गया है कि राज्य को यह निर्देश दिया जा सकता है कि वह याची को पेंशन फायदों को उपलब्ध कराने के लिए भूतलक्षी प्रभाव से डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं नियमित की जाएं और उसके पश्चात् याची को पेंशन फायदों को ब्याज सहित निर्मुक्त करने का आदेश दिया जा सकता है ।

2. संक्षेप में, तथ्य ये हैं कि याची का पति डा. आर. पी. शर्मा ने तारीख 19 नवम्बर, 1977 को प्रत्यर्थी-विभाग में सेवा ग्रहण की थी । डा. आर. पी. शर्मा का कार्य और आचरण सभी प्रकार से अपने ज्येष्ठ

प्राधिकारियों के सम्पूर्ण समाधानप्रद था किन्तु डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं नियमित नहीं की गई थीं । उन्होंने अपनी सेवाओं को नियमित करने के लिए सक्षम प्राधिकारियों को कई बार अभ्यावेदन दिया था किन्तु इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ था ।

3. डा. आर. पी. शर्मा आरम्भिक प्रक्रम पर तीन वर्षों के लिए संविदा आधार पर नियुक्त हुए थे किन्तु वे प्रत्यर्थी-विभाग की सेवा में 28 वर्षों से भी अधिक अवधि के लिए सेवा में बने रहे । डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं का नियमितीकरण का मामला पत्राचार के अधीन बना रहा । तारीख 31 अगस्त, 2001 को डा. आर. पी. शर्मा का मामला लोक सेवा आयोग के पास भेजा गया और उससे उनकी नियमितीकरण के लिए विचार करने की सिफारिश की गई । कार्मिक विभाग ने यह सलाह दी थी कि लोक सेवा आयोग की सलाह आवश्यक है । संसूचना में यह भी कथन किया गया कि यह अनुचित होगा यदि डा. आर. पी. शर्मा की सम्पूर्ण सेवा रद्द कर दी जाए ।

4. डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं के नियमितीकरण के बारे में मामला विभाग में पत्राचार के अधीन रहा । इसी बीच में, डा. आर. पी. शर्मा को तारीख 23 दिसम्बर, 2003 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया जिसमें यह अभिकथित था कि वह बिहार चिकित्सा परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है किन्तु जांच करने पर यह पाया गया कि डा. आर. पी. शर्मा, बिहार चिकित्सा परिषद् में रजिस्ट्रीकृत नहीं हैं, डा. आर. पी. शर्मा को एम. बी. बी. एस. डिग्री के साथ मूल प्रमाणपत्रों को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया । डा. आर. पी. शर्मा ने दिसम्बर, 2003 में सक्षम प्राधिकारी के पास अपेक्षित दस्तावेजों को भेजा और तारीख 1 जनवरी, 2004 की संसूचना द्वारा विभाग को भी संसूचित किया । डा. आर. पी. शर्मा ने पहले ही, तारीख 21 जून, 2002 को सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अपनी एम. बी. बी. एस. डिग्री प्रस्तुत कर चुका था ।

5. याची ने प्राधिकारियों के समक्ष कुटुम्ब पेंशन और अन्य फायदों को मंजूर करने के लिए अपने मामले को बार-बार दोहराया और याची को जी. पी. एफ. निधि निर्मुक्त किया जाए । तथापि, उसे तारीख 17 अगस्त, 2004 की संसूचना द्वारा कुटुम्ब पेंशन कागजातों को प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया किन्तु याची को पेंशन निर्मुक्त नहीं किया गया । इसके प्रतिकूल याची को तारीख 29 मार्च, 2004 की संसूचना द्वारा यह सूचित किया गया कि डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं तारीख 28 फरवरी, 2004 को समाप्त कर दी गई हैं ।

6. प्रत्यर्थियों द्वारा याचियों को कुटुंब पेंशन निर्मुक्त नहीं करने की कार्रवाई गलत, अवैध और संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14, 16 के विरुद्ध है । यह अभिकथित किया गया कि पेंशन आनुतोषिक नहीं है अपितु, यह सरकारी सेवक द्वारा विभाग में 10 वर्षों से भी अधिक सेवा करने के पश्चात् अर्जित धन है । याची को यह विश्वास था कि कुटुम्ब पेंशन याची को इस आधार पर इनकार किया गया है कि डा. आर. पी. शर्मा विभाग में संविदा आधार पर कार्य कर रहे थे । यह अभिकथित किया गया कि संविदा नियुक्ति अस्थायी सेवा है और उसकी पेंशन फायदों के प्रयोजन के लिए भी गणना की जाती है । याची के पति की अस्थायी सेवा पेंशन फायदों के लिए अर्हक सेवा के रूप में मान्यताप्राप्त है, इसलिए, याची विभाग में डा. आर. पी. शर्मा द्वारा किए गए 26 वर्षों की सेवा की एवज में कुटुंब पेंशन प्राप्त करने की हकदार है ।

7. यह अभिकथित किया गया कि डा. आर. पी. शर्मा ने 26 वर्षों से अधिक सेवा की थी किन्तु उन्हें नियमित नहीं किया गया था जिसके परिणामस्वरूप डा. आर. पी. शर्मा के साथ शाश्वत अन्याय हुआ और तत्पश्चात् याची के साथ शाश्वत अन्याय हुआ है । यह अभिकथित किया गया कि डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं का नियमितिकरण मात्र कागजी कार्रवाई अपेक्षित थी जिसे डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं को भूतलक्षी प्रभाव देते हुए किया जा सकता था ।

8. डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं की समाप्ति से पेंशन फायदों को मंजूर करना वर्जित नहीं होता है । याची कुटुम्ब पेंशन के साथ ही अन्य फायदों को पाने की हकदार है जो डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं से बनता है । अस्थायी/स्थायीवत् सरकारी सेवक और उनका कुटुम्ब उन्हीं वेतनमान पर कुटुम्ब पेंशन और उपदान मंजूर करने के लिए अर्ह है जो स्थायी सरकारी सेवक को केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के अधीन ग्राह्य है ।

9. प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने संयुक्त उत्तर फाइल करते हुए, याचिका का विरोध किया जिसमें उन्होंने प्रारम्भिक आक्षेप यह उठाया कि याची को याचिका फाइल करने के लिए सुने जाने का अधिकार नहीं है । याची के पति को तारीख 14 नवम्बर, 1977 (तारीख 11 नवम्बर, 1977) के ज्ञापन द्वारा संविदा आधार पर जी. डी. ओ., ग्रेड-II के रूप में नियुक्ति की प्रस्थापना की गई थी । उसने तारीख 28 फरवरी, 2004 तक संविदा आधार पर अपने कर्तव्यों का निरन्तर अनुपालन किया । जब डा. आर. पी.

शर्मा की सेवाएं एक जांच करने के पश्चात् समाप्त कर दी गई थीं जिससे यह प्रतीत होता है कि उसने ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर, दरभंगा से एम. बी. बी. एस. डिग्री का जाली प्रमाणपत्र प्राप्त किया था । इन परिस्थितियों में, डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं की समाप्ति के कारण याची को कोई पेंशन फायदा मंजूर नहीं किया जा सकता है । डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं अवैध थीं ।

10. गुणागुणों पर, यह कथन किया गया है कि डा. आर. पी. शर्मा नियमित आधार पर नियुक्त नहीं हुआ था । उसे तीन वर्षों की अवधि के लिए संविदा आधार पर नियुक्त किया गया था और उसने इसी हैसियत में अपनी मृत्यु की तारीख 1 मार्च, 2004 तक निरन्तर कार्य किया था । केन्द्रीय सिविल सेवा (पेंशन) नियम, 1972 के नियम 2(छ) का अवलंब याची को कुटुम्ब पेंशन देने से इनकार करने के लिए लिया गया इस आधार पर कि डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति संविदात्मक थी और उसके संविदा नियुक्ति के निबंधनों और शर्तों में पेंशन के लिए कोई उपबंध नहीं था । यह कथन किया गया है कि डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं का नियमितीकरण विचाराधीन था किन्तु सत्यापन करने पर यह पाया गया कि डा. आर. पी. शर्मा ने मिथ्या प्रमाणपत्र प्राप्त किया था, इस प्रकार उसकी सेवाएं समाप्त कर दी गई थीं । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 ने याचिका खारिज किए जाने के लिए निवेदन किया है ।

11. प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य), हिमाचल प्रदेश सरकार ने तारीख 1 सितम्बर, 2010 के आदेश के अनुसरण में एक शपथपत्र फाइल किया जिसमें उन्होंने यह कथन किया कि डा. आर. पी. शर्मा की सेवाओं के नियमितीकरण के लिए मामला सरकार के स्तर पर प्रक्रिया के अधीन है और तारीख 12 जून, 2002 को कैबिनेट के समक्ष रखा गया था किन्तु उसे प्रत्याहृत कर लिया गया था । कोई नया विनिश्चय लेने के पूर्व इस संबंध में, डा. आर. पी. शर्मा से एम. बी. बी. एस. डिग्री और रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र की प्रति लेना अपेक्षित था । रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद्, पटना से तारीख 22 अक्तूबर, 2002 के पत्र द्वारा यह सत्यापित करने का निवेदन किया गया था कि क्या डा. आर. पी. शर्मा उस संस्था से वस्तुतः रजिस्ट्रीकृत है । इसके उत्तर में, रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् ने तारीख 25 नवम्बर, 2003 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि अभिलेखों का सत्यापन करने पर यह पाया गया कि डा. राम प्रताप पुत्र श्री ब्रह्मानन्द, ग्राम चन्डी, जिला सोलन, इस परिषद् में

रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977 द्वारा रजिस्ट्रीकृत नहीं है । रजिस्ट्रीकरण प्रमाणपत्र, जिसकी प्रति राज्य सरकार द्वारा भेजी गई थी, को उनके कार्यालय द्वारा जारी नहीं किया गया था ।

12. शपथपत्र में, यह भी कथन किया गया है कि रजिस्ट्रार से पत्र प्राप्त करने के पश्चात् रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद्, पटना ने डा. आर. पी. शर्मा को कारण बताओ नोटिस तारीख 23 दिसम्बर, 2003 जारी किया किन्तु डा. आर. पी. शर्मा द्वारा कारण बताओ नोटिस का कोई स्पष्टीकरण/उत्तर प्रस्तुत नहीं किया गया । इसलिए, सरकार द्वारा यह विनिश्चय किया गया कि अस्थायी सेवा नियम के नियम 5(1) के अधीन उसकी सेवाएं समाप्त कर दी जाएं और डा. आर. पी. शर्मा के विरुद्ध विभाग से छल करने के लिए दांडिक मामला भी रजिस्ट्रीकृत किया जाए । डा. आर. पी. शर्मा की सेवाएं तारीख 28 फरवरी, 2004 के आदेश द्वारा समाप्त कर दी गईं और सेवा समाप्ति के आदेश को डा. आर. पी. शर्मा पर तामील करने के लिए मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन के पास अग्रेषित कर दिया गया । मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन ने तारीख 28 फरवरी, 2004 के सेवा समाप्ति के आदेश के उत्तर में सरकार को यह सूचित किया कि डा. आर. पी. शर्मा ने तारीख 1 मार्च, 2004 को आत्महत्या कर ली है, इसलिए, यह नोटिस उस पर तामील करना संभव नहीं है । डा. आर. पी. शर्मा की जी. पी. एफ. रकम को निर्मुक्त करने का आदेश दिया गया और तद्नुसार, तारीख 18 अगस्त, 2004 के पत्र द्वारा इसे मुख्य चिकित्सा अधिकारी, सोलन को सूचित किया गया । डा. आर. पी. शर्मा की एम. बी. बी. एस. डिग्री को सत्यापित करने का भी विनिश्चय किया गया । उप-कुलपति ललित नारायण, मिथिला विश्वविद्यालय, कामेश्वर नगर, दरभंगा, बिहार से डा. आर. पी. शर्मा की एम. बी. बी. एस. डिग्री को सत्यापित करने के लिए तारीख 2 सितम्बर, 2004 के पत्र द्वारा निवेदन किया गया । उक्त पत्र के उत्तर में प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय ने तारीख 1 नवम्बर, 2004 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि उनके अभिलेखों के अनुसार, डा. राम प्रताप शर्मा न तो उक्त मेडिकल कालेज में नामांकित है न ही वह एम. बी. बी. एस. की अंतिम परीक्षा में उपस्थित हुआ था ।

13. पूर्वोक्त पत्र प्राप्त करने के पश्चात्, सरकार ने यह विनिश्चय किया कि चूंकि डा. आर. पी. शर्मा की एम. बी. बी. एस. डिग्री और रजिस्ट्रीकरण जाली पाया गया है, इसलिए, उसकी सेवानिवृत्ति फायदों की हकदारी के प्रयोजन हेतु नियमितीकरण के प्रयोजन लिए उसके मामले पर

विचार नहीं किया जा सकता और उसके मामले को बंद कर दिया गया । निदेशक, स्वास्थ्य सेवा को तारीख 20 जुलाई, 2005 के पत्र द्वारा सूचित किया गया । शपथपत्र में यह भी कथन किया गया कि मामले पर नए सिरे से विचार किया गया किन्तु डा. आर. पी. शर्मा की पत्नी किसी सेवानिवृत्त फायदों की हकदार नहीं पाई गई । बकाया जी. पी. एफ. रकम को पहले ही उसके पक्ष में निर्मुक्त कर दिया गया है ।

14. याची ने प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) के शपथपत्र के उत्तर में यह कथन किया कि राज्य की यह दलील कि राज्य द्वारा याची के पति के रजिस्ट्रीकरण के बारे में बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् से सत्यापन कराया गया था जिसके आधार पर राज्य ने यह निष्कर्ष निकाला है कि याची के पति की एम. बी. बी. एस. डिग्री जाली है, सही नहीं है । याची के पति की सेवाएं याची के पति की डिग्री की सत्यवादिता का सत्यापन किए बिना तारीख 28 फरवरी, 2004 को समाप्त कर दी गई थीं । याची के पति की सेवाएं समाप्त करना अवैध है और इसलिए, याची कुटुम्ब पेंशन की हकदार है । याची को मात्र इस आधार पर सेवानिवृत्त फायदों का हकदार अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि मामला बन्द कर दिया गया है और याची के पति की डिग्री जाली पाई गई है । इस विनिश्चय पर नए सिरे से प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा विचार किया जाना अपेक्षित है । किन्तु अभिलेख पर यह सुझाव देने के लिए कुछ नहीं है कि मामले पर प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा नए सिरे से परीक्षा की गई थी ।

15. मैंने, याची के विद्वान् काउंसेल सुश्री रंजना परमार और विद्वान् अपर महाधिवक्ता सुश्री रूमा कौशिक जिनकी सहायता विद्वान् सहायक महाधिवक्ता श्री जे. एस. राणा ने की, को सुना । सुश्री परमार ने **शकुंतला देवी** बनाम **हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

16. डा. आर. पी. शर्मा को तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन द्वारा संविदा आधार पर नियुक्त किया गया था । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में, यह कथन किया गया है कि नियुक्ति, अस्थायी सेवा नियम, 1965 द्वारा शासित नहीं होगी । डा. आर. पी. शर्मा तीन वर्षों के लिए नियुक्त हुआ था किन्तु किसी तरह से या अन्य कारणों से वह सेवा में निरन्तर बना रहा । यह दर्शित करने के लिए अभिलेख पर कुछ नहीं है कि

---

[1] (1988) 2 एस. सी. सी. 18.

तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन के पश्चात् कोई अन्य नियुक्ति पत्र, तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित अवधि समाप्त होने के पश्चात् डा. आर. पी. शर्मा के पक्ष में जारी किया गया था । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित अवधि के पश्चात् सेवा में डा. आर. पी. शर्मा का निरन्तर बने रहना तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उपबंधित निबंधनों के अलावा अन्य निबंधन निर्मित नहीं हो सकते हैं । इस प्रकार, यह सुरक्षित तौर पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि डा. आर. पी. शर्मा तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में उल्लिखित निबंधनों और शर्तों पर ही विभाग में निरन्तर सेवा करता रहा । तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन के निबंधन और शर्त सं. VIII के अनुसार, केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति में लागू नहीं होते हैं, अतएव, उसकी सेवाएं केन्द्रीय सिविल सेवा (अस्थायी सेवा) नियम, 1965 के नियम 5 का अवलंब लेते हुए समाप्त नहीं की जा सकती हैं । किन्तु, इससे किसी भी तरह से याची का मामला साबित नहीं होता है । डा. आर. पी. शर्मा विभाग में संविदा कर्मचारी के रूप में आत्महत्या करने तक, तारीख 1 मार्च, 2004 तक सेवा में निरन्तर बना रहा जिस तारीख को डा. आर. पी. शर्मा की मृत्यु को ध्यान में रखते हुए उसके संविदा नियोजन को समाप्त समझा जाएगा ।

17. याचिका में अन्तर्ग्रस्त महत्वपूर्ण प्रश्न डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति के बारे में है । पक्षकारों का सामान्य पक्षकथन यह है कि डा. आर. पी. शर्मा तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन द्वारा संविदा आधार पर नियुक्त हुआ था । यह अत्यधिक आचर्शयजनक है कि डा. आर. पी. शर्मा अपनी नियुक्ति के नियमितिकरण के लिए लोक सेवा आयोग का सामना किए बिना विभाग में 26 वर्षों से भी अधिक समय तक सेवा करता रहा, यद्यपि, तारीख 11 नवम्बर, 1977 के ज्ञापन में यह उपबंधित था कि उसे नियमित नियुक्ति के लिए लोक सेवा आयोग में आवेदन करना मंजूर किया जाएगा और चयन की दशा में प्रथम प्रयास में ही उसकी संविदा सेवा की सभी प्रयोजनों, जिसमें ज्येष्ठता सम्मिलित है, के लिए गणना की जाएगी । इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं है कि क्यों डा. आर. पी. शर्मा ने अपनी सेवा के नियमितिकरण के लिए लोक सेवा आयोग का सामना नहीं किया । वह लोक सेवा आयोग का सामना किए बिना सरकार की शक्तियों का अवलंब लेते हुए अपनी सेवा का नियमितीकरण कराना चाहता था । लोक सेवा आयोग का सामना करने की डा. आर. पी. शर्मा की अनिच्छा उन

तथ्यों जो बाद में प्रकट हुए, को ध्यान में रखते हुए बिना हेतुक का था । यह प्रतीत होता है कि उसे यह प्रत्याशा थी कि यदि वह लोक सेवा आयोग के माध्यम से नियमितीकरण के लिए प्रयास करेगा तो उसका पिटारा खुल जाएगा और वह संविदा आधार पर भी अपनी नियुक्ति बचा नहीं सकेगा ।

18. अभिलेख पर यह आया है कि रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद्, पटना से तारीख 22 अक्तूबर, 2002 के पत्र द्वारा यह निवेदन किया गया था कि वह सत्यापित करें कि क्या डा. आर. पी. शर्मा वस्तुतः उक्त परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है । रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् ने तारीख 25 नवम्बर, 2003 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि अभिलेखों का सत्यापन करने पर यह पाया गया कि डा. राम प्रताप, पुत्र श्री ब्रह्मा नन्द, निवासी ग्राम चन्डी, जिला सोलन इस परिषद् में रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977 द्वारा रजिस्ट्रीकृत नहीं है । रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977, वही है जिसे याची ने फाइल किया है और अपनी दलील के समर्थन में यह अवलंब लिया है कि डा. आर. पी. शर्मा, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् में रजिस्ट्रीकृत है । याची ने ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय द्वारा जारी एम. बी. बी. एस. की डिग्री अभिलेख पर रखी है यह दर्शित करते हुए कि राम प्रताप शर्मा (डा. आर. पी. शर्मा) वर्ष 1976 में दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय से अभिकथित तौर पर एम. बी. बी. एस. उत्तीर्ण की है ।

19. प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय ने तारीख 1 नवम्बर, 2004 के पत्र द्वारा यह सूचित किया कि उनके अभिलेखों के अनुसार डा. राम प्रताप शर्मा न तो उक्त मेडिकल कालेज में नामांकित हैं न ही एम. बी. बी. एस. की अंतिम परीक्षा में उपस्थित हुआ था । याची ने प्रत्यर्थियों के आधार (दलील) का विरोध किया इस आधार पर कि प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज के तारीख 1 नवम्बर, 2004 के पत्र को अभिलेख पर नहीं रखा गया है । प्रत्यर्थियों के इस आधार पर अविश्वास करने का यह आधार नहीं है कि डा. आर. पी. शर्मा ने जाली दस्तावेजों के आधार पर नियोजन प्राप्त किया था । याची का आधार यह नहीं है कि प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) का तारीख 15 अक्तूबर, 2010 का शपथपत्र उन सामग्रियों के अनुसार नहीं है जो सरकार के पास हैं ।

20. याची ने प्रधानाचार्य, दरभंगा मेडिकल कालेज के विरुद्ध कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं की है जब उसे सरकार ने यह सूचित किया था कि डा. राम प्रताप शर्मा दरभंगा मेडिकल कालेज, लहरिया सराय में न तो

नामांकित है न ही अंतिम एम. बी. बी. एस. की परीक्षा में उपस्थित हुआ है । याची ने रजिस्ट्रार, बिहार चिकित्सक रजिस्ट्रीकरण परिषद् के विरुद्ध भी कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं की है जिसने सरकार को यह सूचित किया था कि डा. राम प्रताप शर्मा इस परिषद् में रजिस्ट्रीकरण सं. 11319, तारीख 4 जनवरी, 1977 के अधीन रजिस्ट्रीकृत नहीं है । विभाग ने डा. आर. पी. शर्मा को कारण बताओ नोटिस जारी किया था किन्तु कारण बताओ नोटिस का उत्तर देने के बजाय डा. आर. पी. शर्मा ने प्रत्यर्थियों द्वारा उठाए गए आधार पर आत्महत्या कर ली । प्रमुख सचिव (स्वास्थ्य) के विरुद्ध भी कोई दुर्भावना अभिकथित नहीं है ।

21. डा. आर. पी. शर्मा, नियोजन प्राप्त करने के पश्चात् 26 वर्षों से भी अधिक समय तक विभाग में सेवा की । वहां कोई साम्या नहीं हो सकता है जहां यह विधि के विरोधाभास में होता है, इसके अतिरिक्त, वर्तमान मामले में, यह सिद्ध हो गया है कि डा. आर. पी. शर्मा ने जाली दस्तावेजों के आधार पर चिकित्सक के रूप में नियोजन प्राप्त किया था । उन्होंने कपट किया और कपट प्रत्येक चीज को दूषित कर देता है । **लजरुस इस्टेट लिमिटेड** बनाम **बिस्ले**[1] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

> ". . . . . . मैं इस प्रक्रम के लिए यह तर्क स्वीकार नहीं कर सकता हूं । कोई भी न्यायालय उस भूमि को अपने लाभ के लिए किसी व्यक्ति को अपने पास रखने के लिए मंजूर नहीं करेगा जिसे उसने कपट से प्राप्त किया है । न्यायालय का कोई निर्णय, मंत्री का कोई आदेश भी इस आधार को मंजूर नहीं कर सकता है यदि उसे कपट द्वारा प्राप्त किया गया है । कपट प्रत्येक चीज को सुलझा देता है । न्यायालय कपट के प्रति सावधानी बरतता है जब तक कि इसे सुभिन्नतः अभिवाचित और साबित नहीं कर दिया जाता है, किन्तु एक बार जब यह साबित कर दिया जाता है तो इससे सभी निर्णय, संविदाएं और सभी संव्यवहार, जो भी हो, दूषित हो जाते हैं . . . . . ।"

22. **भाऊराव दग्दू पारकर** बनाम **महाराष्ट्र राज्य और अन्य**[2] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है :–

> "11. 'कपट' प्रत्येक अच्छे कार्य को दूषित करने के रूप में

---

[1] (1956) 1 इलाहाबाद ई. आर. 341.

[2] (2005) 7 एस. सी. सी. 605.

ज्ञात है । कपट और न्याय कभी भी एक दूसरे के साथ नहीं रह सकते हैं । कपट या तो पत्र द्वारा या शब्दों द्वारा किया जाता है, जो अन्य व्यक्ति या प्राधिकारी को इस बात के लिए प्रेरित करता है कि वह एक सुनिश्चित निर्धारित आधार ले जो पूर्ववर्ती या तो शब्दों या पत्रों द्वारा किए गए आचरण के प्रतिक्रिया स्वरूप हो । यह भी सुस्थिर है कि स्वयमेव दुर्व्यपदेशन कपट की कोटि में आता है । वास्तव में, निर्दोष दुर्व्यपदेशन भी कपट के विरुद्ध अनुतोष के दावे का कारण हो सकता है । एक कपटपूर्ण दुर्व्यपदेशन को प्रवंचना कहा जाता है और इससे जानबूझकर या लापरवाही से किसी व्यक्ति को क्षति पहुंचाई जाती है जिसे वह विश्वास करता है और कार्य मिथ्या होता है । विधि में यह भी कपट होता है यदि एक पक्षकार अभ्यावेदन करता है जिसे वह मिथ्या जानता है और उसकी जांच करने पर यद्यपि हेतुक से जिससे अभ्यावेदन किया गया है वह दूषित नहीं होता है । न्यायालय के समक्ष रखे गए कपट के कार्य को हमेशा ही गंभीर रूप से देखा गया है । सम्पत्ति के संबंध में, अन्य व्यक्तियों को अधिकारों से वंचित करने को ध्यान में रखते हुए की गई दुरभिसंधि षड्यंत्र आरम्भतः संव्यवहार को शून्य बना देता है । कपट और प्रवंचना एक दूसरे के पर्याय हैं । यद्यपि दिए हुए मामले में प्रवंचना कपट की कोटि में नहीं आ सकता फिर भी कपट सभी साम्यिक सिद्धांतों में अभिशाप है और कपट से दूषित कोई भी मामला शास्वत नहीं हो सकता अथवा इसे किसी साम्यिक सिद्धांतों जिसमें प्राज्ञ न्याय सम्मिलित है, को लागू करते हुए सुरक्षा प्रदान नहीं की जा सकती है ।"

23. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **बैंक आफ इंडिया और एक अन्य** बनाम **अविनाश डी. मांडिविकर और अन्य**[1] वाले मामले में, कपट के मुद्दे पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"8. प्रत्यर्थी सं. 1 कर्मचारी का आधार यह है कि उसे लगभग तीन दशकों तक सेवा में रखा गया और उसकी सेवानिवृत्ति लगभग तीन वर्ष रह गई है और उच्च न्यायालय के आदेशानुसार उसे प्रोन्नति देने से इनकार कर दिया गया । इसलिए, उच्च न्यायालय का आदेश एक साम्यिक आदेश है ।

9. लम्बी अवधि की सेवा के बारे में इसी प्रकार के एक

---

[1] (2005) 7 एस. सी. सी. 690.

अभिवाक् पर इस न्यायालय द्वारा आर. विश्वनाथ पिल्लई **बनाम** केरल राज्य (एस. सी. सी. पृष्ठ 116-17) वाले मामले में किया गया था जो अप्रासंगिक प्रतीत होता है । निर्णय के पैरा 19 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था –

> 'उसके बाद अपीलार्थी के विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री रणजीत कुमार द्वारा यह दलील दी गई थी कि चूंकि अपीलार्थी ने लगभग 27 वर्षों की सेवा की है इसलिए सेवा से अनिवार्य सेवानिवृत्ति या पद से हटाए जाने के आदेश द्वारा प्रतिस्थापित पदच्युति के आदेश से अपीलार्थी के पेंशन फायदों की संरक्षा होती है । हम किसी भी प्रकार से इस निवेदन में कोई सार नहीं पाते हैं । वेतन, पेंशन और अन्य सेवा फायदों का अधिकार लोक सेवा में सम्पूर्णतः कानूनी प्रकृति का होता है । अपीलार्थी ने मिथ्या जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत करते हुए आरक्षित अभ्यर्थी के लिए अभिप्रेत पद के विरुद्ध और कपट करते हुए नियुक्ति प्राप्त की थी । पद पर उसकी नियुक्ति शून्य थी और विधि की दृष्टि में कायम रखे जाने योग्य नहीं है । सेवानिवृत्ति के पश्चात् वेतन या पेंशन का अधिकार विधिमान्य और विधिक नियुक्ति से उद्भूत होती है । पेंशन और वित्तीय फायदों का पारिणामिक अधिकार तभी दिया जा सकता है यदि नियुक्ति विधिमान्य और विधिक है । ऐसे फायदे उन मामलों में नहीं दिए जा सकते जहां नियुक्ति कपटपूर्वक प्राप्त की गई पाई जाती है और यह मिथ्या जाति प्रमाणपत्र पर आधारित है । एक व्यक्ति जो मिथ्या जाति प्रमाणपत्र प्रस्तुत करते हुए सेवा में प्रवेश करता है और अनुसूचित जाति के लिए अभिप्रेत पद पर नियुक्ति प्राप्त कर लेता है तो इस प्रकार वह उस पद पर नियुक्ति होने के लिए असली अनुसूचित जाति के अभ्यर्थी को वंचित करता है, वह इस न्यायालय से किसी भी प्रकार की सहानुभूति या कृपा पाने योग्य नहीं है । एक व्यक्ति जो साम्या चाहता है उसे स्वच्छ हाथों से आना चाहिए । वह, जो मिथ्या दावों पर न्यायालय में आता है वह साम्या का अभिवाक् नहीं कर सकता है न ही न्यायालय उसके पक्ष में साम्या अधिकारिता का प्रयोग करते हुए न्यायानुमत होता है । एक व्यक्ति जो साम्या चाहता है उसे ऋजु और साम्यिक तरीके से कार्य करना चाहिए । साम्या

अधिकारिता उस व्यक्ति के मामले में प्रयोग नहीं की जा सकती जो कपट करके मिथ्या जाति प्रमाणपत्र के आधार पर नियुक्ति प्राप्त किया है । उसके बचाव में कोई सहानुभूति या साम्यिक विचार नहीं किया जा सकता है । हमारा यह मत है कि साम्या या अनुकम्पा उन मामलों में विधिक सहायता देते हुए मंजूर नहीं किया जा सकता जहां एक व्यक्ति कपट करके उस प्रास्थिति को प्राप्त करता है ।''

24. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **भारत संघ** बनाम **दत्ता रे पुत्र नामदेव मंडेकर और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि एक व्यक्ति जो मिथ्या जाति प्रमाणपत्र के आधार पर नियुक्ति प्राप्त कर लेता है तो उसे उसके द्वारा कारित गलतियों का फायदा देते रहना मंजूर नहीं किया जा सकता है और उसकी सेवाएं समाप्त किए जाने योग्य हैं ।

25. **शकुंतला देवी** (उपरोक्त) वाला मामला एक ऐसा मामला है जहां एक दैनिक मजदूरी के कर्मचारी, जिसने 29 वर्ष की सेवा की थी, की सेवाएं नियमित नहीं की गई थीं और उसे उसके जीवनकाल के दौरान सेवा फायदे नहीं दिए गए थे और उसकी मृत्यु के पश्चात्, उसके आश्रितों को कोई पेंशन फायदे नहीं दिए गए थे । उस मामले के तथ्यों के आधार पर, माननीय न्यायालय ने राज्य सरकार को यह निर्देश दिया कि वह याची के मृतक पति के पेंशन फायदों के प्रश्न पर विचार करे यदि याची की भूतलक्षी प्रभाव से सेवा के नियमितीकरण का फायदा और आर्थिक फायदा की कोटि में आने वाले कार्य जिसमें विधि के अनुसरण में बकाया और ग्राह्य पेंशन फायदा सम्मिलित है, मिलता हो । वर्तमान मामले में, मृतक की नियुक्ति कपट और दुर्व्यपदेशन पर आधारित थी जो प्रत्येक चीज को दूषित कर देता है, अतएव, **शकुंतला देवी** (उपरोक्त) वाला मामला लागू नहीं होता है ।

26. डा. आर. पी. शर्मा की नियुक्ति कपट और दुर्व्यपदेशन से दूषित थी और तथ्यों पर जिसकी जानकारी डा. आर. पी. शर्मा को थी, सत्य नहीं थी अपितु मिथ्या थी, इसलिए, डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं का कोई फायदा याची या डा. आर. पी. शर्मा को नहीं दिया जा सकता है । इन परिस्थितियों में, डा. आर. पी. शर्मा द्वारा की गई सेवाओं के नियमितीकरण का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है । याची, विभाग से डा. आर. पी. शर्मा द्वारा

[1] (2008) 4 एस. सी. सी. 612.

की गई सेवाओं के कारण कुटुम्ब पेंशन की हकदार नहीं है । इस प्रकार, किसी भी दृष्टिकोण से देखने पर याची का कोई मामला नहीं बनता है । उपर्युक्त को ध्यान में रखते हुए, याचिका में कोई गुणागुण नहीं है जिसे तद्नुसार, खारिज किया जाता है ।

तद्नुसार, रिट याचिका खारिज की गई ।

क.

(2013) 1 सि. नि. प. 282 **हिमाचल प्रदेश**

रत्ना देवी वर्मा (श्रीमती)

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और एक अन्य

तारीख 20 जून, 2011

न्यायमूर्ति वी. के. आहूजा

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – धारा 100 के साथ पठित आदेश 41, नियम 27 – सरकारी भूमि का अधिक्रमण करना – बेदखली – आक्षेप – यदि अभिलेख पर के दस्तावेजों से यह साबित कर दिया जाता है कि कब्जा की गई भूमि, सरकारी भूमि है तो सम्बन्धित सरकार द्वारा उस भूमि से कब्जाधारी को बेदखल कराना न्यायोचित और विधिमान्य है ।

वर्तमान मामले में, अपीलार्थी, जिसे इसमें वादी के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, ने प्रत्यर्थियों, जिन्हें इसमें प्रतिवादियों के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, के विरुद्ध घोषणा के लिए एक वाद फाइल किया था । वादी द्वारा यह अभिकथित किया गया था कि खसरा सं. 76/2/1 में समाविष्ट 982 वर्ग गज भूमि धार-की-बेर में स्थित खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि का एक भाग है जिसे वादी द्वारा 4,000/- रुपए के प्रतिफल में श्रीमती कन्ता शर्मा से क्रय किया था और वादी को विक्रेता द्वारा घटनास्थल पर ही उसका वास्तविक भौतिक कब्जा सौंप दिया गया था । यह अभिकथित है कि विक्रय मौखिक था । वादी ने यह भी अभिकथित किया कि पूर्व स्वामी श्रीमती कन्ता शर्मा ने विक्रय के समय पर यह प्रकट किया था कि उसने प्रश्नगत भूमि को मूल्यवान प्रतिफल में सुरजन सिंह से क्रय किया था और सुरजन सिंह ने उस भूमि को पंडित देवी दत्त से क्रय किया था । यह भी

अभिकथित किया कि सभी प्रकार के विक्रय मौखिक थे और घटनास्थल पर सीमाओं को दर्शित करते हुए कब्जा प्रदत्त किया गया था । यह भी अभिकथित किया कि भूमि ग्राम धार-की-बेर और ग्राम बैठल की सीमाओं पर स्थित है । वादी ने यह अभिकथित किया कि जनवरी, 1983 के माह में उसने उस भूमि की कटाई और खुदाई करते हुए विकसित करना आरम्भ किया और निर्माण करने के प्रयोजनों के लिए उसे समतल बनाया । वादी ने भूमि तल पर चार कमरों वाले दो मंजिला पक्का मकान बनाया, प्रथम तल पर दो कमरे वाले दो आवासीय सेट मकान बनाया जिसके लिए उसने 70,000/- रुपए से अधिक खर्च किए । उससे सटी हुई भूमि को भी ग्राम धार-की-बेर के खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि का एक भाग कहा गया है । यह भी अधिकथित किया कि वादी के मकान का निर्माण कार्य जुलाई, 1983 के अंत में पूरा हुआ । अगस्त, 1983 के माह में वादी ने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली से एक नोटिस प्राप्त किया जिसमें यह अभिकथित था कि वादी ने उस भूमि पर दो मंजिले पक्के मकान का निर्माण किया है जो ग्राम बैठल के खसरा सं. 228/89 भूमि का भाग है जो एक सरकारी भूमि है और वादी ने सरकारी भूमि पर अधिक्रमण किया है । यह भी अभिकथित किया कि नोटिस के अनुसरण में, वादी, सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली के समक्ष उपस्थित हुई और उस भूमि को श्रीमती कन्ता शर्मा द्वारा विक्रय करने के बारे में मौखिक रूप से बताया और यह कि भूमि धार-की-बेर में स्थित है और उसने ग्राम बैठल की किसी सरकारी भूमि पर कोई अधिक्रमण नहीं किया है । वादी ने यह अभिकथित किया कि वह बीमार है और सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली के न्यायालय से कोई तारीख सुनिश्चित नहीं कर सकती थी और अप्रैल, 1984 के माह में उसे यह बताया गया कि तारीख 27 फरवरी, 1984 को उसके विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही की गई और उसके विरुद्ध एक बेदखली का आदेश पारित किया गया है । वादी ने उप-प्रभागीय कलक्टर के समक्ष एक अपील फाइल की । कलक्टर ने एक राजस्व अधिकारी से भूमि का सीमांकन कराया जिसने यह सिफारिश की कि भूमि को अधिक्रमणों का नियमितीकरण के लिए सरकारी नीति के अधीन वादी ने एक आवेदन किया है किन्तु कलक्टर ने इस संबंध में रिपोर्ट और वादी के निवेदन पर विचार किए बिना अपीलार्थी की यह अपील खारिज कर दी । अपीलार्थी ने प्रभागीय आयुक्त, शिमला और वित्त आयुक्त, हिमाचल प्रदेश के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल की किन्तु उनके द्वारा पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिए गए । एक पुनर्विलोकन आवेदन वित्त आयुक्त के

समक्ष फाइल की गई, जिन्होंने भूमि का सीमांकन कराने के लिए स्थानीय आयुक्त के रूप में श्री आई. एस. चन्देल को नियुक्त किया जिसने वित्त आयुक्त के समक्ष अपनी यह रिपोर्ट प्रस्तुत की कि खसरा सं. 228/89/6 में दर्शित 9 बिस्वा भूमि और खसरा सं. 228/89/5 में दर्शित 4 बिस्वा भूमि वादी के कब्जे में है जिस पर उसने दो मंजिला पक्का मकान और 1 सेप्टिक टैंक का निर्माण कर लिया है । वादी ने उक्त रिपोर्ट को स्वीकार नहीं किया और रिपोर्ट के बारे में वित्त आयुक्त के समक्ष यह आक्षेप फाइल किया कि दोनों ग्रामों की सीमाएं बंदोबस्त अभिलेख के अनुसार नियत नहीं हैं । स्थानीय आयुक्त द्वारा सीमांकन ग्राम बैठल के लठ की सहायता से कराया गया न कि दोनों ग्रामों के बंदोबस्त अभिलेख की सहायता से कराया गया । वित्त आयुक्त ने अधिक्रमणों के नियमितीकरण के लिए सरकार की नई नीति के अधीन भूमि मंजूर करने के लिए मामले पर विचार करने हेतु संबंधित फाइल को उप-आयुक्त, सोलन के पास भेजा । उप-आयुक्त ने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली से रिपोर्ट मंगवाया और वादी को कोई अवसर उपलब्ध कराए बिना बाजार मूल्य पर नियमितीकरण के लिए वादी के निवेदन को नामंजूर कर दिया । यह अभिकथित किया कि वादी उक्त भूमि का पूर्ण स्वामी है फिर भी अनावश्यक मुकदमों से बचने के लिए वह भूमि का स्वामी हिमाचल प्रदेश राज्य को स्वीकार करने और उसे बाजार मूल्य पर प्राप्त करने के लिए तैयार है । वाद लम्बित रहने के दौरान, एक नामांतरण भी राज बल्लभ आदि के पक्ष में प्रमाणित किया गया था जिसमें उन्हें हिमाचल प्रदेश राज्य के साथ बराबर हिस्सों में स्वामी दर्शित किया गया था । अतएव, सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली द्वारा पारित बेदखली आदेश तथा वादी के वाद को नामंजूर करते हुए वित्त आयुक्त द्वारा पारित आदेश को चुनौती देते हुए घोषणा के लिए वाद फाइल किया गया । प्रतिवादियों ने विभिन्न प्रारम्भिक आक्षेप उठाए । गुणागुणों पर यह अभिकथित किया कि खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि एक प्राइवेट भूमि है और राजस्व अभिलेख के अनुसार वादी ने भूमि क्रय नहीं की है । सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी द्वारा नोटिस जारी करने के बारे में अभिकथन किया गया और पश्चात्वर्ती आदेशों से इनकार नहीं किया गया । यह अभिकथित किया कि खसरा सं. 76 एक प्राइवेट भूमि है और वादी कृषक नहीं है और राज्य सरकार की अनुज्ञा के बिना वह हिमाचल प्रदेश में भूमि क्रय नहीं कर सकती थी । वादियों के पक्ष ने मौखिक विक्रय के बारे में किए गए अभिकथनों से भी इनकार किया गया । आरम्भ की गई कार्यवाहियां वैध अभिवाचित की गईं और तद्नुसार, आदेश पारित किए गए

और इसलिए, वादी द्वारा प्रस्तुत मामले में कोई गुणागुण नहीं है । इससे व्यथित होकर वर्तमान द्वितीय अपील फाइल की गई । न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि उन्होंने वादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था, जो एक शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/बी तथा पूर्ववर्ती स्वामी और सुरजन सिंह, जिससे पूर्ववर्ती स्वामी ने भूमि क्रय की थी, के बीच हुआ करार प्रदर्श पी डब्ल्यू. 1/सी है । इस करार में किसी खसरा संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है । वादी ने वादपत्र में विनिर्दिष्टतः यह अभिकथन नहीं किया है कि कब उसने भूमि क्रय की थी और न ही किसी माह, तारीख या वर्ष या विनिर्दिष्ट अवधि का उल्लेख किया है और मौखिक विक्रय के किन्हीं साक्षियों को भी प्रस्तुत नहीं किया है । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि उस समय पर मौखिक विक्रय विधि के अनुसार अनुज्ञेय थी । यह मात्र साक्ष्य के प्रक्रम पर आया है कि यह प्रत्याख्यान किया गया कि वर्ष 1983 में वादी द्वारा भूमि क्रय की गई थी । यह साबित करने के लिए उन दस्तावेजों या किन्हीं अन्य दस्तावेजों में कोई खसरा संख्या नहीं दिया गया है कि वादी ने पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता शर्मा से वैधतः भूमि क्रय की थी या उक्त पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता शर्मा प्रश्नगत भूमि की स्वामी थी जिसके लिए राजस्व अभिलेखों में कोई प्रविष्टि नहीं है । दूसरी ओर, प्रतिवादियों ने उस पटवारी की परीक्षा की जिसने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी को यह रिपोर्ट दी थी कि वादी ने उस भूमि पर अधिक्रमण किया है जो भूमि खसरा सं. 76 में समाविष्ट नहीं है, जिसे वादी ने पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता देवी से क्रय करना अभिकथित की है । राज्य सरकार द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध ग्राम बैठल में स्थित खसरा सं. 228/89 में समाविष्ट भूमि के बारे में कार्यवाहियां आरम्भ की थीं जिसके लिए अपीलार्थी के विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां की गई थीं । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 1 के बारे में अभिलिखित इस निष्कर्ष के बारे में कोई कमी इंगित नहीं किया गया है कि वादी उस भूमि का स्वामित्व साबित करने में असफल रही जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं । विद्वान् जिला न्यायाधीश ने अभिलेख पर जमाबंदी को निर्दिष्ट करने के पश्चात् विवाद्यक सं. 1 पर अभिलिखित निष्कर्षों के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला कि मौखिक विक्रय अनुज्ञेय नहीं था और भूमि का कोई खसरा संख्या उल्लिखित नहीं था और इसलिए वादी

के मौखिक विक्रय के अभिवाक् को विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था । इस संबंध में विद्वान् विचारण न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा की गई थी और साक्ष्य का कोई पुनर्मूल्यांकन नहीं किया जा सकता जिसके लिए अपीलार्थी द्वारा तर्कों के दौरान कोई मामला नहीं बनाया गया था । तत्पश्चात्, अपीलार्थी द्वारा मात्र यह मामला बनाया गया कि उसके द्वारा क्रय भूमि ग्राम धार-की-बेर में स्थित खसरा सं. 76 में है जबकि उसके विरुद्ध कार्यवाहियां ग्राम बैठल में स्थित खसरा सं. 228/89 के बारे में आरम्भ की गई थीं । पहले दिन से ही वादी यह अच्छी तरह से जानती थी कि वह अन्य ग्राम में स्थित कुछ अन्य खसरा संख्या की भूमि के बारे में दावा कर रही है जबकि उसके विरुद्ध ग्राम बैठल में स्थित भूमि के लिए कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं जिसके लिए उसने कभी भी कोई दावा नहीं किया है । उसने मामला लम्बित रहने के दौरान किसी भी समय पर यह अभिकथन या यह साबित नहीं किया है कि यह अतिव्याप्ति थी और यह कि दो ग्रामों की सीमाएं विभिन्न थीं या यह कि उसने ग्राम बैठल की किसी भूमि का कोई अधिक्रमण नहीं किया है । वादी को ही सीमांकन रिपोर्ट प्राप्त करनी थी और उसे विधि के अनुसरण में साबित करना था, जिसमें वह असफल रही । मात्र अपील के प्रक्रम पर ही, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन वाद भूमि के बारे में जमाबंदी प्रविष्टियां प्रस्तुत करने और भूमि का सीमांकन कराने के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति करने के लिए फाइल किया गया था । उक्त आवेदन तारीख 19 मई, 1997 को फाइल किया गया था और विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा उसे सही ही नामंजूर किया गया था क्योंकि आवेदन को विचारणीय समय बीतने के पश्चात् फाइल किया गया था । वादी के विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां वर्ष 1983 में आरम्भ की गई थीं । जब पटवारी द्वारा यह रिपोर्ट दी गई थी कि वादी ने सरकारी भूमि पर अधिक्रमण किया है और वादी को ही राजस्व प्रविष्टियों से सम्यक् सीमांकन प्राप्त करना चाहिए था किन्तु उसने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई आवेदन फाइल नहीं किया जिनके समक्ष तारीख 11 अक्तूबर, 1990 से 20 अप्रैल, 1996 अर्थात् लगभग 6 वर्षों तक वाद लम्बित रहा था । इसके पश्चात्, विद्वान् अपील न्यायाधीश के समक्ष अपील तारीख 18 जून, 1996 से 28 अक्तूबर, 1998 तक लम्बित रहा और इस अवधि के दौरान स्थानीय आयुक्त के लिए आवेदन फाइल किया गया था जिसे विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था इस मताभिव्यक्ति के साथ कि वित्तीय आयुक्त द्वारा नियुक्त स्थानीय

आयुक्त की रिपोर्ट पहले से ही मौजूद है जिसमें स्पष्टतः यह रिपोर्ट किया गया है कि भूमि ग्राम बैठल में ही आती है और तद्नुसार, सीमांकन के लिए आवेदन को विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा नामंजूर कर दिया गया था । निर्णय के परिशीलन से यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि निर्देश, वित्तीय आयुक्त द्वारा नियुक्त स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट के प्रति किया गया था और उक्त रिपोर्ट अंतिम हो गया था और उक्त रिपोर्ट के बारे में कोई आक्षेप फाइल नहीं किए गए थे और सीमांकन पक्षकारों की उपस्थिति में किए गए थे । इसलिए, यह सही ही अभिनिर्धारित किया गया है कि कोई आयोग विषमता सृजित करने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है । पक्षकार, जिसने यह दावा करते हुए विभिन्न दावा किया है कि भूमि उस गांव के भीतर नहीं आती है जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई हैं, अतएव, उक्त पक्षकार को ही भूमि का सीमांकन कराने के लिए समुचित आवेदन फाइल करना चाहिए था और उसे ही यह साबित करना चाहिए था कि वह उस भूमि की कब्जे सहित स्वामी है जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं, जिसमें वादी बुरी तरह से असफल रही है । वादी के विरुद्ध भिन्न भूमि के बारे में कार्यवाही की गई थी और उसने भिन्न भूमि को कब्जे में ली थी जिसके लिए उसके विरुद्ध कोई भी बेदखली की कार्यवाही आरम्भ नहीं की गई थी । इसलिए, किसी भी दृष्टिकोण से यदि याची के पक्षकथन पर विचार किया जाए तो यह प्रतीत होता है कि उसने मात्र अपील न्यायालय के समक्ष ही सीमांकन के लिए आवेदन करने में अपने अनुसार समय लिया, यद्यपि विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष लगभग 6 वर्षों से भी अधिक समय तक या जैसा उपर्युक्त उल्लिखित है, मामला लम्बित रहा । प्रतिकूल कब्जा के अभिवाक् अथवा अपील में लिए गए आधारों के बारे में वादी द्वारा कोई पक्षकथन नहीं किया गया कि वह वाद भूमि के प्रतिकूल कब्जे में थी क्योंकि उसका दावा यह था कि वह पूर्ववर्ती स्वामी से मौखिक रूप से भूमि के क्रय द्वारा भूमि की स्वामी थी और वादी द्वारा यह कभी भी स्वीकार नहीं किया गया था कि वह कुछ अन्य ग्रामों में समाविष्ट सरकारी भूमि के कब्जे में थी । यद्यपि उसने यह स्वीकृति की थी कि वह विनियमितीकरण के लिए वैकल्पिक रूप से आवेदन करने को तैयार थी, जिसे सरकार को विचार करना था और उस पर सरकारी नीति को ध्यान में रखते हुए समुचित आदेश पारित करना था किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वादी ने ऐसा कोई दावा किया था कि नियमितीकरण के लिए उसके मामले पर सकारात्मक रूप से विचार किया जाना चाहिए । यह स्पष्ट है कि उसने

कभी भी यह स्वीकार नहीं किया या यह दावा किया कि वह खसरा सं. 228/89/6 में समाविष्ट भूमि का प्रतिकूल कब्जे द्वारा कब्जे सहित स्वामी थी जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं । इसलिए, प्रतिकूल कब्जे के बारे में कोई विवाद्यक विरचित करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । वादी ने कभी भी प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं किया और उसने कभी भी उसके द्वारा धारित भूमि पर सरकार का स्वामित्व स्वीकार नहीं किया । (पैरा 10, 11, 12 और 14)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2006]	2006 एच. एल. जे. (हि. प्र.) 5 : **पृथ्वी सिंह** बनाम **बक्शी राम और एक अन्य** ।	13

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 1999 की नियमित द्वितीय अपील सं. 51.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन द्वितीय अपील ।

अपीलार्थी की ओर से — श्री भूपेन्द्र गुप्ता, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ सुश्री चारु गुप्ता, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से — श्री आर. एम. बिष्ठ, उप-महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति वी. के. आहूजा – सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 100 के अधीन यह नियमित द्वितीय अपील अपीलार्थी द्वारा विद्वान् जिला न्यायाधीश, सोलन द्वारा पारित तारीख 28 अक्तूबर, 1998 के उस निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल की गई है जिसके द्वारा विद्वान् ज्येष्ठ उप-न्यायाधीश, सोलन ने वादी के वाद को खारिज करते हुए पारित निर्णय और डिक्री के विरुद्ध फाइल अपील को भी खारिज कर दिया था ।

2. मामले के संक्षिप्ततः कथन यह है कि अपीलार्थी, जिसे इसमें वादी के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, ने प्रत्यर्थियों, जिन्हें इसमें प्रतिवादियों के रूप में निर्दिष्ट किया गया है, के विरुद्ध घोषणा के लिए एक वाद फाइल किया था । वादी द्वारा यह अभिकथित किया गया था कि खसरा सं. 76/2/1 में समाविष्ट 982 वर्ग गज भूमि धार-की-बेर में स्थित खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि का एक भाग है जिसे वादी द्वारा 4,000/- रुपए के

प्रतिफल में श्रीमती कन्ता शर्मा से क्रय किया था और वादी को विक्रेता द्वारा घटनास्थल पर ही उसका वास्तविक भौतिक कब्जा सौंप दिया गया था । यह अभिकथित है कि विक्रय मौखिक था । वादी ने यह भी अभिकथित किया कि पूर्व स्वामी श्रीमती कन्ता शर्मा ने विक्रय के समय पर यह प्रकट किया था कि उसने प्रश्नगत भूमि को मूल्यवान प्रतिफल में सुरजन सिंह से क्रय किया था और सुरजन सिंह ने उस भूमि को पंडित देवी दत्त से क्रय किया था । यह भी अभिकथित किया कि सभी प्रकार के विक्रय मौखिक थे और घटनास्थल पर सीमाओं को दर्शित करते हुए कब्जा प्रदत्त किया गया था । यह भी अभिकथित किया कि भूमि ग्राम धार-की-बेर और ग्राम बैठल की सीमाओं पर स्थित है । वादी ने यह अभिकथित किया कि जनवरी, 1983 के माह में उसने उस भूमि की कटाई और खुदाई करते हुए विकसित करना आरम्भ किया और निर्माण करने के प्रयोजनों के लिए उसे समतल बनाया । वादी ने भूमि तल पर चार कमरों वाले दो मंजिला पक्का मकान बनाया, प्रथम तल पर दो कमरे वाले दो आवासीय सेट मकान बनाया जिसके लिए उसने 70,000/- रुपए से अधिक खर्च किए । उससे सटी हुई भूमि को भी ग्राम धार-की-बेर के खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि का एक भाग कहा गया है । यह भी अधिकथित किया कि वादी के मकान का निर्माण कार्य जुलाई, 1983 के अंत में पूरा हुआ । अगस्त, 1983 के माह में वादी ने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली से एक नोटिस प्राप्त किया जिसमें यह अभिकथित था कि वादी ने उस भूमि पर दो मंजिले पक्के मकान का निर्माण किया है जो ग्राम बैठल के खसरा सं. 228/89 भूमि का भाग है जो एक सरकारी भूमि है और वादी ने सरकारी भूमि पर अधिक्रमण किया है ।

3. यह भी अभिकथित किया कि नोटिस के अनुसरण में, वादी, सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली के समक्ष उपस्थित हुई और उस भूमि को श्रीमती कन्ता शर्मा द्वारा विक्रय करने के बारे में मौखिक रूप से बताया और यह कि भूमि धार-की-बेर में स्थित है और उसने ग्राम बैठल की किसी सरकारी भूमि पर कोई अधिक्रमण नहीं किया है । वादी ने यह अभिकथित किया कि वह बीमार है और सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली के न्यायालय से कोई तारीख सुनिश्चित नहीं कर सकती थी और अप्रैल, 1984 के माह में उसे यह बताया गया कि तारीख 27 फरवरी, 1984 को उसके विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही की गई और उसके विरुद्ध एक बेदखली का आदेश पारित किया गया है । वादी ने उप-प्रभागीय

कलक्टर के समक्ष एक अपील फाइल की । कलक्टर ने एक राजस्व अधिकारी से भूमि का सीमांकन कराया जिसने यह सिफारिश की कि भूमि को अधिक्रमणों का नियमितीकरण के लिए सरकारी नीति के अधीन वादी ने एक आवेदन किया है किन्तु कलक्टर ने इस संबंध में रिपोर्ट और वादी के निवेदन पर विचार किए बिना अपीलार्थी की यह अपील खारिज कर दी । अपीलार्थी ने प्रभागीय आयुक्त, शिमला और वित्त आयुक्त, हिमाचल प्रदेश के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन फाइल की किन्तु उनके द्वारा पुनरीक्षण आवेदन खारिज कर दिए गए । एक पुनर्विलोकन आवेदन वित्त आयुक्त के समक्ष फाइल की गई, जिन्होंने भूमि का सीमांकन कराने के लिए स्थानीय आयुक्त के रूप में श्री आई. एस. चन्देल को नियुक्त किया जिसने वित्त आयुक्त के समक्ष अपनी यह रिपोर्ट प्रस्तुत की कि खसरा सं. 228/89/6 में दर्शित 9 बिस्वा भूमि और खसरा सं. 228/89/5 में दर्शित 4 बिस्वा भूमि वादी के कब्जे में है जिस पर उसने दो मंजिला पक्का मकान और 1 सेप्टिक टैंक का निर्माण कर लिया है । वादी ने उक्त रिपोर्ट को स्वीकार नहीं किया और रिपोर्ट के बारे में वित्त आयुक्त के समक्ष यह आक्षेप फाइल किया कि दोनों ग्रामों की सीमाएं बंदोबस्त अभिलेख के अनुसार नियत नहीं हैं । स्थानीय आयुक्त द्वारा सीमांकन ग्राम बैठल के लठ की सहायता से कराया गया न कि दोनों ग्रामों के बंदोबस्त अभिलेख की सहायता से कराया गया । वित्त आयुक्त ने अधिक्रमणों के नियमितीकरण के लिए सरकार की नई नीति के अधीन भूमि मंजूर करने के लिए मामले पर विचार करने हेतु संबंधित फाइल को उप-आयुक्त, सोलन के पास भेजा । उप-आयुक्त ने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली से रिपोर्ट मंगवाया और वादी को कोई अवसर उपलब्ध कराए बिना बाजार मूल्य पर नियमितीकरण के लिए वादी के निवेदन को नामंजूर कर दिया । यह अभिकथित किया कि वादी उक्त भूमि का पूर्ण स्वामी है फिर भी अनावश्यक मुकदमों से बचने के लिए वह भूमि का स्वामी हिमाचल प्रदेश राज्य को स्वीकार करने और उसे बाजार मूल्य पर प्राप्त करने के लिए तैयार है । वाद लम्बित रहने के दौरान, एक नामांतरण भी राज बल्लभ आदि के पक्ष में प्रमाणित किया गया था जिसमें उन्हें हिमाचल प्रदेश राज्य के साथ बराबर हिस्सों में स्वामी दर्शित किया गया था । अतएव, सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी, कसौली द्वारा पारित बेदखली आदेश तथा वादी के वाद को नामंजूर करते हुए वित्त आयुक्त द्वारा पारित आदेश को चुनौती देते हुए घोषणा के लिए वाद फाइल किया गया ।

4. प्रतिवादियों ने विभिन्न प्रारम्भिक आक्षेप उठाए । गुणागुणों पर यह अभिकथित किया कि खसरा सं. 76 में समाविष्ट भूमि एक प्राइवेट भूमि है और राजस्व अभिलेख के अनुसार वादी ने भूमि क्रय नहीं की है । सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी द्वारा नोटिस जारी करने के बारे में अभिकथन किया गया और पश्चात्वर्ती आदेशों से इनकार नहीं किया गया । यह अभिकथित किया कि खसरा सं. 76 एक प्राइवेट भूमि है और वादी कृषक नहीं है और राज्य सरकार की अनुज्ञा के बिना वह हिमाचल प्रदेश में भूमि क्रय नहीं कर सकती थी । वादियों के पक्ष ने मौखिक विक्रय के बारे में किए गए अभिकथनों से भी इनकार किया गया । आरम्भ की गई कार्यवाहियां वैध अभिवाचित की गईं और तद्नुसार, आदेश पारित किए गए और इसलिए, वादी द्वारा प्रस्तुत मामले में कोई गुणागुण नहीं है ।

5. पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा निम्नलिखित मुद्दे विरचित किए गए :–

(1) क्या वादी वाद भूमि का कब्जे सहित स्वामी है ?

(2) क्या प्रतिवादियों ने वादी को बेकब्जा करने की धमकी दी है ?

(3) क्या सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के अधीन प्रतिवादियों के ऊपर वैध नोटिस तामील नहीं की गई है ?

(4) क्या वादी के पास कोई वाद हेतुक नहीं है और उसे वाद फाइल करने हेतु सुने जाने का अधिकार नहीं है ?

(5) क्या वाद, वर्तमान प्ररूप में कायम रखे जाने योग्य नहीं है ?

(6) क्या इस न्यायालय को अधिकारिता नहीं है ?

(7) अनुतोष ।

6. विद्वान् विचारण न्यायालय ने अपने आक्षेपित निर्णय द्वारा विवाद्यक सं. 1, 2, 4 से 6 को वादी के विरुद्ध और प्रतिवादियों के पक्ष में विनिश्चित किया और परिणामस्वरूप, वादी के वाद को खारिज कर दिया । अपील करने पर विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा उन निष्कर्षों की पुष्टि कर दी गई और अपील खारिज कर दी गई ।

7. मैंने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और मामले के अभिलेखों का परिशीलन किया ।

8. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल द्वारा किए गए निवेदन यह हैं कि

दो ग्रामों की सीमाओं के बारे में एक सीमा विवाद था और दोनों ग्रामों के मुसाबी की सहायता के साथ भूमि का सीमांकन किए बिना यह सुनिश्चित नहीं किया जा सकता कि भूमि ग्राम धार-की-बेर में आती है । इस प्रकार, यह निवेदन किया कि विद्वान् निचले अपील न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा स्थानीय आयुक्त नियुक्त करने की प्रार्थना को नामंजूर करने में त्रुटि की है । यह भी निवेदन किया गया कि विद्वान् विचारण न्यायालय, प्रतिकूल कब्जा के अभिवाक् पर विनिर्दिष्ट मुद्दा विरचित करने में असफल रहा और इसलिए, निष्कर्ष गलत तौर पर अभिलिखित किए गए हैं । यह भी निवेदन किया गया कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति पूर्णरूपेण आवश्यक थी और उक्त रिपोर्ट के अभाव में निचले न्यायालयों द्वारा कोई निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किया जा सकता था और इस प्रकार, अपील स्वीकार किए जाने योग्य है ।

9. दूसरी ओर, विद्वान् उप-महाधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि पूर्ववर्ती स्वामी से भूमि क्रय करने के बारे में अभिलेख पर कोई सबूत नहीं है क्योंकि न तो तारीख या माह या वर्ष विनिर्दिष्ट किया गया है न ही कोई विनिर्दिष्ट साक्ष्य यह साबित करने के लिए प्रस्तुत किया गया है कि मौखिक विक्रय उस समय पर सक्षम था । यह भी निवेदन किया कि वादी द्वारा विनिर्दिष्ट तौर पर यह दावा नहीं किया गया है कि भूमि ग्राम धार-की-बेर में स्थित है जबकि उसी ग्राम में भूमि के लिए कार्यवाहियां उसके विरुद्ध आरम्भ की गई थीं । वादी ने यह सिद्ध नहीं किया है कि भूमि दो ग्रामों की सीमाओं पर स्थित है या कोई अतिव्याप्ति थी और अतिव्याप्ति के बारे में कोई मुद्दा साबित नहीं किया गया है और स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट के अनुसार तथा अभिलेख पर के अन्य साक्ष्यों से यह साबित होता है कि वादी ने वाद भूमि पर अधिक्रमण किया है जिसके लिए एक वैध आदेश पारित किया गया था जिसकी पुष्टि विभिन्न प्राधिकारियों द्वारा की गई है । यह भी निवेदन किया कि वादी को साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए अपने मामले को साबित करने के लिए और स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति, यदि कोई हो, जिसे वादी द्वारा उपयोग नहीं किया गया, के लिए पूर्ण अवसर दिया गया था और इस विलम्बित प्रक्रम पर कोई स्थानीय आयुक्त नियुक्त नहीं किया जा सकता है ।

10. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि उन्होंने वादी द्वारा प्रस्तुत साक्ष्य को निर्दिष्ट किया था, जो एक शपथपत्र प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/बी तथा पूर्ववर्ती स्वामी और

सुरजन सिंह, जिससे पूर्ववर्ती स्वामी ने भूमि क्रय की थी, के बीच हुआ करार प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/सी है । इस करार में किसी खसरा संख्या का उल्लेख नहीं किया गया है । वादी ने वादपत्र में विनिर्दिष्टतः यह अभिकथन नहीं किया है कि कब उसने भूमि क्रय की थी और न ही किसी माह, तारीख या वर्ष या विनिर्दिष्ट अवधि का उल्लेख किया है और मौखिक विक्रय के किन्हीं साक्षियों को भी प्रस्तुत नहीं किया है । अभिलेख पर यह दर्शित करने के लिए कुछ नहीं है कि उस समय पर मौखिक विक्रय विधि के अनुसार अनुज्ञेय थी । यह मात्र साक्ष्य के प्रक्रम पर आया है कि यह प्रत्याख्यान किया गया कि वर्ष 1983 में वादी द्वारा भूमि क्रय की गई थी । यह साबित करने के लिए उन दस्तावेजों या किन्हीं अन्य दस्तावेजों में कोई खसरा संख्या नहीं दिया गया है कि वादी ने पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता शर्मा से वैधतः भूमि क्रय की थी या उक्त पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता शर्मा प्रश्नगत भूमि की स्वामी थी जिसके लिए राजस्व अभिलेखों में कोई प्रविष्टि नहीं है । दूसरी ओर, प्रतिवादियों ने उस पटवारी की परीक्षा की जिसने सहायक कलक्टर, प्रथम श्रेणी को यह रिपोर्ट दी थी कि वादी ने उस भूमि पर अधिक्रमण किया है जो भूमि खसरा सं. 76 में समाविष्ट नहीं है, जिसे वादी ने पूर्ववर्ती स्वामी कन्ता देवी से क्रय करना अभिकथित की है । राज्य सरकार द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध ग्राम बैठल में स्थित खसरा सं. 228/89 में समाविष्ट भूमि के बारे में कार्यवाहियां आरम्भ की थीं जिसके लिए अपीलार्थी के विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां की गई थीं । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा विवाद्यक सं. 1 के बारे में अभिलिखित इस निष्कर्ष के बारे में कोई कमी इंगित नहीं किया गया है कि वादी उस भूमि का स्वामित्व साबित करने में असफल रही जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं । विद्वान् जिला न्यायाधीश ने अभिलेख पर जमाबंदी को निर्दिष्ट करने के पश्चात् विवाद्यक सं. 1 पर अभिलिखित निष्कर्षों के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला कि मौखिक विक्रय अनुज्ञेय नहीं था और भूमि का कोई खसरा संख्या उल्लिखित नहीं था और इसलिए वादी के मौखिक विक्रय के अभिवाक् को विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था । इस संबंध में विद्वान् विचारण न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि विद्वान् प्रथम अपील न्यायालय द्वारा की गई थी और साक्ष्य का कोई पुनर्मूल्यांकन नहीं किया जा सकता जिसके लिए अपीलार्थी द्वारा तर्कों के दौरान कोई मामला नहीं बनाया गया था ।

11. तत्पश्चात्, अपीलार्थी द्वारा मात्र यह मामला बनाया गया कि

उसके द्वारा क्रय भूमि ग्राम धार-की-बेर में स्थित खसरा सं. 76 में है जबकि उसके विरुद्ध कार्यवाहियां ग्राम बैठल में स्थित खसरा सं. 228/89 के बारे में आरम्भ की गई थीं । पहले दिन से ही वादी यह अच्छी तरह से जानती थी कि वह अन्य ग्राम में स्थित कुछ अन्य खसरा संख्या की भूमि के बारे में दावा कर रही है जबकि उसके विरुद्ध ग्राम बैठल में स्थित भूमि के लिए कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं जिसके लिए उसने कभी भी कोई दावा नहीं किया है । उसने मामला लम्बित रहने के दौरान किसी भी समय पर यह अभिकथन या यह साबित नहीं किया है कि यह अतिव्याप्ति थी और यह कि दो ग्रामों की सीमाएं विभिन्न थीं या यह कि उसने ग्राम बैठल की किसी भूमि का कोई अधिक्रमण नहीं किया है । वादी को ही सीमांकन रिपोर्ट प्राप्त करनी थी और उसे विधि के अनुसरण में साबित करना था, जिसमें वह असफल रही । मात्र अपील के प्रक्रम पर ही, सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के आदेश 41, नियम 27 के अधीन एक आवेदन वाद भूमि के बारे में जमाबंदी प्रविष्टियां प्रस्तुत करने और भूमि का सीमांकन कराने के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति करने के लिए फाइल किया गया था । उक्त आवेदन तारीख 19 मई, 1997 को फाइल किया गया था और विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा उसे सही ही नामंजूर किया गया था क्योंकि आवेदन को विचारणीय समय बीतने के पश्चात् फाइल किया गया था । वादी के विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां वर्ष 1983 में आरम्भ की गई थीं । जब पटवारी द्वारा यह रिपोर्ट दी गई थी कि वादी ने सरकारी भूमि पर अधिक्रमण किया है और वादी को ही राजस्व प्रविष्टियों से सम्यक् सीमांकन प्राप्त करना चाहिए था किन्तु उसने विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष ऐसा कोई आवेदन फाइल नहीं किया जिनके समक्ष तारीख 11 अक्तूबर, 1990 से 20 अप्रैल, 1996 अर्थात् लगभग 6 वर्षों तक वाद लम्बित रहा था । इसके पश्चात्, विद्वान् अपील न्यायाधीश के समक्ष अपील तारीख 18 जून, 1996 से 28 अक्तूबर, 1998 तक लम्बित रहा और इस अवधि के दौरान स्थानीय आयुक्त के लिए आवेदन फाइल किया गया था जिसे विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा नामंजूर कर दिया गया था इस मताभिव्यक्ति के साथ कि वित्तीय आयुक्त द्वारा नियुक्त स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट पहले से ही मौजूद है जिसमें स्पष्टतः यह रिपोर्ट किया गया है कि भूमि ग्राम बैठल में ही आती है और तद्नुसार, सीमांकन के लिए आवेदन को विद्वान् जिला न्यायाधीश द्वारा नामंजूर कर दिया गया था ।

12. निर्णय के परिशीलन से यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि निर्देश,

वित्तीय आयुक्त द्वारा नियुक्त स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट के प्रति किया गया था और उक्त रिपोर्ट अंतिम हो गया था और उक्त रिपोर्ट के बारे में कोई आक्षेप फाइल नहीं किए गए थे और सीमांकन पक्षकारों की उपस्थिति में किए गए थे । इसलिए, यह सही ही अभिनिर्धारित किया गया है कि कोई आयोग विषमता सृजित करने के लिए नियुक्त नहीं किया जा सकता है । पक्षकार, जिसने यह दावा करते हुए विभिन्न दावा किया है कि भूमि उस गांव के भीतर नहीं आती है जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई हैं, अतएव, उक्त पक्षकार को ही भूमि का सीमांकन कराने के लिए समुचित आवेदन फाइल करना चाहिए था और उसे ही यह साबित करना चाहिए था कि वह उस भूमि की कब्जे सहित स्वामी है जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं, जिसमें वादी बुरी तरह से असफल रही है । वादी के विरुद्ध भिन्न भूमि के बारे में कार्यवाही की गई थी और उसने भिन्न भूमि को कब्जे में ले लिया था जिसके लिए उसके विरुद्ध कोई भी बेदखली की कार्यवाही आरम्भ नहीं की गई थी । इसलिए, किसी भी दृष्टिकोण से यदि याची के पक्षकथन पर विचार किया जाए तो यह प्रतीत होता है कि उसने मात्र अपील न्यायालय के समक्ष ही सीमांकन के लिए आवेदन करने में अपने अनुसार समय लिया, यद्यपि विद्वान् विचारण न्यायालय के समक्ष लगभग 6 वर्षों से भी अधिक समय तक या जैसा उपर्युक्त उल्लिखित है, मामला लम्बित रहा ।

13. अपीलार्थी के विद्वान् काउंसेल ने **पृथ्वी सिंह** बनाम **बक्शी राम और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का अवलंब लिया, जिसमें यह मत व्यक्त किया गया था कि वादी ने सीमा विवाद के मामले को स्थापित किया था यह अभिकथन करते हुए कि उसके द्वारा काबिज भूमि प्रत्यर्थियों द्वारा दावाकृत भूमि से भिन्न हैं और दोनों भूमि एक-दूसरे से सटी हुई हैं । इसलिए, इस न्यायालय के लिए स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति करना ही शेष बचता है । उपर्युक्त मताभिव्यक्तियां मामले के तथ्यों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश द्वारा व्यक्त की गई थीं । यह सत्य है कि यदि दो स्वामियों के बीच सीमा विवाद है तो स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति करना आवश्यक होता है । तथापि, यदि वादी स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के लिए कोई कदम

[1] 2006 एच. एल. जे. (हि. प्र.) 5.

उठाती है, जिसके द्वारा उसने सहायक कलक्टर के उस आदेश को चुनौती दी है जिसे उन्होंने वर्ष 1983 में उसके विरुद्ध पारित किया था । इसके पश्चात्, उसके द्वारा अपील/पुनरीक्षण आवेदन फाइल किए गए थे और उनमें उसने स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के बारे में कोई प्रार्थना नहीं की थी । वित्तीय आयुक्त द्वारा स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति पुनरीक्षण आवेदन पर की गई थी । स्थानीय आयुक्त की स्पष्ट मताभिव्यक्तियां हैं जिसमें खसरा संख्या, प्रश्नगत भूमि आती है और वाद भूमि प्ररूप भाग है और स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट प्रदर्श पी. डब्ल्यू. 1/ए है । स्थानीय आयुक्त की मताभिव्यक्ति है कि ग्रामों की भूमि के बीच कुछ भूमि है जैसा कि विद्वान् अपील न्यायालय द्वारा भी मत व्यक्त किया गया है । वित्तीय आयुक्त की कार्यवाहियां अपील न्यायालय की मताभिव्यक्तियों के रूप में अंतिम हो गई थीं क्योंकि उक्त रिपोर्ट के विरुद्ध कोई आक्षेप फाइल नहीं किए गए थे । इसलिए, इस प्रक्रम पर यह विचारणीय है कि क्या वादी को स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति कराने के लिए आवेदन करने हेतु अवसर दिया गया था या नहीं और मामले के तथ्यों पर इस प्रश्न का विनिश्चय करने के पूर्व विचार किया जाना चाहिए था कि क्या कई वर्षों के बीतने के पश्चात् इस प्रक्रम पर दिए गए आवेदन को मंजूर करना चाहिए या नहीं । स्थानीय आयुक्त की रिपोर्ट अभिलेख पर है और उक्त रिपोर्ट के बारे में कोई विवाद नहीं किया गया है कि वादी द्वारा सरकारी भूमि पर अधिक्रमण किया गया है और इसलिए, इस न्यायालय के समक्ष इस प्रक्रम पर स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के लिए अथवा स्थानीय आयुक्त की नियुक्ति के लिए आवेदन खारिज करते हुए विद्वान् जिला न्यायाधीश के निष्कर्षों को अपास्त करने के लिए कोई मामला नहीं बनता है । किन्हीं प्रक्रमों पर मुकदमेबाजी का अंत होना चाहिए । बेदखली के लिए कार्यवाहियां वर्ष 1983 में आरम्भ की गई थीं और वादी ने अपील/पुनरीक्षण फाइल करते हुए स्वयं को उपलब्ध सभी उपचारों का उपयोग किया और वह वर्ष 1997 में विद्वान् जिला न्यायाधीश के समक्ष आवेदन फाइल करते हुए उस रिपोर्ट की सत्यता के बारे में आक्षेप नहीं कर सकती है जो रिपोर्ट पहले से ही उसके विरुद्ध थी । 27 वर्षों के पश्चात् इस न्यायालय के समक्ष अब प्रार्थना की गई है जिसे इस प्रक्रम पर ग्रहण नहीं किया जा सकता है ।

14. प्रतिकूल कब्जा के अभिवाक् अथवा अपील में लिए गए आधारों

के बारे में वादी द्वारा कोई पक्षकथन नहीं किया गया कि वह वाद भूमि प्रतिकूल कब्जे में थी क्योंकि उसका दावा यह था कि वह पूर्ववर्ती स्वामी से मौखिक रूप से भूमि के क्रय द्वारा भूमि की स्वामी थी और वादी द्वारा यह कभी भी स्वीकार नहीं किया गया था कि वह कुछ अन्य ग्रामों में समाविष्ट सरकारी भूमि के कब्जे में थी । यद्यपि उसने यह स्वीकृति की थी कि वह विनियमितीकरण के लिए वैकल्पिक रूप से आवेदन करने को तैयार थी, जिसे सरकार को विचार करना था और उस पर सरकारी नीति को ध्यान में रखते हुए समुचित आदेश पारित करना था किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि वादी ने ऐसा कोई दावा किया था कि नियमितीकरण के लिए उसके मामले पर सकारात्मक रूप से विचार किया जाना चाहिए । यह स्पष्ट है कि उसने कभी भी यह स्वीकार नहीं किया या यह दावा किया कि वह खसरा सं. 228/89/6 में समाविष्ट भूमि का प्रतिकूल कब्जे द्वारा कब्जे सहित स्वामी थी जिसके लिए उसके विरुद्ध बेदखली की कार्यवाहियां आरम्भ की गई थीं । इसलिए, प्रतिकूल कब्जे के बारे में कोई विवाद्यक विरचित करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । वादी ने कभी भी प्रतिकूल कब्जे का दावा नहीं किया और उसने कभी भी उसके द्वारा धारित भूमि पर सरकार का स्वामित्व स्वीकार नहीं किया ।

15. इसलिए, मामले के तथ्यों पर सभी दृष्टिकोण से विचार करते हुए, मैं यह अभिनिर्धारित करता हूं कि अपीलार्थी द्वारा फाइल अपील में कोई गुणागुण नहीं है तथा दोनों निचले न्यायालयों द्वारा इस बारे में अभिलिखित निष्कर्ष तथ्य और विधि के सही मूल्यांकन पर आधारित हैं और तद्नुसार, अपील खारिज की जाती है । तथापि, पक्षकार अपने खर्चे स्वयं वहन करेंगे । अन्तरिम आदेश, यदि कोई हो, को भी वातिल किया जाता है ।

अपील खारिज की गई ।

क.

मदन लाल गुप्ता

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 23 जून, 2011

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 का नियम 14] – केन्द्रीय सिविल सेवक द्वारा बिना पूर्व अनुमति के कार्यालय से अनुपस्थित रहना और अनुपस्थिति के दौरान अन्य विभाग के कार्य करने का आरोप – आरोपों की जांच करने के लिए जांच अधिकारी की नियुक्ति करना – लगभग दो दशकों तक जांच लम्बित रहना – जांच के दौरान सेवक को निलम्बित करना और निलम्बन के दौरान ही उसे सेवानिवृत्त करना – सेवक द्वारा सेवानिवृत्ति फायदों के साथ ही निलम्बन के दौरान वेतन, भत्तों आदि की मांग करना – इन परिस्थितियों में विभाग की असंवेदनहीनता ही दर्शित होती है और लगभग दो दशकों तक जांच लम्बित रखना और उस पर अन्तिम विनिश्चय नहीं करना निश्चित तौर पर सम्बन्धित सेवक के विरुद्ध अन्याय ही करना है – अतएव, उसकी मांग उचित, वैध और तर्कसंगत है जिसे स्वीकार करना न्यायोचित और वैध होगा ।

वर्तमान मामले में, तथ्य विचलित करने वाले हैं और प्राधिकारियों की ओर से की गई निष्क्रियता भयभीत करने वाली है । तथापि, याची का पक्षकथन यह है कि उसे तारीख 27 अक्तूबर, 1969 को वाणिज्य में एक प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया था और उसे शासकीय कालेज, मंडी में तैनात किया गया जहां उसने तारीख 8 नवम्बर, 1969 को पद ग्रहण कर लिया था । याची मंडी में सेवारत था तभी उसे शासकीय कालेज, रामपुर में स्थानांतरित कर दिया गया जहां उसने तारीख 4 जून, 1986 को पद ग्रहण किया था । याची ने अपनी पुत्री को दाखिला दिलाने के लिए तारीख 10 जुलाई, 1986 को तीन दिन की आकस्मिक छुट्टी ली थी । उसने तारीख 9 जुलाई, 1986 को एक छुट्टी आवेदन कालेज के प्रधानाचार्य को प्रस्तुत किया था । छुट्टी के दौरान ही याची की पत्नी को कुछ नेत्र संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो गईं जिसे याची ने तारीख 21 जुलाई,

1986 से और 15 दिनों के लिए छुट्टी बढ़ाने का निवेदन किया । याची की पत्नी ठीक नहीं हुई और इसलिए, याची ने तारीख 4 सितम्बर, 1986 तक एक माह की छुट्टी बढ़ाने का निवेदन किया । उसने इस बारे में एक लिखित निवेदन प्रधानाचार्य से किया था । याची ने छुट्टी के दौरान ही अवर सचिव (शिक्षा) से तारीख 11 जनवरी, 1987 का एक पत्र प्राप्त किया जिसमें उसे 15 दिनों के भीतर शासकीय कालेज रामपुर में ड्यूटी ग्रहण करने का निर्देश दिया था जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही आरम्भ की जाएगी । याची ने तारीख 31 जनवरी, 1987 को उत्तर दिया और यह निवेदन किया कि यह प्रतीत होता है कि रामपुर का वातावरण उसकी पत्नी के स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त नहीं है और इसलिए, उसने मानवीय आधारों पर अपनी तैनाती धर्मशाला या सोलन में करने का निवेदन किया । याची ने तारीख 31 जनवरी, 1987 के अपने उत्तर में कोई उत्तर प्राप्त नहीं किया । इसके विपरीत, तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के शासकीय आदेश द्वारा याची को तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया गया । याची ने प्रत्यर्थी सं. 2 से तारीख 20 अप्रैल/21 मई, 1987 का आरोप पत्र भी प्राप्त किया जिसमें यह अभिकथित था कि याची जानबूझकर तारीख 19 जुलाई, 1986 से अनुपस्थित रहा है और यह भी कि छुट्टी के दौरान याची नियमों के विरुद्ध 'हीरो फाइबर्स लिमिटेड इंडस्ट्रीयल एरिया, लुधियाना' में सेवा कर रहा था । आरोप पत्र प्राप्त करने के पश्चात् याची ने अपना उत्तर प्रस्तुत किया और आरोपों से इनकार किया । उसने अपना निलम्बन आदेश वापस लेने और उसे ड्यूटी ग्रहण करना मंजूर करने के लिए निवेदन किया । याची द्वारा आरोप पत्र के बारे में दिए गए स्पष्टीकरण को प्रत्यर्थियों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया, इसके बजाय प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा जारी तारीख 19 मार्च, 1988 के शासकीय आदेश द्वारा केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 के नियम 14 के अधीन याची के विरुद्ध एक जांच कराने का विनिश्चय किया गया । तारीख 19 मार्च, 1988 को श्री बी. के. गोयल, विशेष ड्यूटी अधिकारी (कालेज), शिक्षा निदेशालय, हिमाचल प्रदेश को जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया और एक अन्य उसी तारीख के शासकीय आदेश द्वारा श्री दौलत राम, अधीक्षक (कालेज शाखा), शिक्षा निदेशालय, हिमाचल प्रदेश को वर्तमान अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया । याची ने जांच कार्यवाहियां करने के लिए जांच अधिकारी से कोई संसूचना प्राप्त नहीं की । तथापि, तारीख 11 अगस्त, 1989 को एक लोक सूचना जांच अधिकारी के समक्ष याची की अनुपस्थिति के बारे में

समाचारपत्रों में प्रकाशिक किया गया था । लोक सूचना की जानकारी होने पर, याची ने तारीख 11 अगस्त, 1989 को प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह पत्र लिखा कि उसने जांच अधिकारी से कोई संसूचना प्राप्त नहीं की थी इसलिए उसने जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं होने के अभिकथनों से इनकार किया और खंडन किया । याची ने तारीख 21 अगस्त, 1989 को उनके समक्ष उपस्थित होने के लिए उसे निदेश देने के संबंध में वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को एक टेलीग्राम भी भेजा था और उसने अपनी पुत्री की बीमारी के कारण उस तारीख को उपस्थित होने में अपनी असमर्थतता व्यक्त की थी । याची ने हिमाचल प्रदेश सरकार के अवर सचिव (शिक्षा) से तारीख 1 सितम्बर, 1989 को एक अन्य अनुस्मारक पत्र प्राप्त किया जिसमें उसे तारीख 25 सितम्बर, 1989 को अपराह्न 3.30 बजे सचिव (शिक्षा) के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध एकपक्षीय विनिश्चय लिया जाएगा । उसके बाद याची को तारीख 7 मार्च, 1990 को सचिव (शिक्षा) के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने की अनुमति दी गई । याची ने अपनी प्रास्थिति स्पष्ट की और निलम्बन आदेश वापस लेने तथा उसे ड्यूटी ग्रहण करने की अनुमति देने की प्रार्थना की । सचिव (शिक्षा) ने याची को यह सुनिश्चित किया कि वह व्यक्तिगत तौर पर मामले को देखेंगे । याची ने कुछ समय तक इन्तजार किया किन्तु कोई भी अपने पक्ष में उत्तर प्राप्त नहीं किया, इसलिए, याची ने तारीख 23 मई, 1991 को एक पत्र भेजा । इसके पश्चात्, याची ने कई लिखित अनुस्मारक और निवेदन किए किन्तु इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ । याची को अंतिम बार ड्यूटी ग्रहण करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के अधीन तारीख 23 सितम्बर, 2003 को एक नोटिस जारी किया गया जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध विधि में अनुज्ञेय समुचित कदम उठाए जाएंगे । तारीख 28 सितम्बर, 2003 को याची ने व्यक्तिगत तौर पर एक अभ्यावेदन सचिव (शिक्षा) को सौंपा और उन्हें तारीख 7 मार्च, 1990 की अपनी व्यक्तिगत सुनवाई के बारे में पुनः सूचित किया । सचिव (शिक्षा) ने प्रत्यर्थी सं. 2 को विधिक नोटिस पर लिए कार्यवाही के बारे में पुनः सूचित किया । प्रत्यर्थियों ने याची के विरुद्ध जांच पूरी नहीं की । प्रत्यर्थियों ने बिना किसी पर्याप्त कारण के जांच कार्यवाहियां पूरी नहीं की न ही याची का निलम्बन आदेश वापस लिया । याची ने अपने जी. पी. एफ. निर्मुक्ति के लिए आवेदन दिया जो उसे अपने वित्तीय दायित्वों को पूरा करने के लिए अपेक्षित था किन्तु उसे भी प्रत्यर्थियों द्वारा मंजूर नहीं किया गया । याची अपनी ड्यूटी ग्रहण

करने के लिए तैयार और रजामंद था किन्तु उसे बिना किसी ठीक और पर्याप्त कारण के ड्यूटी ग्रहण करने की अनुज्ञा नहीं दी गई । प्रत्यर्थी मामले पर सोते रहे जिससे याची के सेवा कैरियर में अपूरणीय क्षति कारित हुई है । इससे व्यथित होकर याची ने वर्तमान रिट याचिका फाइल की । न्यायालय द्वारा रिट याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – दोनों पक्षों की दलीलों की विवेचना करने के अनुक्रम में, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि किस प्रकार याचिका पर कार्यवाही की गई । याचिका को तारीख 9 जनवरी, 2004 को फाइल पर लिया गया और उस तारीख को ही 6 सप्ताह के भीतर प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने के लिए कहा गया और तीन माह के भीतर जांच पूरी करने का आदेश दिया गया । प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने और जांच पूरी करने के लिए पुनः समय दिया गया किन्तु तारीख 21 जुलाई, 2006 तक न तो उन्होंने उत्तर फाइल किया न ही जांच पूरी की । प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने के अधिकार को तारीख 31 जुलाई, 2006 को बंद कर दिया गया । तारीख 8 सितम्बर, 2006 के आदेश में यह उपदर्शित है कि अवर सचिव (शिक्षा) द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार को जारी तारीख 4 सितम्बर, 2006 के पत्र द्वारा जांच पूरी कर ली गई थी और जांच रिपोर्ट को अनुशासनिक प्राधिकारी, तत्कालीन सचिव (शिक्षा) द्वारा तारीख 3 मार्च, 1990 को स्वीकार कर ली गई थी । याचिका तारीख 11 दिसम्बर, 2010 को स्वीकार की गई थी और तारीख 28 दिसम्बर, 2010 को मामले में तारीख 5 जनवरी, 2011 नियत की गई । जांच अभिलेखों को भी उसी तारीख पर प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया । तारीख 5 जनवरी, 2011 को प्रत्यर्थी सं. 2 न्यायालय में उपस्थित हुआ । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह कथन किया कि जांच पर अन्ततोगत्वा विनिश्चय सचिव/प्रमुख सचिव (शिक्षा) द्वारा लिया जाना था । तारीख 6 जनवरी, 2011 को प्रमुख सचिव (शिक्षा) अदालत में उपस्थित हुआ और यह निवेदन किया कि पूर्ण अभिलेखों को खोजा नहीं जा सकता है और इसलिए, वह उन्हें बेहतर प्रयास के बावजूद न्यायालय में प्रस्तुत नहीं कर सकता है और अतिरिक्त समय देने की प्रार्थना की । मामले में अभिलेख प्रस्तुत करने के लिए पुनः तारीख 3 मार्च, 2011 नियत की गई । याची के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियों पर विनिश्चय करने के लिए प्रमुख सचिव (शिक्षा) ने तारीख 25 फरवरी, 2011 के शपथपत्र द्वारा एक माह का समय देने की प्रार्थना की । प्रत्यर्थियों ने प्रमुख सचिव (शिक्षा) के शपथपत्र द्वारा समर्थित 2011

की सिविल प्रकीर्ण याचिका (टी.) सं. 103 फाइल की जिसमें यह कथन किया गया कि मामला न्यायाधीन है और इसलिए, प्रमुख सचिव (शिक्षा) अपने स्तर पर मामले में विनिश्चय करने की स्थिति में नहीं है । इन परिस्थितियों में, मामला या तो उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जा सकता है या याची को प्रमुख सचिव (शिक्षा) के समक्ष पूर्ण तथ्यों को फाइल पर रखने का निर्देश दिया जा सकता है जो उसके विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियों और याची की सुनवाई के पश्चात् उसकी अप्राधिकृत छुट्टी को विनिश्चित करने के लिए प्राधिकृत है । यह आवेदन तारीख 18 मई, 2011 को निपटाया गया था और याचिका में सुनवाई करने का आदेश दिया गया था । याची को तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के शासकीय आदेश द्वारा तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया गया था । याची के उत्तर तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के ज्ञापन द्वारा दो कारणों पर आरोप पत्र दिया गया था – (i) तारीख 19 जुलाई, 1986 से ड्यूटी से अनुपस्थित (ii) अनुपस्थित अवधि के दौरान नियम के अतिलंघन में हीरो फाइबर्स लिमिटेड में सेवा भी कर रहा था । याची ने तारीख 1 जून, 1987 के उत्तर द्वारा आरोपों के ज्ञापन से इनकार किया । तारीख 19 मार्च, 1988 को श्री बी. के. गोयल को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया और उसी तारीख के आदेश द्वारा श्री दौलत राम को प्रजेंटिंग आफिसर नियुक्त किया गया । याची ने यह आधार लिया कि उसे जांच की तारीख नियत करने के बारे में जांच अधिकारी से कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई । तारीख 21 अगस्त, 1989 की लोक सूचना के उत्तर में याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के समक्ष तारीख 17 अगस्त, 1989 को उत्तर प्रस्तुत किया कि उसने कोई नोटिस प्राप्त नहीं किया । उसने अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त अवसर देने का निवेदन किया । अवर सचिव (शिक्षा) ने तारीख 1 सितम्बर, 1989 के ज्ञापन द्वारा याची को यह सूचित किया कि उसने याची को अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के कार्यालय में तारीख 25 सितम्बर, 1989 को अपराह्न 3.30 बजे व्यक्तिगत तौर पर उपस्थित होने के लिए अंतिम अवसर दिया था । याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 23 मई, 1991, 10 दिसम्बर, 1991, 10 सितम्बर, 1993 और 19 दिसम्बर, 1995 के उत्तर और सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 5 जून, 1992 के उत्तर को तारीख 7 मार्च, 1990 की व्यक्तिगत सुनवाई के प्रति निर्दिष्ट किया और यह निवेदन किया कि वह अपनी ड्यूटी ग्रहण करने के लिए इच्छुक है और उसे उसकी तैनाती का स्थान सूचित किया जाए ।

याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) से पुनः तारीख 21 जनवरी, 1996 के उत्तर द्वारा यह निवेदन किया कि उसकी सेवाएं पुनः बहाल की जाएं और उसे उसकी तैनाती स्थल के बारे में सूचित किया जाए । याची ने तारीख 18 अगस्त, 1999, तारीख 22 सितम्बर, 2000 के पत्रों द्वारा अपनी सेवाओं को पुनः बहाल करने के लिए और उसे निर्वाह भत्ते का संदाय करने के निवेदन को दोहराया । याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को अपनी सेवाएं बहाल करने और तैनाती स्थान को सूचित करने के लिए पुनः तारीख 15 जनवरी, 2001 को एक पत्र लिखा । याची ने सचिव (शिक्षा) को तारीख 5 दिसम्बर, 2001 को लिखित पत्र द्वारा अपनी सेवाएं बहाल करने के लिए निवेदन को पुनः दोहराया । अन्ततोगत्वा याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को तारीख 13 सितम्बर, 2003 को नोटिस जारी किया और प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 से अपनी ड्यूटी ग्रहण करने के साथ ही सभी पारिणामिक फायदों को मंजूर करने के लिए निवेदन किया । याची ने सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 28 सितम्बर, 2003 के पत्र द्वारा अपनी ड्यूटी ग्रहण करने को मंजूर करने के लिए पुनः निवेदन किया । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के अधीन नोटिस के संदर्भ में प्रमुख सचिव (शिक्षा) ने तारीख 7 अक्तूबर, 2003 के पत्र द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 को आवश्यक कार्यवाही करने और विभाग को रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश दिया । याची की शिकायत यह थी कि प्रत्यर्थी सं. 1 के अंतहीन पत्राचारों के बावजूद जांच पूरी नहीं की गई न ही याची को निर्वाह भत्ता, वेतन या कोई अन्य संदाय किया गया । (पैरा 12, 13, 14, 15, 16 और 17)

वर्तमान मामले में, याची के विरुद्ध आरोप कतिपय अवधि के दौरान ड्यूटी से अनुपस्थित रहना और अनुपस्थित अवधि के दौरान हीरो फाइबर्स लिमिटेड में सेवा करना है । याची ने लगभग 18 वर्षों की सेवा की थी जब उसे तारीख 20 मार्च/21 मई, 1987 को आरोपित किया गया था । प्रत्यर्थियों ने यह आधार लिया है कि जांच पूरी कर ली गई थी, रिपोर्ट को अनुशासनिक प्राधिकारी सचिव (शिक्षा) द्वारा तारीख 7 मार्च, 1990 को स्वीकार कर लिया गया था । प्रमुख सचिव (शिक्षा) के तारीख 25 फरवरी, 2011 के शपथपत्र में, यह कथन किया गया है कि याची तारीख 7 मार्च, 1990 को वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के समक्ष उपस्थित हुआ था । इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि जब अनुशासनिक प्राधिकारी ने तारीख 7 मार्च, 1990 को जांच रिपोर्ट स्वीकार कर ली थी

तो क्यों नहीं इस विनिश्चय को तारीख 7 मार्च, 1990 या इसके पश्चात् याची को संसूचित किया गया । याची ने विभिन्न पत्र लिखे जिसे अभिलेख पर रखा गया जिसमें उसने तारीख 7 मार्च, 1990 के पश्चात् उसे ड्यूटी ग्रहण करने के लिए मंजूर करते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 से निवेदन किया गया था किन्तु याची द्वारा लिखे गए पत्रों का कोई जवाब नहीं दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा यह आधार लिया गया कि फाइल उपलब्ध नहीं है फिर भी याची को सेवानिवृत्त करने का विनिश्चय लिया गया । तारीख 15 मार्च, 2003 के पत्र के साथ संलग्न नोटिस में यह कथन किया गया है कि याची की सेवानिवृत्ति का कोई आदेश जारी नहीं किया गया था । यह तथ्य शेष रह जाता है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा दो दशकों से भी अधिक समय बीत जाने के पश्चात् भी जांच में जांच रिपोर्ट के आधार पर कोई अंतिम विनिश्चय नहीं लिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा याची को पूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत करने के बारे में निदेश देने का निवेदन जिसे कि प्रमुख सचिव (शिक्षा) द्वारा विनिश्चय किया जा सके, एक कटु मजाक है । याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदन में सार यह है कि याची का सेवा कैरियर अंतहीन जांच द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ है । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा याची को आरोपित करने के पश्चात् याची को कोई निर्वाह भत्ता, वेतन या अन्य संदाय किया गया था । यह याची के प्रति गंभीर प्रतिकूलता कारित करता है । अभिलेख पर जांच रिपोर्ट के आधार पर अनुशासनिक अधिकारी का कोई आदेश नहीं है । प्राधिकारियों ने यह महसूस नहीं किया कि किस प्रकार एक कर्मचारी बिना वेतन, निर्वाह भत्ते, पेंशन फायदों आदि के दो दशकों से भी अधिक समय तक जीवित रह सकता है । प्राधिकारी पूर्णतया संवेदनशील रहे । जांच का निष्कर्ष निकालने में याची की ओर से हुआ विलम्ब साबित नहीं किया गया है । परिस्थिति जिनसे संबंध है, उससे न केवल कर्मचारी प्रभावित हुआ है अपितु उसका सम्पूर्ण कुटुम्ब प्रभावित हुआ है । यह ठीक मामला है जिसमें याची के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही का अंत कर दिया जाना चाहिए और अब इसे एक दिन भी जारी रखना मंजूर नहीं करना चाहिए । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह कथन किया है कि याची, वर्ष 2005 में ही अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका है, इसलिए, उसे पिछली प्रास्थिति में बहाल करना संभव नहीं है । (पैरा 23 और 24)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2006]	(2006) 5 एस. सी. सी. 88 : **एम. वी. बिजलानी** बनाम **भारत संघ और अन्य ;**	21
[2005]	(2005) 6 एस. सी. सी. 636 : **पी. वी. महादेवन** बनाम **एम. डी. टी. एन. हाउसिंग बोर्ड ;**	20
[2002]	(2002) 7 एस. सी. सी. 305 : **सचिव, वन विभाग और अन्य** बनाम **अब्दुल रसूल चौधरी ;**	22
[1998]	(1998) 4 एस. सी. सी. 154 : **आंध्र प्रदेश राज्य** बनाम **एन. राधाकृष्णन ।**	19

आरम्भिक (सिविल) अधिकारिता : 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 10178.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से — सर्वश्री डी. पी. गुप्ता, अधिवक्ता के साथ के. डी. श्रीधर, अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से — सुश्री रूमा कौशिक, अपर महाधिवक्ता

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – तारीख 6 जनवरी, 2004 को फाइल रिट याचिका में मुख्यतः निम्नलिखित प्रार्थना की गई है :–

(i) कि प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया जाए कि वे आवेदक को शासकीय कालेज, रामपुर बशेहर, जिला शिमला या प्रत्यर्थियों के किसी अन्य कालेज में वाणिज्य में प्राध्यापक के रूप में तुरन्त ड्यूटी ग्रहण करना मंजूर करे ।

(ii) कि प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिया जाए कि वे आवेदक की अनुपस्थित अवधि को नियमित करे और उसे उस अवधि के अवशिष्ट भत्ते की रकम संदाय करे जिसके दौरान वह निलम्बित रहा ।

(iii) कि प्रत्यर्थियों को यह निर्देश दिए जाएं कि वे आवेदक को जी. पी. एफ. के बकाया और ग्राह्य रकम का संदाय करे ।

(iv) कि यदि आवेदक के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाहियां आरम्भ की गई हैं तो उसे अभिखंडित और अपास्त किया जाए ।

याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह कथन किया गया कि याची ने वर्ष 2005 में ही अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर ली थी किन्तु जहां तक याची की जानकारी है प्रत्यर्थियों ने सेवा से याची की अधिवर्षिता आदेश जारी नहीं किया है ।

2. याचिका में अन्तर्वलित प्रश्न यह है कि एक कर्मचारी को कितने लम्बे समय तक विभागीय कार्यवाहियों में घसीटा जा सकता है । तथ्य विचलित करने वाले हैं और प्राधिकारियों की ओर से की गई निष्क्रियता भयभीत करने वाली है । तथापि, याची का पक्षकथन यह है कि उसे तारीख 27 अक्तूबर, 1969 को वाणिज्य में एक प्राध्यापक के रूप में नियुक्त किया गया था और उसे शासकीय कालेज, मंडी में तैनात किया गया जहां उसने तारीख 8 नवम्बर, 1969 को पद ग्रहण कर लिया था । याची मंडी में सेवारत था तभी उसे शासकीय कालेज, रामपुर में स्थानांतरित कर दिया गया जहां उसने तारीख 4 जून, 1986 को पद ग्रहण किया था । याची ने अपनी पुत्री को दाखिला दिलाने के लिए तारीख 10 जुलाई, 1986 को तीन दिन की आकस्मिक छुट्टी ली थी । उसने तारीख 9 जुलाई, 1986 को एक छुट्टी आवेदन कालेज के प्रधानाचार्य को प्रस्तुत किया था ।

3. छुट्टी के दौरान ही याची की पत्नी को कुछ नेत्र संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो गईं जिसे याची ने तारीख 21 जुलाई, 1986 से और 15 दिनों के लिए छुट्टी बढ़ाने का निवेदन किया । याची की पत्नी ठीक नहीं हुई और इसलिए, याची ने तारीख 4 सितम्बर, 1986 तक एक माह की छुट्टी बढ़ाने का निवेदन किया । उसने इस बारे में एक लिखित निवेदन प्रधानाचार्य से किया था ।

4. याची ने छुट्टी के दौरान ही अवर सचिव (शिक्षा) से तारीख 11 जनवरी, 1987 का एक पत्र प्राप्त किया जिसमें उसे 15 दिनों के भीतर शासकीय कालेज रामपुर में ड्यूटी ग्रहण करने का निर्देश दिया था जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध अनुशासनात्मक कार्यवाही आरम्भ की जाएगी । याची ने तारीख 31 जनवरी, 1987 को उत्तर दिया और यह निवेदन किया कि यह प्रतीत होता है कि रामपुर का वातावरण उसकी पत्नी के स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त नहीं है और इसलिए, उसने मानवीय आधारों पर अपनी तैनाती धर्मशाला या सोलन में करने का निवेदन किया । याची ने

तारीख 31 जनवरी, 1987 के अपने उत्तर में कोई उत्तर प्राप्त नहीं किया । इसके विपरीत, तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के शासकीय आदेश द्वारा याची को तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया गया । याची ने प्रत्यर्थी सं. 2 से तारीख 20 मार्च/21 मई, 1987 का आरोप पत्र भी प्राप्त किया जिसमें यह अभिकथित था कि याची जानबूझकर तारीख 19 जुलाई, 1986 से अनुपस्थित रहा है और यह भी कि छुट्टी के दौरान याची नियमों के विरुद्ध 'हीरो फाइबर्स लिमिटेड इंडस्ट्रीयल एरिया, लुधियाना' में सेवा कर रहा था ।

5. आरोप पत्र प्राप्त करने के पश्चात् याची ने अपना उत्तर प्रस्तुत किया और आरोपों से इनकार किया । उसने अपना निलम्बन आदेश वापस लेने और उसे ड्यूटी ग्रहण करना मंजूर करने के लिए निवेदन किया ।

6. याची द्वारा आरोप पत्र के बारे में दिए गए स्पष्टीकरण को प्रत्यर्थियों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया, इसके बजाय प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा जारी तारीख 19 मार्च, 1988 के शासकीय आदेश द्वारा केन्द्रीय सिविल सेवा (वर्गीकरण, नियंत्रण और अपील) नियम, 1965 के नियम 14 के अधीन याची के विरुद्ध एक जांच कराने का विनिश्चय किया गया । तारीख 19 मार्च, 1988 को श्री बी. के. गोयल, विशेष ड्यूटी अधिकारी (कालेज), शिक्षा निदेशालय, हिमाचल प्रदेश को जांच अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया और एक अन्य उसी तारीख के शासकीय आदेश द्वारा श्री दौलत राम, अधीक्षक (कालेज शाखा), शिक्षा निदेशालय, हिमाचल प्रदेश को वर्तमान अधिकारी के रूप में नियुक्त किया गया ।

7. याची ने जांच कार्यवाहियां करने के लिए जांच अधिकारी से कोई संसूचना प्राप्त नहीं की । तथापि, तारीख 11 अगस्त, 1989 को एक लोक सूचना जांच अधिकारी के समक्ष याची की अनुपस्थिति के बारे में समाचारपत्रों में प्रकाशित किया गया था । लोक सूचना की जानकारी होने पर, याची ने तारीख 11 अगस्त, 1989 को प्रत्यर्थी सं. 2 ने यह पत्र लिखा कि उसने जांच अधिकारी से कोई संसूचना प्राप्त नहीं की थी इसलिए उसने जांच अधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं होने के अभिकथनों से इनकार किया और खंडन किया । याची ने तारीख 21 अगस्त, 1989 को उनके समक्ष उपस्थित होने के लिए उसे निदेश देने के संबंध में वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को एक टेलीग्राम भी भेजा था और उसने अपनी पुत्री की बीमारी के कारण उस तारीख को उपस्थित होने में अपनी असमर्थता व्यक्त की थी ।

8. याची ने हिमाचल प्रदेश सरकार के अवर सचिव (शिक्षा) से तारीख 1 सितम्बर, 1989 को एक अन्य अनुस्मारक पत्र प्राप्त किया जिसमें उसे तारीख 25 सितम्बर, 1989 को अपराह्न 3.30 बजे सचिव (शिक्षा) के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध एकपक्षीय विनिश्चय लिया जाएगा । उसके बाद याची को तारीख 7 मार्च, 1990 को सचिव (शिक्षा) के समक्ष व्यक्तिगत रूप से उपस्थित होने की अनुमति दी गई । याची ने अपनी प्रास्थिति स्पष्ट की और निलम्बन आदेश वापस लेने तथा उसे ड्यूटी ग्रहण करने की अनुमति देने की प्रार्थना की । सचिव (शिक्षा) ने याची को यह सुनिश्चित किया कि वह व्यक्तिगत तौर पर मामले को देखेंगे । याची ने कुछ समय तक इंतजार किया किन्तु कोई भी अपने पक्ष में उत्तर प्राप्त नहीं किया, इसलिए, याची ने तारीख 23 मई, 1991 को एक पत्र भेजा । इसके पश्चात्, याची ने कोई लिखित अनुस्मारक और निवेदन किया किन्तु इसका कोई प्रभाव नहीं हुआ । याची को अंतिम बार ड्यूटी ग्रहण करने के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के अधीन तारीख 23 सितम्बर, 2003 को एक नोटिस जारी किया गया जिसमें असफल रहने पर उसके विरुद्ध विधि में अनुज्ञेय समुचित कदम उठाए जाएंगे ।

9. तारीख 28 सितम्बर, 2003 को याची ने व्यक्तिगत तौर पर एक अभ्यावेदन सचिव (शिक्षा) को सौंपा और उन्हें तारीख 7 मार्च, 1990 की अपनी व्यक्तिगत सुनवाई के बारे में पुनः सूचित किया । सचिव (शिक्षा) ने प्रत्यर्थी सं. 2 को विधिक नोटिस पर लिए कार्यवाही के बारे में पुनः सूचित किया । प्रत्यर्थियों ने याची के विरुद्ध जांच पूरी नहीं की । प्रत्यर्थियों ने बिना किसी पर्याप्त कारण के जांच कार्यवाहियां पूरी नहीं की न ही याची का निलम्बन आदेश वापस लिया ।

10. याची ने अपने जी. पी. एफ. निर्मुक्ति के लिए आवेदन दिया जो उसे अपने वित्तीय दायित्वों को पूरा करने के लिए अपेक्षित था किन्तु उसे भी प्रत्यर्थियों द्वारा मंजूर नहीं किया गया । याची अपनी ड्यूटी ग्रहण करने के लिए तैयार और रजामंद था किन्तु उसे बिना किसी ठीक और पर्याप्त कारण के ड्यूटी ग्रहण करने की अनुज्ञा नहीं दी गई । प्रत्यर्थी मामले पर सोते रहे जिससे याची के सेवा कैरियर में अपूरणीय क्षति कारित हुई है ।

11. मैंने याची के विद्वान् अधिवक्ता श्री डी. पी. गुप्ता और प्रत्यर्थियों के अपर महाधिवक्ता सुश्री रूमा कौशिक को सुना । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह कथन किया कि याची वर्ष 2005 में ही अधिवर्षिता की

आयु प्राप्त कर चुका था किन्तु प्रत्यर्थी सं. 1 ने याची को सेवा से अधिवर्षिता करते हुए सेवानिवृत्ति का कोई आदेश पारित नहीं किया । यह तर्क दिया गया कि याची एक अंतहीन विभागीय जांच झेल रहा है जिससे उसका सेवा कैरियर खराब हो गया है और उसे असम्यक् परेशानी कारित हुई है । याची को कोई निर्वाह भत्ता, वेतन और जी. पी. एफ. भी संदत्त नहीं किया गया जो उसे अपनी वित्तीय दायित्वों को पूरा करने के लिए अपेक्षित था । प्रत्यर्थियों ने पूर्णरूपेण अवैध तरीके से कार्य किया और उनका दृष्टिकोण पूर्णतया अमानवीय था । उन्होंने यह निवेदन किया कि लगभग 22 वर्ष बीत चुके हैं किन्तु प्रत्यर्थियों ने अभी तक जांच पूरी नहीं की । इसके विपरीत 2011 की सिविल प्रकीर्ण याचिका (टी.) सं. 103 द्वारा जांच पर विनिश्चय करने के लिए प्रमुख सचिव (शिक्षा) के समक्ष पूर्ण तथ्यों को रखने के लिए याची को निर्देश देते हुए एक बिल्कुल भिन्न मामला फाइल किया गया । यह निवेदन किया गया है कि अब भी प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 का जांच बन्द करने का इरादा नहीं है । इन परिस्थितियों में, याची के विद्वान् काउंसेल ने जांच अभिखंडित करने की प्रार्थना करते हुए प्रत्यर्थियों को याची का वेतन बकाया, पेंशन और अन्य बकायों को कुछ नियत समय के भीतर निर्मुक्त करने का निर्देश देने की भी प्रार्थना की । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह निवेदन किया कि याची ने जांच में सहयोग नहीं किया और अब अज्ञात कारणों से जांच फाइल खोजे जाने योग्य नहीं है । याची को यह निर्देश देने के लिए एक प्रार्थना की गई कि वह प्रमुख सचिव (शिक्षा) के समक्ष पूर्ण तथ्यों को रखे ताकि वे यथाशीघ्र तारीख पर ही जांच विनिश्चित करने के लिए समर्थ हो सके । विद्वान् अपर महाधिक्ता ने यह निवेदन किया कि याची जांच फाइल उपलब्ध नहीं होने की स्थिति का फायदा उठाने की कोशिश कर रहा है ।

12. दोनों पक्षों की दलीलों की विवेचना करने के अनुक्रम में, यह उल्लेख करना आवश्यक है कि किस प्रकार याचिका पर कार्यवाही की गई । याचिका को तारीख 9 जनवरी, 2004 को फाइल पर लिया गया और उस तारीख को ही 6 सप्ताह के भीतर प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने के लिए कहा गया और तीन माह के भीतर जांच पूरी करने का आदेश दिया गया । प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने और जांच पूरी करने के लिए पुनः समय दिया गया किन्तु तारीख 21 जुलाई, 2006 तक न तो उन्होंने उत्तर फाइल किया न ही जांच पूरी की । प्रत्यर्थियों को उत्तर फाइल करने के अधिकार को तारीख 31 जुलाई, 2006 को बंद कर दिया

गया । तारीख 8 सितम्बर, 2006 के आदेश में यह उपदर्शित है कि अवर सचिव (शिक्षा) द्वारा हिमाचल प्रदेश सरकार को जारी तारीख 4 सितम्बर, 2006 के पत्र द्वारा जांच पूरी कर ली गई थी और जांच रिपोर्ट को अनुशासनिक प्राधिकारी, तत्कालीन सचिव (शिक्षा) द्वारा तारीख 3 मार्च, 1990 को स्वीकार कर ली गई थी ।

13. याचिका तारीख 11 दिसम्बर, 2010 को स्वीकार की गई थी और तारीख 28 दिसम्बर, 2010 को मामले में तारीख 5 जनवरी, 2011 नियत की गई । जांच अभिलेखों को भी उसी तारीख पर प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया । तारीख 5 जनवरी, 2011 को प्रत्यर्थी सं. 2 न्यायालय में उपस्थित हुआ । विद्वान् अपर महाधिवक्ता ने यह कथन किया कि जांच पर अन्ततोगत्वा विनिश्चय सचिव/प्रमुख सचिव (शिक्षा) द्वारा लिया जाना था ।

14. तारीख 6 जनवरी, 2011 को प्रमुख सचिव (शिक्षा) अदालत में उपस्थित हुआ और यह निवेदन किया कि पूर्ण अभिलेखों को खोजा नहीं जा सकता है और इसलिए, वह उन्हें बेहतर प्रयास के बावजूद न्यायालय में प्रस्तुत नहीं कर सकता है और अतिरिक्त समय देने की प्रार्थना की । मामले में अभिलेख प्रस्तुत करने के लिए पुनः तारीख 3 मार्च, 2011 नियत की गई । याची के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियों पर विनिश्चय करने के लिए प्रमुख सचिव (शिक्षा) ने तारीख 25 फरवरी, 2011 के शपथपत्र द्वारा एक माह का समय देने की प्रार्थना की ।

15. प्रत्यर्थियों ने प्रमुख सचिव (शिक्षा) के शपथपत्र द्वारा समर्थित 2011 की सिविल प्रकीर्ण याचिका (टी.) सं. 103 फाइल की जिसमें यह कथन किया गया कि मामला न्यायाधीन है और इसलिए, प्रमुख सचिव (शिक्षा) अपने स्तर पर मामले में विनिश्चय करने की स्थिति में नहीं है । इन परिस्थितियों में, मामला या तो उच्च न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया जा सकता है या याची को प्रमुख सचिव (शिक्षा) के समक्ष पूर्ण तथ्यों को फाइल पर रखने का निर्देश दिया जा सकता है जो उसके विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियों और याची की सुनवाई के पश्चात् उसकी अप्राधिकृत छुट्टी को विनिश्चित करने के लिए प्राधिकृत है । यह आवेदन तारीख 18 मई, 2011 को निपटाया गया था और याचिका में सुनवाई करने का आदेश दिया गया था ।

16. याची को तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के शासकीय आदेश

द्वारा तत्काल प्रभाव से निलम्बित कर दिया गया था । याची के उत्तर तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 के ज्ञापन द्वारा दो कारणों पर आरोप पत्र दिया गया था – (i) तारीख 19 जुलाई, 1986 से ड्यूटी से अनुपस्थित (ii) अनुपस्थित अवधि के दौरान नियम के अतिलंघन में हीरो फाइबर्स लिमिटेड में सेवा भी कर रहा था । याची ने तारीख 1 जून, 1987 के उत्तर द्वारा आरोपों के ज्ञापन से इनकार किया । तारीख 19 मार्च, 1988 को श्री बी. के. गोयल को जांच अधिकारी नियुक्त किया गया और उसी तारीख के आदेश द्वारा श्री दौलत राम को प्रजेंटिंग आफिसर नियुक्त किया गया । याची ने यह आधार लिया कि उसे जांच की तारीख नियत करने के बारे में जांच अधिकारी से कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई । तारीख 21 अगस्त, 1989 की लोक सूचना के उत्तर में याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के समक्ष तारीख 17 अगस्त, 1989 को उत्तर प्रस्तुत किया कि उसने कोई नोटिस प्राप्त नहीं किया । उसने अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त अवसर देने का निवेदन किया । अवर सचिव (शिक्षा) ने तारीख 1 सितम्बर, 1989 के ज्ञापन द्वारा याची को यह सूचित किया कि उसने याची को अपना मामला प्रस्तुत करने के लिए वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के कार्यालय में तारीख 25 सितम्बर, 1989 को अपराह्न 3.30 बजे व्यक्तिगत तौर पर उपस्थित होने के लिए अंतिम अवसर दिया था ।

17. याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 23 मई, 1991, 10 दिसम्बर, 1991, 10 सितम्बर, 1993 और 19 दिसम्बर, 1995 के उत्तर और सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 5 जून, 1992 के उत्तर को तारीख 7 मार्च, 1990 की व्यक्तिगत सुनवाई के प्रति निर्दिष्ट किया और यह निवेदन किया कि वह अपनी ड्यूटी ग्रहण करने के लिए इच्छुक है और उसे उसकी तैनाती का स्थान सूचित किया जाए । याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) से पुनः तारीख 21 जनवरी, 1996 के उत्तर द्वारा यह निवेदन किया कि उसकी सेवाएं पुनः बहाल की जाएं और उसे उसकी तैनाती स्थल के बारे में सूचित किया जाए । याची ने तारीख 18 अगस्त, 1999, तारीख 22 सितम्बर, 2000 के पत्रों द्वारा अपनी सेवाओं को पुनः बहाल करने के लिए और उसे निर्वाह भत्ते का संदाय करने के निवेदन को दोहराया । याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को अपनी सेवाएं बहाल करने और तैनाती स्थान को सूचित करने के लिए पुनः तारीख 15 जनवरी, 2001 को एक पत्र लिखा । याची ने सचिव (शिक्षा) को तारीख 5 दिसम्बर, 2001 को लिखित पत्र द्वारा अपनी

सेवाएं बहाल करने के लिए निवेदन को पुनः दोहराया । अन्ततोगत्वा याची ने वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) को तारीख 13 सितम्बर, 2003 को नोटिस जारी किया और प्रत्यर्थी सं. 2 और 3 से अपनी ड्यूटी ग्रहण करने के साथ ही सभी पारिणामिक फायदों को मंजूर करने के लिए निवेदन किया । याची ने सचिव (शिक्षा) को अग्रेषित तारीख 28 सितम्बर, 2003 के पत्र द्वारा अपनी ड्यूटी ग्रहण करने को मंजूर करने के लिए पुनः निवेदन किया । सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 80 के अधीन नोटिस के संदर्भ में प्रमुख सचिव (शिक्षा) ने तारीख 7 अक्तूबर, 2003 के पत्र द्वारा प्रत्यर्थी सं. 2 को आवश्यक कार्यवाही करने और विभाग को रिपोर्ट प्रस्तुत करने का निदेश दिया । याची की शिकायत यह थी कि प्रत्यर्थी सं. 1 के अंतहीन पत्राचारों के बावजूद जांच पूरी नहीं की गई न ही याची को निर्वाह भत्ता, वेतन या कोई अन्य संदाय किया गया ।

18. तारीख 4 सितम्बर, 2006 का पत्र जो फाइल का भाग (ख) है, जो इस प्रकार है :–

<u>तत्काल</u>

"सं. ई. डी. एम. - (डी.) 1-70-2004

हिमाचल प्रदेश सरकार,

शिक्षा विभाग

द्वारा – प्रमुख सचिव (शिक्षा) हिमाचल प्रदेश सरकार

सेवा में,

अपर महानिदेशक, हिमाचल प्रदेश, शिमला - 701001, शिमला 02, तारीख 4 सितम्बर, 2006 ।

विषय – ओ. ए. नं. 57/2004 - मदन लाल गुप्ता (प्राध्यापक) बनाम राज्य

श्रीमान्,

मैं उपर्युक्त उद्धृत विषय पर तारीख 18 अगस्त, 2006 के आपके पत्र सं. ओ. ए. नं. 57/2004 - 13432 के प्रति निर्देश करता हूं और यह कथन करते हुए कि जांच पूरी कर ली गई है और जांच रिपोर्ट को अनुशासनिक प्राधिकारी, तत्कालीन सचिव (शिक्षा) द्वारा तारीख 7 मार्च, 1990 को स्वीकार कर ली गई है । इसलिए, आपसे

यह निवेदन है कि कृपया तद्नुसार विद्वान् प्रशासनिक अधिकरण के विनिश्चय का अवलंब लें ।

आपका विश्वासपात्र

ह./- (अपठनीय)
अवर सचिव (शिक्षा)
हिमाचल प्रदेश सरकार''

प्रमुख सचिव (शिक्षा) के तारीख 25 फरवरी, 2011 के शपथपत्र के परिशीलन से यह उपदर्शित होता है कि जांच रिपोर्ट को तारीख 17 जून, 1989 को सरकार के समक्ष प्रस्तुत कर दिया गया था । शपथपत्र में, यह भी कथन किया गया है कि याची तारीख 7 मार्च, 1990 को विद्वान् वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के समक्ष प्रस्तुत हुआ था । शपथपत्र को भी मुख्य फाइल में कार्यालय में खोजा नहीं जा सका अतएव यह कहना संभव नहीं है कि उसके बाद याची के विरुद्ध क्या कार्रवाई की गई । तारीख 15 मार्च, 2003 के पत्र से यह प्रतीत होता है कि एम. एल. गुप्ता को सेवा से सेवानिवृत्त करने का विनिश्चय लिया गया था किन्तु औपचारिक आदेश अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है । तारीख 15 मार्च, 2003 के पत्र के साथ संलग्न नोटिस में भी यह कथित है कि याची को सेवानिवृत्त करने का आदेश जारी नहीं किया गया था ।

19. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **आंध्र प्रदेश राज्य** बनाम **एन. राधाकृष्णन**[1] वाले मामले में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

"सभी मामलों और सभी परिस्थितियों में लागू करने के लिए पूर्व अवधारित किसी सिद्धांत को अधिकथित करना संभव नहीं है जहां अनुशासनिक कार्यवाहियों में निष्कर्ष निकालने में विलम्ब किया गया है । क्या अनुशासनिक कार्यवाहियों के आधार पर उसे समाप्त किया जाना चाहिए यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों की परीक्षा पर निर्भर करता है । मामले का सार यह है कि न्यायालय सभी सुसंगत कारकों पर विचार करता है और उसे अवधारित करने के लिए संलग्न और वजन पर विचार करता है यदि यह स्वस्थ और ईमानदार प्रशासन के हित में होता है कि अनुशासनिक कार्यवाहियों में

---

[1] (1998) 4 एस. सी. सी. 154.

विलम्ब होने के पश्चात् उसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए विशिष्टतया जब विलम्ब असम्यक् हो और विलम्ब के लिए कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया हो । अपचारी कर्मचारी को यह अधिकार है कि उसके विरुद्ध की जा रही अनुशासनिक कार्यवाहियों में यथाशीघ्र पूर्व निष्कर्ष निकाला जाए और उसे मानसिक पीड़ा के अधीन नहीं रखा जाए तथा उसे वित्तीय हानि भी न हो जब एक अनावश्यक रूप से उसकी किसी गलती के बिना कार्यवाहियों में विलम्ब करते हुए इसे अनावश्यक रूप से लम्बा खींचा जाता है । इस बारे में विचार करते हुए कि क्या विलम्ब से अनुशासनिक कार्यवाहियां दूषित हो गई हैं, न्यायालय आरोप की प्रकृति, इसकी जटिलता और विलम्ब के कारणों पर विचार करता है । यदि विलम्ब का स्पष्टीकरण नहीं किया जाता है तो यह अपचारी कर्मचारी के प्रतिकूल होने के नाते आमुख पर ही दूषित होता है । यह भी देखा जा सकता है कि अनुशासनिक अधिकारी अपने कर्मचारी के विरुद्ध आरोपों की जांच करने में कितना गंभीर है । प्रशासनिक न्याय का यह आधारभूत सिद्धांत है कि एक अधिकारी को न्यस्त विशिष्ट कार्य का अनुपालन ईमानदारी, दक्षता और नियमों के कारण करना चाहिए । यदि वह अपने पथ से विचलित होता है तो उस पर विहित शास्ति अधिरोपित की जा सकती है । सामान्यतः, अनुशासनिक कार्यवाहियां, सुसंगत नियमों के अनुसार की जानी चाहिए किन्तु उसके बाद भी विलम्ब होता है तो इससे न्याय की हानि होती है । विलम्ब से आरोपित अधिकारी को प्रतिकूलता कारित होती है जब तक कि यह प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है उसके ऊपर विलम्ब करने का आरोप है या अनुशासनिक कार्यवाहियों में निष्कर्ष निकालने में हुए विलम्ब के लिए समुचित स्पष्टीकरण दिया गया है । अन्ततोगत्वा, न्यायालय इन दोनों भिन्न विचारों में संलग्न कायम करता है ।"

20. **पी. वी. महादेवन** बनाम **एम. डी. टी. एन. हाउसिंग बोर्ड**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि एक सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध संरक्षित अनुशासनिक जांच होनी चाहिए, इसलिए, न केवल सरकारी कर्मचारी के हित का ध्यान रखना चाहिए अपितु

[1] (2005) 6 एस. सी. सी. 636.

लोक हित का भी ध्यान रखना चाहिए और ऐसा सरकारी कर्मचारियों के विवेक में विश्वास पैदा करने के लिए भी होना चाहिए । यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि उस मामले में जांच से पर्दा उठाना और जांच का अंत किया जाना आवश्यक था । अपीलार्थी अनुशासनिक कार्यवाहियों के कारण पर्याप्त और अत्यधिक ग्रसित हो चुका है । वास्तविकता यह है कि संरक्षित अनुशासनिक कार्यवाहियों के कारण अपीलार्थी को मानसिक पीड़ा और उससे ग्रसित होना उसे दंड देने से भी अधिक होगा। अनुशासनिक कार्यवाहियां आरम्भ करने के लिए प्रक्रिया में विभाग द्वारा की गई त्रुटियों से अपीलार्थी ग्रसित नहीं होना चाहिए ।

21. **एम. वी. बिजलानी** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में अपील मंजूर करते हुए माननीय उच्चतम न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि उक्त आदेश के परिणामस्वरूप मामले को माफी के लिए वापस अनुशासनिक प्राधिकारी के पास भेजना होगा किन्तु माननीय उच्चतम न्यायालय ने मामले को अनुशासनिक प्राधिकारी के पास माफी के लिए नहीं भेजा क्योंकि आरोप वर्ष 1969-70 से संबंधित थे । यह मत व्यक्त किया कि अपीलार्थी इन कार्यवाहियों के लम्बित रहने के कारण अत्यधिक परेशानी से ग्रसित रहा । इसलिए, उसे सेवा में पुनः बहाल करने का निर्देश दिया, यदि वह अधिवर्षिता की आयु प्राप्त नहीं कर चुका हो ।

22. **सचिव, वन विभाग और अन्य** बनाम **अब्दुल रसूल चौधरी**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "अगला मुद्दा अनुशासनिक कार्यवाहियों में निष्कर्ष निकालने में किए गए विलम्ब से संबंधित है । हमारे मत में, विभागीय जांच कार्यवाहियों में निष्कर्ष निकालने में हुआ विलम्ब कार्यवाहियों के लिए घातक नहीं है । यह प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है । नियोजक की ओर से स्पष्टीकृत सुरक्षित विलम्ब को परिस्थितियों में से एक होना लिखा है जिसमें नियोजक को अनुशासनिक जांच कार्यवाहियों को जारी रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है । उसी समय पर, यदि विलम्ब हो, समाधानप्रद के रूप में स्पष्टीकरण कर दिया जाता है तो कार्यवाहियों को वाद रखने की

[1] (2006) 5 एस. सी. सी. 88.
[2] (2002) 7 एस. सी. सी. 305.

अनुज्ञा दी जानी चाहिए ।"

23. वर्तमान मामले में, याची के विरुद्ध आरोप कतिपय अवधि के दौरान ड्यूटी से अनुपस्थित रहना और अनुपस्थित अवधि के दौरान हीरो फाइबर्स लिमिटेड में सेवा करना है । याची ने लगभग 18 वर्षों की सेवा की थी जब उसे तारीख 21 मार्च/21 मई, 1987 को आरोपित किया गया था । प्रत्यर्थियों ने यह आधार लिया है कि जांच पूरी कर ली गई थी, रिपोर्ट को अनुशासनिक प्राधिकारी सचिव (शिक्षा) द्वारा तारीख 7 मार्च, 1990 को स्वीकार कर लिया गया था । प्रमुख सचिव (शिक्षा) के तारीख 25 फरवरी, 2011 के शपथपत्र में, यह कथन किया गया है कि याची तारीख 7 मार्च, 1990 को वित्तीय आयुक्त-सह-सचिव (शिक्षा) के समक्ष उपस्थित हुआ था । इस बारे में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि जब अनुशासनिक प्राधिकारी ने तारीख 7 मार्च, 1990 को जांच रिपोर्ट स्वीकार कर ली थी तो क्यों नहीं इस विनिश्चय को तारीख 7 मार्च, 1990 या इसके पश्चात् याची को संसूचित किया गया । याची ने विभिन्न पत्र लिखे जिसे अभिलेख पर रखा गया जिसमें उसने तारीख 7 मार्च, 1990 के पश्चात् उसे ड्यूटी ग्रहण करने के लिए मंजूर करते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 से निवेदन किया गया था किन्तु याची द्वारा लिखे गए पत्रों का कोई जवाब नहीं दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा यह आधार लिया गया कि फाइल उपलब्ध नहीं है फिर भी याची को सेवानिवृत्त करने का विनिश्चय लिया गया । तारीख 15 मार्च, 2003 के पत्र के साथ संलग्न नोटिस में यह कथन किया गया है कि याची की सेवानिवृत्ति का कोई आदेश जारी नहीं किया गया था । यह तथ्य शेष रह जाता है कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा दो दशकों से भी अधिक समय बीत जाने के पश्चात् भी जांच में जांच रिपोर्ट के आधार पर कोई अंतिम विनिश्चय नहीं लिया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा याची को पूर्ण तथ्यों को प्रस्तुत करने के बारे में निदेश देने का निवेदन जिसे कि प्रमुख सचिव (शिक्षा) द्वारा विनिश्चय किया जा सके, एक कटु मजाक है ।

24. याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदन में सार यह है कि याची का सेवा कैरियर अंतहीन जांच द्वारा प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ है । अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि प्रत्यर्थी सं. 1 द्वारा याची को आरोपित करने के पश्चात् याची को कोई निर्वाह भत्ता, वेतन या अन्य संदाय किया गया था । यह याची के प्रति गंभीर प्रतिकूलता कारित करता है । अभिलेख पर जांच रिपोर्ट के आधार पर अनुशासनिक अधिकारी का कोई आदेश नहीं

है । प्राधिकारियों ने यह महसूस नहीं किया कि किस प्रकार एक कर्मचारी बिना वेतन, निर्वाह भत्ते, पेंशन फायदों आदि के दो दशकों से भी अधिक समय तक जीवित रह सकता है । प्राधिकारी पूर्णतया संवेदनशील रहे । जांच का निष्कर्ष निकालने में याची की ओर से हुआ विलम्ब साबित नहीं किया गया है । परिस्थिति जिनसे संबंध है, उससे न केवल कर्मचारी प्रभावित हुआ है अपितु उसका सम्पूर्ण कुटुम्ब प्रभावित हुआ है । यह ठीक मामला है जिसमें याची के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाही का अंत कर दिया जाना चाहिए और अब इसे एक दिन भी जारी रखना मंजूर नहीं करना चाहिए । याची के विद्वान् काउंसेल ने यह कथन किया है कि याची, वर्ष 2005 में ही अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका है, इसलिए, उसे पिछली प्रास्थिति में बहाल करना संभव नहीं है ।

25. अगला प्रश्न यह है कि याची, वर्तमान मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में कोई अनुतोष पाने का हकदार है । याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा **एम. वी. बिजलानी** (उपरोक्त) वाले मामले का अवलंब लिया गया है जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने 50 प्रतिशत पिछली मजदूरियों को मंजूर किया था । वर्तमान मामले में भी याची के विरुद्ध अनुशासनिक कार्यवाहियां पिछले दो दशकों से भी अधिक समय से लम्बित थीं । इन परिस्थितियों में, याचिका मंजूर की जाती है, तारीख 20 मार्च/21 मई, 1987 का आरोप ज्ञापन उपाबंध ए-7 अभिखंडित किया जाता है । याची को उस समय तक निरन्तर सेवा में समझा जाएगा जब उसने अधिवर्षिता की आयु प्राप्त की थी क्योंकि याची को 20 मार्च/21 मई, 1987 का आरोप ज्ञापन जारी नहीं किया गया था । याची को यदि 20 मार्च/21 मई, 1987 के पश्चात् वेतन, निर्वाह भत्ता आदि के बारे में कोई संदाय किया गया है तो उस रकम का समायोजन करने के पश्चात् तारीख 20 मार्च/21 मई, 1987 से पिछले वेतन का 50 प्रतिशत संदत्त किया जाएगा । याची को पूर्ण पेंशन भत्ते भी संदत्त किए जाएंगे यह मानते हुए कि याची अधिवर्षिता की तारीख तक पूर्ण वेतन प्राप्त कर रहा था । याची को सक्षम प्राधिकारी के समक्ष याची द्वारा इस निर्णय की प्रति प्रस्तुत करने की तारीख से दो माह के भीतर बकाया संदत्त किया जाए ।

रिट याचिका मंजूर की गई ।

क.

धनी राम

बनाम

हिमाचल पर्यटन विकास निगम और एक अन्य

तथा

जगत राम (मृतक) मार्फत **माली देवी और अन्य**

बनाम

हिमाचल पर्यटन विकास निगम और एक अन्य

तारीख 24 जून, 2011

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 का नियम 1(iv) तथा पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1973 और एफ. आर. 56(क) तथा 56(ख)] – रिट – निगम कर्मचारी की प्रोन्नति, सेवानिवृत्ति आदि होना – तत्समय प्रवृत्त सुसंगत नियमों के अधीन किया जाना – संबंधित कार्यालय आदेश को चुनौती नहीं देना – यदि किसी निगम कर्मचारी की प्रोन्नति, सेवानिवृत्ति आदि तत्समय प्रवृत्त सुसंगत नियमों के अनुसार की जाती है और उसके अनुसरण में कार्यालय आदेश पारित किया जाता है जिसे चुनौती नहीं दी जाती है तो ऐसे कार्यालय आदेश को किसी भी तरह से गलत, अवैध या मनमाना नहीं कहा जा सकता है ।

वर्तमान मामले में, याची का अभिवाचित पक्षकथन यह है कि उसकी जन्म-तिथि 15 मई, 1941 है और वह वर्ष 1979 में प्रत्यर्थी-निगम में वेटर के रूप में नियुक्त हुआ था । वह तारीख 1 अप्रैल, 1980 को नियमित हुआ था । याची अंतिम बार हिमाचल प्रदेश सचिवालय कैंटीन में स्थानांतरित हुआ था जहां उसने तारीख 30 नवम्बर, 1999 तक कार्य किया जिस तारीख को उसे अवैध तौर पर अधिवर्षिता दे दी गई । निगम में वेटर श्रेणी-IV पद के रूप में नामनिर्दिष्ट है । तारीख 26 अगस्त, 1999 को, तारीख 16 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश में उल्लिखित याची और अन्य वेटरों को तारीख 1 जुलाई, 1999 से वेतनमान रु. 3120-5160 दिया गया । एफ. आर. 56 (श्रेणी- IV) के अनुसार कर्मचारी 60 वर्ष की

आयु प्राप्त करने पर सेवा से सेवानिवृत्त हो जाएगा । तारीख 30 नवम्बर, 1999, जिस तारीख को याची को मनमाने तरीके से सेवानिवृत्त कर दिया गया था, वह 60 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं किया था । तारीख 30 नवम्बर, 1999 को याची की सेवानिवृत्ति गलत, अवैध और मनमाना है और जो संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14 और 16 के अतिक्रमण में है । याची की पेंशन के लिए अर्हता में 4 माह की सेवा कम थी जिसमें 20 वर्ष की सेवा अपेक्षित है । याची का पक्षकथन यह है कि एफ. आर. 56 के अनुसार उसे 60 वर्ष की आयु प्राप्त होने पर सेवानिवृत्त किया जाना चाहिए था । याची ने याचिका संशोधित की और संशोधित याचिका में याची ने तारीख 26 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश उपाबंध आर-1 को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की जिसके द्वारा वेटरों को तारीख 1 जुलाई, 1999 से उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 दिया गया था । संशोधित याचिका में याची द्वारा यह प्रार्थना की गई कि प्रत्यर्थी को यह निर्देश दिया जाए कि वह याची को उसी तारीख से उस पद पर पुनः बहाल करे जब उसे तारीख 30 नवम्बर, 1999 को अधिवर्षिता देने का अवैध आदेश दिया था । याचिका जगत राम द्वारा फाइल की गई थी जिसकी याचिका लम्बित रहने के दौरान मृत्यु हो गई और उसके विधिक प्रतिनिधिगण याची सं. 2 से 4 अभिलेख पर लाए गए । जगत राम का अभिवाचित पक्षकथन यह है कि वह जुलाई, 1986 में प्रत्यर्थी-निगम में रसोइया के रूप में नियुक्त हुआ था । तारीख 6 सितम्बर, 1997 को वह वेतनमान रु. 800-1455+भत्ते में कोमी-IV के रूप में नियमित हुआ था । प्रत्यर्थी ने (स्टाफ) विनियम, 1972 विरचित किया जो हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 है । 1985 के नियम के अनुसार निगम में कोमी-IV का पद वेतनमान रु. 325-495 में था । भर्ती और प्रोन्नति नियम वर्ष 1997 में पुनरीक्षित किए गए । नियम 1(IV) के अनुसार प्रत्यर्थी-निगम ने उन पदों को श्रेणी-IV के रूप में वर्गीकृत किया जिसमें अधिकतम वेतनमान रु. 1800 से कम था । पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम के अनुसार, कोमी-IV का पद वेतनमान रु. 810-1440 में था । कोमी-III का पद वेतनमान रु. 950-1800 में था और उन्हें कोमी-IV के पद में से भरा जाना था । एफ. आर. और एस. आर. प्रत्यर्थी-निगम के कर्मचारियों को लागू होते हैं । याची तारीख 6 सितम्बर, 1997 को वेतनमान रु. 800-1455 में कोमी-IV के रूप में नियमित हुआ था । प्रत्यर्थी-निगम ने 6 सितम्बर, 1997 के तत्काल प्रभाव से याची कोमी-IV के वेतनमान को रु. 800-1455 से वेतनमान रु. 2720-4260 में पुनरीक्षित किया । याची

को यह प्रत्याशा थी कि श्रेणी-IV कर्मचारी के रूप में वह 60 वर्ष की आयु तक कार्य करेगा तथापि, निगम ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को 58 वर्ष की अधिवर्षिता की आयु पूरी करने पर याची की सेवानिवृत्ति का आदेश तारीख 16 नवम्बर, 2000 को पारित किया । निगम ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को याची द्वारा 58 वर्ष की आयु पूरी करने पर गलत तौर पर यह आधार लेते हुए याची को सेवानिवृत्त किया कि याची को उपाबंध ए-5 आदेश द्वारा तारीख 1 जुलाई, 1999 के तत्काल प्रभाव से उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 (अपुनरीक्षित वेतनमान रु. 950-1850) दिया गया था । याची को प्रत्यर्थी-निगम ने कोमी-IV कर्मकार (कुशल या अकुशल) के रूप में नियुक्त किया गया था जो एक औद्योगिक स्थापन है । याची को तारीख 31 दिसम्बर, 2002 तक 60 वर्ष की अधिवर्षिता आयु पूरी करने तक निरन्तर सेवा करने का अधिकार था । याची को 58 वर्ष की आयु पर सेवानिवृत्त करना गलत और अवैध है । याची को कोमी-III के रूप में प्रोन्नत नहीं किया गया था । पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1973 के अनुसार, कोमी-IV पद कोमी-III में प्रोन्नति के लिए फीडर पद है । याची को कोमी-IV से कोमी-III में प्रोन्नत नहीं किया गया था इसलिए, याची को कोमी-III के रूप में मानते हुए तारीख 31 दिसम्बर, 2002 को 58 वर्ष की आयु पर सेवानिवृत्त करना मनमाना है । याची को उच्चतर वेतनमान मंजूर करने से कोमी-IV से कोमी-III में याची की प्रास्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होगा मात्र इस आधार पर कि याची को पुनरीक्षित वेतनमान रु. 950-1800/2120-5160 दिया गया था । कोमी-IV पद को कोमी-III की प्रास्थिति में उन्नत नहीं किया गया था । कोमी-III पद में भी उच्चतर वेतनमान रु. 950-1800/2120-5160 से वेतनमान रु. 3320-6200 दिया गया था । इसलिए, जब तक याची को वेतनमान रु. 3320-6200 में कोमी-III के रूप में प्रोन्नत नहीं किया जाता तब तक उसे श्रेणी-III के रूप में नहीं माना जा सकता है । याची ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 के तत्काल प्रभाव से 58 वर्ष की आयु पूरी होने पर याची को सेवानिवृत्त करने वाले उपाबंध आर-4 तारीख 16 नवम्बर, 2000 के आदेश को अभिखंडित करने के साथ ही उसे 60 वर्ष की आयु पूरी होने तक अर्थात् तारीख 31 दिसम्बर, 2000 तक कोमी-IV के रूप में कार्य करने की मंजूरी देने के लिए भी प्रार्थना की है । याची ने पारिणामिक फायदों जैसे वेतन बकायों के साथ उस पर 18 प्रतिशत वार्षिक ब्याज भी संदाय करने के लिए प्रार्थना की है । न्यायालय द्वारा रिट याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – न्यायालय ने 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में श्री दुष्यंत डडवाल, अधिवक्ता तथा 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 में श्री रंजन शर्मा, अधिवक्ता और दोनों याचिकाओं में श्री नरेश कौल, अधिवक्ता को सुना । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में याची और 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 में जगत राम कर्मकार थे तथा वे 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवानिवृत्त हुए थे । निगम द्वारा उन्हें 58 वर्ष की आयु पूरी करने के पश्चात् गलत तौर पर सेवानिवृत्त किया गया है । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में याची और अन्य वेटरों को तारीख 26 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश द्वारा तारीख 9 जुलाई, 1989 के आदेश के अनुसरण में तारीख 1 जुलाई, 1999 के तत्काल प्रभाव से पुनरीक्षित वेतनमान रु. 3120-5160 में रखा गया । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार वेटर/सहायक, बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती, कोमी-IV को निदेशक बोर्ड के विनिश्चय सं. 99/4 के अनुसरण में तत्काल प्रभाव से वेतनमान रु. 3120-5160 में श्रेणी-III के रूप में वर्गीकृत किया गया । याची धनी राम के अनुसार उसे तारीख 1 अप्रैल, 1980 को वेटर के रूप में नियमित किया गया था । याची का पद श्रेणी-IV पद के रूप में नामनिर्दिष्ट किया गया था । उसे 1 जुलाई, 1999 से पुनरीक्षित वेतनमान रु. 3120-5160 में रखा गया था जिस तारीख को उसने 60 वर्ष की आयु पूरी नहीं की थी । याची धनी राम ने संशोधित याचिका में तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश उपाबंध आर-1 को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की है, जिसकी प्रति अभिलेख पर उपाबंध आर-2 के रूप में भी प्रस्तुत की गई है । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार श्रेणी-III संवर्ग में वेटर/सहायक बारमैन के रखे जाने को चुनौती देने के लिए याचिका में कोई आधार नहीं है । एफ. आर. 56(ख) उस कर्मकार के प्रति निर्दिष्ट है, जो 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवा से सेवानिवृत्त होगा । एफ. आर. 56(ख) में उल्लिखित कर्मकार का अभिप्राय उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर से है जो किसी उद्योग में मासिक वेतन पर नियोजित हुआ है या किसी स्थापन में कार्य कर रहा है । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में ऐसा कोई प्रकथन नहीं है कि प्रत्यर्थी-निगम में याची का नियोजन उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर का था । याचिका में उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर के अभिवाक् के अभाव में, यह

निष्कर्ष अभिलिखित करना संभव नहीं है कि याची वेटर के रूप में उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर कर्मकार के रूप में कार्य कर रहा था जब वह प्रत्यर्थी-निगम के नियोजन में था । राजिन्दर प्रसाद वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि कानूनी नियमों द्वारा श्रेणी-IV कर्मचारियों के समान स्तर पर शासित कारीगर कर्मकार को लाने का उद्देश्य प्रतीत होता है और मात्र ऐसे कारीगर कर्मकार को 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवानिवृत्त करना अपेक्षित था न कि श्रेणी-III सरकारी सेवक या इसके ऊपर के कर्मकारों को । निगम ने यह आधार लिया कि जून, 1999 में कर्मचारियों का एक वर्ग जिनमें वेटर्स सम्मिलित थे, ने उच्चतर वेतनमान के साथ अन्य मांगों की मांग करते हुए हड़ताल पर चला गया था । प्रबंधतंत्र ने उनकी मांगों में कुछ मांगों को स्वीकार कर लिया था और वेटर संवर्ग को उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 मंजूर कर लिया था और उन्हें श्रेणी-III में रखा । निगम ने वेटरों के वेतनमान के आधार उन्हें श्रेणी-III संवर्ग में रखने का नीतिगत विनिश्चय लिया । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश से उपदर्शित होता है कि न केवल वेटर-सहायक बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती और कोमी-IV को अपितु, उन सभी को जो वेतनमान रु. 3120-5160 में थे, को श्रेणी-III संवर्ग में रखा गया था । इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि प्रत्यर्थी-निगम के तारीख 22 नवम्बर, 1993 का कार्यालय आदेश, जिससे वेटरों को श्रेणी-III संवर्ग में रखा गया था, मनमाना है । निगम में वेटरों का संवर्ग श्रेणी-III है, इसलिए, ऐसे संवर्ग को राजिन्दर प्रसाद वाले मामले को ध्यान में रखते हुए, एफ. आर. 56(क) लागू नहीं होते हैं । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में गुणागुण नहीं है । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 में, जगत राम याची सं. 2 से 4 का हित-पूर्वाधिकारी, जुलाई, 1986 में एक रसोइया के रूप में नियुक्त हुआ था । वह तारीख 6 सितम्बर, 1997 को कोमी-IV के रूप में नियुक्त हुआ था । याचियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम लिमिटेड (स्टाफ) भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 के उपाबंध-1 के अनुसार कोमी-IV वेतनमान रु. 325-495 में था और कोमी-III वेतनमान रु. 400-600 में था । कोमी-IV, प्रोन्नति कोटा के विरुद्ध कोमी-III में प्रोन्नति के लिए एक फीडर पद है । उन्होंने यह कथन किया कि भर्ती और प्रोन्नति नियम में संशोधन वर्ष 1997 में किया गया था और उन पदों को जिनका अधिकतम वेतनमान रु. 1800 से कम था, को श्रेणी-IV संवर्ग में रखा गया । कोमी-IV को वेतनमान

रु. 810-1440 में रखा गया और कोमी-III को वेतनमान रु. 950-1800 में रखा गया । उन्होंने यह निवेदन किया कि कोमी-IV को शत-प्रतिशत प्रोन्नति द्वारा कोमी-III के लिए पुनः एक फीडर पद बनाया गया । याचियों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार वर्ष 1997 में किए गए संशोधन के अनुसार दोनों पद कोमी-III और कोमी-IV को श्रेणी-IV संवर्ग में रखा गया था । याचिका में, उपाबंध ए-3 को भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1997 के रूप में अभिकथित किया गया है, किन्तु वस्तुतः ये नियम 1985 के हैं जो उपाबंध ए-3 के साधारण खंड-I से स्पष्ट है । किन्तु यह कोई भिन्नता नहीं करता है । यह प्रश्न कि क्या जगत राम, याची सं. 2 से 4 का हित-पूर्वाधिकारी निगम में श्रेणी-III या श्रेणी- IV का कर्मचारी था । 2008 की सिविल रिट याचिका सं. (टी.) 7306 में याची ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को 58 वर्ष की आयु पूरी होने पर उसे सेवानिवृत्त करते हुए पारित तारीख 16 नवम्बर, 2000 के आदेश को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की है । यह भी प्रार्थना की गई है कि जगत राम को 60 वर्ष की आयु पूरी होने तक अर्थात् 31 दिसम्बर, 2002 तक सभी पारिणामिक फायदों के साथ ब्याज सहित कोमी-IV के रूप में कार्य करना मंजूर किया जाए । यह भी प्रार्थना की गई कि निगम द्वारा जगत राम को प्रोन्नत किए बिना कोमी-III के रूप में मानते हुए या कोमी-III के रूप में जगत राम का उन्नयन किए बिना की गई कार्रवाई अवैध और मनमाना घोषित किया जाए । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में, अभिलेख पर यह लाया गया है कि तारीख 21 नवम्बर, 1999 को वेटर/सहायक बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती और कोमी-IV को तत्काल प्रभाव से वेतनमान रु. 3120-5160 में श्रेणी-III के रूप में वर्गीकृत किया गया था । जगत राम का पक्षकथन यह नहीं था कि उसे एक जुलाई, 1999 से वेतनमान रु. 3120-5160 नहीं दिया गया था । जब एक बार जगत राम को कोमी-IV के रूप में वेतनमान रु. 3120-5160 दे दिया गया था तो तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार उसका संवर्ग श्रेणी-III हो गया था । यह आवश्यक नहीं था कि जगत राम का कोमी-IV से कोमी-III में प्रोन्नति द्वारा ही वह संवर्ग III में आता । कोमी-III या कोमी-IV के रूप में नाम पद्धति, एफ. आर. 56(ख) के लागू होने के लिए सुसंगत नहीं है । इस श्रेणी/संवर्ग के लिए क्या सुसंगत है । प्रत्यर्थी-निगम ने वेतनमान के आधार पर तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश द्वारा वेतनमान रु. 3120-5160 में कोमी-IV को श्रेणी-III में रखा । याचिका में तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश को अभिखंडित करने के लिए कोई

प्रार्थना नहीं की गई है । श्रेणी-III संवर्ग में वेतनमान रु. 3120-5160 में कोमी-IV को रखने वाले कार्यालय आदेश को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना के अभाव में एफ. आर. 56(ख) का फायदा पाने के हकदार नहीं हैं । याचिका में कोई गुणागुण नहीं है और इसलिए, यह खारिज किए जाने योग्य है । (पैरा 10, 11, 12, 13, 14 और 15)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	2009 की सिविल रिट याचिका सं. 1721 तारीख 17 जून, 2009 को विनिश्चित : **श्री राजिन्दर प्रसाद** बनाम **एच. आर. टी. सी. और एक अन्य ;**	10
[1995]	(1995) अनु. (1) एस. सी. सी. 427 : **उड़ीसा राज्य और अन्य** बनाम **एडवोकेट चरण मोहंती और अन्य ।**	10

आरम्भिक (सिविल) रिट अधिकारिता : 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 और 7306.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से — सर्वश्री दुष्यंत डडवाल, अधिवक्ता [2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279] और रंजन शर्मा, अधिवक्ता [2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306]

प्रत्यर्थियों की ओर से — श्री नरेश कौल, अधिवक्ता (दोनों याचिकाओं में)

न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह – इस निर्णय में 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 और 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 को निपटाया जाएगा ।

2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279

2. याची का अभिवाचित पक्षकथन यह है कि उसकी जन्म-तिथि 15 मई, 1941 है और वह वर्ष 1979 में प्रत्यर्थी-निगम में वेटर के रूप में

नियुक्त हुआ था । वह तारीख 1 अप्रैल, 1980 को नियमित हुआ था । याची अंतिम बार हिमाचल प्रदेश सचिवालय कैंटीन में स्थानांतरित हुआ था जहां उसने तारीख 30 नवम्बर, 1999 तक कार्य किया जिस तारीख को उसे अवैध तौर पर अधिवर्षिता दे दी गई । निगम में वेटर श्रेणी-IV पद के रूप में नामनिर्दिष्ट है । तारीख 26 अगस्त, 1999 को, तारीख 16 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश में उल्लिखित याची और अन्य वेटरों को तारीख 1 जुलाई, 1999 से वेतनमान रु. 3120-5160 दिया गया । एफ. आर. 56 (श्रेणी- IV) के अनुसार कर्मचारी 60 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर सेवा से सेवानिवृत्त हो जाएगा । तारीख 30 नवम्बर, 1999, जिस तारीख को याची को मनमाने तरीके से सेवानिवृत्त कर दिया गया था, उसने 60 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं की थी । तारीख 30 नवम्बर, 1999 को याची की सेवानिवृत्ति गलत, अवैध और मनमाना है और जो संविधान, 1950 के अनुच्छेद 14 और 16 के अतिक्रमण में है । याची की पेंशन के लिए अर्हता में 4 माह की सेवा कम थी जिसमें 20 वर्ष की सेवा अपेक्षित है । याची का पक्षकथन यह है कि एफ. आर. 56 के अनुसार उसे 60 वर्ष की आयु प्राप्त होने पर सेवानिवृत्त किया जाना चाहिए था । याची ने याचिका संशोधित की और संशोधित याचिका में याची ने तारीख 26 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश उपाबंध आर-I को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की जिसके द्वारा वेटरों को तारीख 1 जुलाई, 1999 से उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 दिया गया था । संशोधित याचिका में याची द्वारा यह प्रार्थना की गई कि प्रत्यर्थी को यह निर्देश दिया जाए कि वह याची को उसी तारीख से उस पद पर पुनः बहाल करे जब उसे तारीख 30 नवम्बर, 1999 को अधिवर्षिता देने का अवैध आदेश दिया था ।

3. प्रत्यर्थी ने याचिका का विरोध किया और यह कथन किया कि याची निगम का श्रेणी-III कर्मचारी था यह कथन किया गया कि वेटर का पूर्ववर्ती पद जिस पर याची कार्य कर रहा था वह श्रेणी- IV का पद था । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के आदेश उपाबंध आर-2 के द्वारा वेटरों को तारीख 1 जुलाई, 1999 से वेतनमान रु. 3120-5160 दिया गया और श्रेणी-III संवर्ग के रूप में वर्गीकृत किया गया । तारीख 1 जुलाई, 1999 के पूर्व वेटर वेतनमान 2720-4260 में थे और श्रेणी-IV संवर्ग में थे । निगम में श्रेणी-III कर्मचारियों की सेवानिवृत्ति आयु 58 वर्ष है जबकि यह श्रेणी-IV कर्मचारियों के लिए 60 वर्ष है । याची को श्रेणी-III कर्मचारी होने के नाते अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने पर तारीख 30 नवम्बर, 1999 को सही ही सेवानिवृत्त किया गया था । संशोधित याचिका के उत्तर

में, प्रत्यर्थी ने उसी आधार को दोहराया और यह भी अभिवाक् किया कि वेटर का संवर्ग उपाबंध आर-2 द्वारा वेतनमान रु. 3120-5160 में श्रेणी-III के रूप में वर्गीकृत किया गया है । याची तारीख 31 मई, 1999 को सेवानिवृत्त हुआ होता किन्तु तारीख 1 जुलाई, 1999 से लागू तारीख 22 नवम्बर, 1999 के आदेश के अधीन याची तारीख 30 नवम्बर, 1999 को सेवानिवृत्त हुआ । याची ने प्रत्युत्तर में स्वयं द्वारा याचिका में अभिवाचित आधार को पुनः दोहराया ।

2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306

4. याचिका जगत राम द्वारा फाइल की गई थी जिसकी याचिका लम्बित रहने के दौरान मृत्यु हो गई और उसके विधिक प्रतिनिधिगण याची सं. 2 से 4 अभिलेख पर लाए गए । जगत राम का अभिवाचित पक्षकथन यह है कि वह जुलाई, 1986 में प्रत्यर्थी-निगम में रसोइया के रूप में नियुक्त हुआ था । तारीख 6 सितम्बर, 1997 को वह वेतनमान रु. 800-1455+भत्ते में कोमी-IV के रूप में नियमित हुआ था । प्रत्यर्थी ने (स्टाफ) विनियम, 1972 विरचित किया जो हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 है । 1985 के नियम के अनुसार निगम में कोमी-IV का पद वेतनमान रु. 325-495 में था । भर्ती और प्रोन्नति नियम वर्ष 1997 में पुनरीक्षित किए गए । नियम 1(IV) के अनुसार प्रत्यर्थी-निगम ने उन पदों को श्रेणी-IV के रूप में वर्गीकृत किया जिसमें अधिकतम वेतनमान रु. 1800 से कम था । पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम के अनुसार, कोमी-IV का पद वेतनमान रु. 810-1440 में था । कोमी-III का पद वेतनमान रु. 950-1800 में था और उन्हें कोमी-IV के पद में से भरा जाना था । एफ. आर. और एस. आर. प्रत्यर्थी-निगम के कर्मचारियों को लागू होते हैं ।

5. याची तारीख 6 सितम्बर, 1997 को वेतनमान रु. 800-1455 में कोमी-IV के रूप में नियमित हुआ था । प्रत्यर्थी-निगम ने 6 सितम्बर, 1997 के तत्काल प्रभाव से याची कोमी-IV के वेतनमान को रु. 800-1455 से वेतनमान रु. 2720-4260 में पुनरीक्षित किया । याची को यह प्रत्याशा थी कि श्रेणी-IV कर्मचारी के रूप में वह 60 वर्ष की आयु तक कार्य करेगा तथापि, निगम ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को 58 वर्ष की अधिवर्षिता की आयु पूरी करने पर याची की सेवानिवृत्ति का आदेश तारीख 16 नवम्बर, 2000 को पारित किया । निगम ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को याची द्वारा 58 वर्ष की आयु पूरी करने पर गलत तौर पर यह आधार

लेते हुए याची को सेवानिवृत्त किया कि याची को उपाबंध ए-5 आदेश द्वारा तारीख 1 जुलाई, 1999 के तत्काल प्रभाव से उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 (अपुनरीक्षित वेतनमान रु. 950-1850) दिया गया था ।

6. याची को प्रत्यर्थी-निगम ने कोमी-IV कर्मकार (कुशल या अकुशल) के रूप में नियुक्त किया गया था जो एक औद्योगिक स्थापन है । याची को तारीख 31 दिसम्बर, 2002 तक 60 वर्ष की अधिवर्षिता आयु पूरी करने तक निरन्तर सेवा करने का अधिकार था । याची को 58 वर्ष की आयु पर सेवानिवृत्त करना गलत और अवैध है ।

7. याची को कोमी-III के रूप में प्रोन्नत नहीं किया गया था । पुनरीक्षित भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1973 के अनुसार, कोमी-IV पद कोमी-III में प्रोन्नति के लिए फीडर पद है । याची को कोमी-IV से कोमी-III में प्रोन्नत नहीं किया गया था इसलिए, याची को कोमी-III के रूप में मानते हुए तारीख 31 दिसम्बर, 2002 को 58 वर्ष की आयु पर सेवानिवृत्त करना मनमाना है ।

8. याची को उच्चतर वेतनमान मंजूर करने से कोमी-IV से कोमी-III में याची की प्रास्थिति में कोई परिवर्तन नहीं होगा मात्र इस आधार पर कि याची को पुनरीक्षित वेतनमान रु. 950-1800/2120-5160 दिया गया था । कोमी-IV पद को कोमी-III की प्रास्थिति में उन्नत नहीं किया गया था । कोमी-III पद में भी उच्चतर वेतनमान रु. 950-1800/2120-5160 से वेतनमान रु. 3320-6200 दिया गया था । इसलिए, जब तक याची को वेतनमान रु. 3320-6200 में कोमी-III के रूप में प्रोन्नत नहीं किया जाता तब तक उसे श्रेणी-III के रूप में नहीं माना जा सकता है ।

9. याची ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 के तत्काल प्रभाव से 58 वर्ष की आयु पूरी होने पर याची को सेवानिवृत्त करने वाले उपाबंध आर-4 तारीख 16 नवम्बर, 2000 के आदेश को अभिखंडित करने के साथ ही उसे 60 वर्ष की आयु पूरी होने तक अर्थात् तारीख 31 दिसम्बर, 2000 तक कोमी-IV के रूप में कार्य करने की मंजूरी देने के लिए भी प्रार्थना की है । याची ने पारिणामिक फायदों जैसे वेतन बकायों के साथ उस पर 18 प्रतिशत वार्षिक ब्याज भी संदाय करने के लिए प्रार्थना की है । प्रत्यर्थी द्वारा कोई उत्तर फाइल नहीं किया गया है ।

10. मैंने 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में श्री दुष्यंत डडवाल, अधिवक्ता तथा 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.)

सं. 7306 में श्री रंजन शर्मा, अधिवक्ता और दोनों याचिकाओं में श्री नरेश कौल, अधिवक्ता को सुना । याचियों के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में याची और 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 में जगत राम कर्मकार थे तथा वे 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवानिवृत्त हुए थे । निगम द्वारा उन्हें 58 वर्ष की आयु पूरी करने के पश्चात् गलत तौर पर सेवानिवृत्त किया गया है । याचियों ने अभिव्यक्ति उच्चतर कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल, जिन्हें व्यापक अर्थों में न कि संकीर्ण अर्थों में सामान्य बोलचाल में कारीगर/शिल्पी समझा जाता है, के मुद्दे पर **उड़ीसा राज्य और अन्य** बनाम **एडवोकेट चरण मोहंती और अन्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया । प्रत्यर्थी के विद्वान् काउंसेल ने **श्री राजिन्दर प्रसाद** बनाम **एच. आर. टी. सी. और एक अन्य**[2] वाले मामले में खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 17 जून, 2009 को दिए गए विनिश्चय का अवलंब लिया जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि एफ. आर. 56(ख) का उद्देश्य श्रेणी-IV कर्मचारियों के समान स्तर पर कानूनी नियमों द्वारा शासित कारीगर/शिल्पी की नियुक्ति करना है न केवल यह अपितु ऐसे कारीगर कर्मचारी को 60 वर्ष की आयु पूरी होने पर सेवानिवृत्त करने की आवश्यकता है न कि श्रेणी-III सरकारी सेवक या इससे ऊपर आयु वाले को । उन्होंने यह भी निवेदन किया कि खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया है कि कंडक्टर एक कारीगर नहीं है ।

11. 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में याची और अन्य वेटरों को तारीख 26 अगस्त, 1999 के कार्यालय आदेश द्वारा तारीख 9 जुलाई, 1989 के आदेश के अनुसरण में तारीख 1 जुलाई, 1999 के तत्काल प्रभाव से पुनरीक्षित वेतनमान रु. 3120-5160 में रखा गया । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार वेटर/सहायक, बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती, कोमी-IV को निदेशक बोर्ड के विनिश्चय सं. 99/4 के अनुसरण में तत्काल प्रभाव से वेतनमान रु. 3120-5160 में श्रेणी-III के रूप में वर्गीकृत किया गया । याची धनी राम के अनुसार उसे तारीख 1 अप्रैल, 1980 को वेटर के रूप में नियमित किया गया था । याची का पद श्रेणी-IV पद के रूप में नामनिर्दिष्ट किया गया था । उसे 1 जुलाई, 1999 से पुनरीक्षित वेतनमान रु. 3120-5160

[1] (1995) अनू. (1) एस. सी. सी. 427.

[2] 2009 की सिविल रिट याचिका सं. 1721 तारीख 17 जून, 2009 को विनिश्चित ।

में रखा गया था जिस तारीख को उसने 60 वर्ष की आयु पूरी नहीं की थी । याची धनी राम ने संशोधित याचिका में तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश उपाबंध आर-1 को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की है, जिसकी प्रति अभिलेख पर उपाबंध आर-2 के रूप में भी प्रस्तुत की गई है । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार श्रेणी-III संवर्ग में वेटर/सहायक बारमैन के रखे जाने को चुनौती देने के लिए याचिका में कोई आधार नहीं है । एफ. आर. 56(ख) उस कर्मकार के प्रति निर्दिष्ट है, जो 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवा से सेवानिवृत्त होगा । एफ. आर. 56(ख) में उल्लिखित कर्मकार का अभिप्राय उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर से है जो किसी उद्योग में मासिक वेतन पर नियोजित हुआ है या किसी स्थापन में कार्य कर रहा है । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में ऐसा कोई प्रकथन नहीं है कि प्रत्यर्थी-निगम में याची का नियोजन उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर का था । याचिका में उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर के अभिवाक् के अभाव में, यह निष्कर्ष अभिलिखित करना संभव नहीं है कि याची वेटर के रूप में उच्च कुशल, कुशल, अर्ध-कुशल या अकुशल कारीगर कर्मकार के रूप में कार्य कर रहा था जब वह प्रत्यर्थी-निगम के नियोजन में था । **राजिन्दर प्रसाद** (उपरोक्त) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि कानूनी नियमों द्वारा श्रेणी-IV कर्मचारियों के समान स्तर पर शासित कारीगर कर्मकार को लाने का उद्देश्य प्रतीत होता है और मात्र ऐसे कारीगर कर्मकार को 60 वर्ष की आयु पूरी करने पर सेवानिवृत्त करना अपेक्षित था न कि श्रेणी-III सरकारी सेवक या इसके ऊपर के कर्मकारों को ।

12. निगम ने यह आधार लिया कि जून, 1999 में कर्मचारियों का एक वर्ग जिनमें वेटर्स सम्मिलित थे, ने उच्चतर वेतनमान के साथ अन्य मांगों की मांग करते हुए हड़ताल पर चला गया था । प्रबंधतंत्र ने उनकी मांगों में कुछ मांगों को स्वीकार कर लिया था और वेटर संवर्ग को उच्चतर वेतनमान रु. 3120-5160 मंजूर कर लिया था और उन्हें श्रेणी-III में रखा । निगम ने वेटरों के वेतनमान के आधार पर उन्हें श्रेणी-III संवर्ग में रखने का नीतिगत विनिश्चय लिया । तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश से उपदर्शित होता है कि न केवल वेटर-सहायक बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती और कोमी-IV को अपितु, उन सभी को जो वेतनमान रु. 3120-5160 में थे, को श्रेणी-III संवर्ग में रखा गया था ।

इन परिस्थितियों में यह नहीं कहा जा सकता कि प्रत्यर्थी-निगम के तारीख 22 नवम्बर, 1993 का कार्यालय आदेश, जिससे वेटरों को श्रेणी-III संवर्ग में रखा गया था, मनमाना है । निगम में वेटरों का संवर्ग श्रेणी-III है, इसलिए, ऐसे संवर्ग को **राजिन्दर प्रसाद** (उपरोक्त) वाले मामले को ध्यान में रखते हुए, एफ. आर. 56(क) लागू नहीं होते हैं । 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में गुणागुण नहीं है ।

13. 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 में, जगत राम याची सं. 2 से 4 का हित-पूर्वाधिकारी, जुलाई, 1986 में एक रसोइया के रूप में नियुक्त हुआ था । वह तारीख 6 सितम्बर, 1997 को कोमी-IV के रूप में नियुक्त हुआ था । याचियों के विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम लिमिटेड (स्टाफ) भर्ती और प्रोन्नति (पुनरीक्षित) नियम, 1985 के उपाबंध-1 के अनुसार कोमी-IV वेतनमान रु. 325-495 में था और कोमी-III वेतनमान रु. 400-600 में था । कोमी-IV, प्रोन्नति कोटा के विरुद्ध कोमी-III में प्रोन्नति के लिए एक फीडर पद है । उन्होंने यह कथन किया कि भर्ती और प्रोन्नति नियम में संशोधन वर्ष 1997 में किया गया था और उन पदों को जिनका अधिकतम वेतनमान रु. 1800 से कम था, को श्रेणी-IV संवर्ग में रखा गया । कोमी-IV को वेतनमान रु. 810-1440 में रखा गया और कोमी-III को वेतनमान रु. 950-1800 में रखा गया । उन्होंने यह निवेदन किया कि कोमी-IV को शत-प्रतिशत प्रोन्नति द्वारा कोमी-III के लिए पुनः एक फीडर पद बनाया गया । याचियों के विद्वान् काउंसेल के अनुसार वर्ष 1997 में किए गए संशोधन के अनुसार दोनों पद कोमी-III और कोमी-IV को श्रेणी-IV संवर्ग में रखा गया था ।

14. याचिका में, उपाबंध ए-3 को भर्ती और प्रोन्नति नियम, 1997 के रूप में अभिकथित किया गया है, किन्तु वस्तुतः ये नियम, 1985 के हैं जो उपाबंध ए-3 के साधारण खंड-I से स्पष्ट है । किन्तु यह कोई भिन्नता नहीं करता है । यह प्रश्न कि क्या जगत राम, याची सं. 2 से 4 का हित-पूर्वाधिकारी निगम में श्रेणी-III या श्रेणी- IV का कर्मचारी था । 2008 की सिविल रिट याचिका सं. (टी.) 7306 में याची ने तारीख 31 दिसम्बर, 2000 को 58 वर्ष की आयु पूरी होने पर उसे सेवानिवृत्त करते हुए पारित तारीख 16 नवम्बर, 2000 के आदेश को अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना की है । यह भी प्रार्थना की गई है कि जगत राम को 60 वर्ष की आयु पूरी होने तक अर्थात् 31 दिसम्बर, 2002 तक सभी पारिणामिक फायदों के

साथ ब्याज सहित कोमी-IV के रूप में कार्य करना मंजूर किया जाए । यह भी प्रार्थना की गई कि निगम द्वारा जगत राम को प्रोन्नत किए बिना कोमी-III के रूप में मानते हुए या कोमी-III के रूप में जगत राम का उन्नयन किए बिना की गई कार्रवाई अवैध और मनमाना घोषित किया जाए ।

15. 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 में, अभिलेख पर यह लाया गया है कि तारीख 21 नवम्बर, 1999 को वेटर/सहायक बारमैन, ज्येष्ठ फ्लोर सहायक, सहायक स्वागती और कोमी-IV को तत्काल प्रभाव से वेतनमान रु. 3120-5160 में श्रेणी-III के रूप में वर्गीकृत किया गया था । जगत राम का पक्षकथन यह नहीं था कि उसे एक जुलाई, 1999 से वेतनमान रु. 3120-5160 नहीं किया गया था । जब एक बार जगत राम को कोमी-IV के रूप में वेतनमान रु. 3120-5160 दे दिया गया था तो तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश के अनुसार उसका संवर्ग श्रेणी-III हो गया था । यह आवश्यक नहीं था कि जगत राम का कोमी-IV से कोमी-III में प्रोन्नति द्वारा ही वह संवर्ग श्रेणी-III में आता । कोमी-III या कोमी-IV के रूप में नाम पद्धति, एफ. आर. 56(ख) के लागू होने के लिए सुसंगत नहीं है । इस श्रेणी/संवर्ग के लिए क्या सुसंगत है । प्रत्यर्थी निगम ने वेतनमान के आधार पर तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश द्वारा वेतनमान रु. 3120-5160 में कोमी-IV को श्रेणी-III में रखा । याचिका में तारीख 22 नवम्बर, 1999 के कार्यालय आदेश को अभिखंडित करने के लिए कोई प्रार्थना नहीं की गई है । श्रेणी-III संवर्ग में वेतनमान रु. 3120-5160 में कोमी-IV को रखने वाले कार्यालय आदेश को अभिखंडित करने के लिए किसी प्रार्थना के अभाव में याची **राजिन्दर प्रसाद** (उपरोक्त) वाले मामले को ध्यान में रखते हुए, एफ. आर. 56(ख) का फायदा पाने के हकदार नहीं है । याचिका में कोई गुणागुण नहीं है और इसलिए, यह खारिज किए जाने योग्य है ।

16. उपर्युक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए दोनों रिट याचिकाएं 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 6279 और 2008 की सिविल रिट याचिका (टी.) सं. 7306 खर्चे रहित खारिज की जाती हैं ।

रिट याचिकाएं खारिज की गईं ।

क.

नेशनल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड

बनाम

श्रीमती ऊषा देवी और अन्य

तारीख 9 नवंबर, 2011

न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163-क और 166 – मोटर दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – योगदायी उपेक्षा – जहां किसी यान चालक द्वारा यान खड़ा करने में उपेक्षा बरती गई हो वहां साथ ही साथ टक्कर मारने वाले चालक की भी यह जिम्मेदारी है कि वह अपने यान को सतर्कतापूर्वक इस रीति में चलाए कि दुर्घटना न हो ।

मोटर यान अधिनियम, 1988 (1988 का 59) – धारा 163-क – मोटर दुर्घटना – प्रतिकर के लिए दावा – परिमाण – जहां साक्ष्य से मृतक की आय 15,000/- रुपए प्रति मास साबित होती हो वहां मृतक की आयु को दृष्टिगत करते हुए 15 का गुणक लागू करना उचित है – तथापि, दावेदारों को अन्य खर्चे भी अधिनिर्णीत किए जा सकते हैं ।

इंश्योरेंस कंपनी द्वारा यह अपील 2008 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका सं. 37-एस/2 में विद्वान् मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, सोलन द्वारा तारीख 20 अगस्त, 2009 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है । अपील भागतः मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मोटर चलाने वाले प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह सतर्कतापूर्वक यह सुनिश्चित करे कि वह उस रीति में यान चला रहा है जो कि सुरक्षित हो और मोटर यान नियमों के अनुसार हो । निस्संदेह खड़ा होने से संबंधित लाइटें जलाए बिना यान को सड़क पर खड़ा करना एक उपेक्षापूर्ण कार्य है । रात्रि में जब मुख्य राजमार्ग पर यान अत्यधिक गति से चलाए जाते हैं तो अधिक उपेक्षा होती है । तथापि, इसके साथ ही साथ कोई मोटर चलाने वाला इस बात को जानता है कि जहां यान गलत रीति में खड़ा किया गया है वहां यान चलाने वाले को लाइटें जलाकर सतर्कतापूर्वक यान चलाना चाहिए । यदि कार की मुख्य लाइटें जली हुई हैं तो कोई व्यक्ति अधिक दूरी से भी यह जान सकता है कि कोई यान लाइटें

जलाए बिना गलत रूप से खड़ा किया गया है । न केवल यान सड़कों पर खड़े किए जाते हैं अपितु रात्रि में पैदल यात्री, साइकिल यात्री, और बैल गाड़ियां भी सड़क पर चलती हैं और इनमें से कोई भी खड़ा करने से संबंधित लाइटें नहीं जलाता है । अतः प्रत्येक मोटर चलाने वाले को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वह यान को ऐसी रीति में चलाए जिससे कि दुर्घटनाएं न हों । उपर्युक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए मेरा यह सुविचारित मत है कि यद्यपि वर्तमान मामले में ट्रेलर के चालक ने उपेक्षा की थी क्योंकि उसने यान की लाइटें जलाए बिना यान गलत रूप से खड़ा किया था, तथापि, मृतक स्वयं भी घटना के लिए जिम्मेदार था क्योंकि यदि वह सतर्कतापूर्वक यान चलाता तो दुर्घटना होने से बच सकती थी । (पैरा 5 और 6)

जहां तक परिमाण से संबंधित विवाद्यक का संबंध है, विद्वान् अधिकरण को 15,000/- रुपए प्रति मास मृतक की आय मानी है । मेरे मतानुसार यह निर्धारण युक्तियुक्त है तथा 10,000/- रुपए की निर्भरता भी युक्तियुक्त है । मृतक की आयु 37 वर्ष थी और इसलिए सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य बनाम दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार 15 का गुणक लागू होता है । अतः निर्भरता के नुकसान के रूप में 18,00,000/- रुपए प्रतिकर बनता है । चूंकि मृतक स्वयं भी पचास प्रतिशत तक योगदायी उपेक्षा का दोषी था इसलिए दावेदार निर्भरता के नुकसान के रूप में 9,00,000/- रुपए की धनराशि पाने के हकदार हैं । विधवा को प्रतितोष के नुकसान के लिए 30,000/- रुपए की धनराशि और दाह संस्कार के खर्चों के रूप में 10,000/- रुपए की अतिरिक्त धनराशि तथा रूढ़िगत नुकसानी के रूप में 10,000/- रुपए की धनराशि अधिनिर्णीत की जाती है । अतः संदेय कुल धनराशि 9,50,000/- रुपए बनती है । इस धनराशि पर दावेदार दावा आवेदन फाइल करने की तारीख से संदाय की तारीख तक 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज पाने के हकदार होंगे । दावेदार खर्चों के लिए भी हकदार होंगे जो संपूर्ण कार्यवाही के लिए 10,000/- रुपए निर्धारित किए जाते हैं । (पैरा 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2009]	(2009) 6 एस. सी. सी. 121 : **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य ;**	8

[2009] 2009 ए. सी. जे. 2003 : **राजरानी और अन्य** बनाम **ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लि. और अन्य ।** 7

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2010 की एफ. ए. ओ. (एम. वी. ए.) सं. 19.

मोटर यान अधिनियम, 1988 की धारा 173 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री अश्वनी के. शर्मा

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री वी. एल. चौहान

न्यायमूर्ति दीपक गुप्ता – इंश्योरेंस कंपनी द्वारा यह अपील 2008 की मोटर दुर्घटना दावा याचिका सं. 37-एस/2 में विद्वान मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण-II, सोलन द्वारा तारीख 20 अगस्त, 2009 को पारित अधिनिर्णय के विरुद्ध फाइल की गई है ।

2. संक्षेप में मामले के तथ्य इस प्रकार हैं कि कुलभूषण शर्मा, मोहिन्द्रा पिक-अप रजिस्ट्रेशन सं. एच पी 13 2339 का स्वामी था । स्वीकृततः यान के साथ एक ट्रेलर (अनुयान) संलग्न था जिसे सड़क की ओर खड़ा किया गया था । घटना लगभग 11.00 बजे रात्रि में घटित हुई थी और दावेदारों के अनुसार वह ट्रेलर जिसका रजिस्ट्रेशन सं. पी बी 12 5383 था, सड़क के गलत ओर खड़ा किया गया था और यान खड़ा होने से संबंधित चेतावनी संकेत (लाइटें) भी नहीं जलाई गई थीं और इसलिए चालक की ओर से उपेक्षा बरती गई थी । दावेदारों ने जो मृतक की विधवा, अवयस्क बच्चे और माता हैं, मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन प्रतिकर का दावा करते हुए दावा आवेदन फाइल किया था । विद्वान् अधिकरण ने दावा आवेदन मंजूर करते हुए दावेदारों के हक में 18,50,000/- रुपए का प्रतिकर अधिनिर्णीत किया । अतः वर्तमान अपील फाइल की गई ।

3. यह विवादित नहीं है कि घटना घटित हुई थी । यह भी विवादित नहीं है कि ट्रेलर सड़क के गलत ओर खड़ा किया गया था । अभिलेख पर यह उपदर्शित करने वाला पर्याप्त साक्ष्य मौजूद है कि न तो खड़ा होने से संबंधित लाइटें जल रही थीं और न ही मोटर चलाने वालों के लिए इस बारे में अन्य कोई सूचक या चेतावनी लाइटें जलाई गई थीं कि यान सड़क पर खड़ा हुआ है ।

4. श्री अश्वनी शर्मा द्वारा यह दलील दी गई है कि यदि इन तथ्यों को

सही भी मान लिया जाए तो भी मृतक जो यान सं. एच पी 13 2339 चला रहा था, स्वयं भी योगदायी उपेक्षा का दोषी था । श्री शर्मा के अनुसार यदि रात्रि में मृतक ने अपने मोटर यान की मुख्य लाइटें जलाई होती तो वह अधिक दूरी से भी खड़े हुए ट्रेलर को देख लेता और घटना होने से बच सकती थी ।

5. मोटर चलाने वाले प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह सतर्कतापूर्वक यह सुनिश्चित करे कि वह उस रीति में यान चला रहा है जो कि सुरक्षित हो और मोटर यान नियमों के अनुसार हो । निस्संदेह खड़ा होने से संबंधित लाइटें जलाए बिना यान को सड़क पर खड़ा करना एक उपेक्षापूर्ण कार्य है । रात्रि में जब मुख्य राजमार्ग पर यान अत्यधिक गति से चलाए जाते हैं तो अधिक उपेक्षा होती है । तथापि, इसके साथ ही साथ कोई मोटर चलाने वाला इस बात को जानता है कि जहां यान गलत रीति में खड़ा किया गया है वहां यान चलाने वाले को लाइटें जलाकर सतर्कतापूर्वक यान चलाना चाहिए । यदि कार की मुख्य लाइटें जली हुई हैं तो कोई व्यक्ति अधिक दूरी से भी यह जान सकता है कि कोई यान लाइटें जलाए बिना गलत रूप से खड़ा किया गया है । न केवल यान सड़कों पर खड़े किए जाते हैं अपितु रात्रि में पैदल यात्री, साइकिल यात्री और बैल गाड़ियां भी सड़क पर चलती हैं और इनमें से कोई भी खड़ा करने से संबंधित लाइटें नहीं जलाता है । अतः प्रत्येक मोटर चलाने वाले को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वह यान को ऐसी रीति में चलाए जिससे कि दुर्घटनाएं न हों ।

6. उपर्युक्त चर्चा को दृष्टिगत करते हुए मेरा यह सुविचारित मत है कि यद्यपि वर्तमान मामले में ट्रेलर के चालक ने उपेक्षा की थी क्योंकि उसने यान की लाइटें जलाए बिना यान गलत रूप से खड़ा किया था, तथापि, मृतक स्वयं भी घटना के लिए जिम्मेदार था क्योंकि यदि वह सतर्कतापूर्वक यान चलाता तो दुर्घटना होने से बच सकती थी ।

7. मेरे इस मत का **राजरानी और अन्य** बनाम **ओरियंटल इंश्योरेंस कंपनी लि. और अन्य**[1] वाले मामले के निर्णय से भी समर्थन होता है । इस मामले में ट्रक लाइटें जलाए बिना सड़क के बीच में खड़ा किया गया था और मृतक ने जो कार चला रहा था, ट्रक को टक्कर मारी थी क्योंकि कार चालक इसलिए नहीं देख सका था क्योंकि दूसरी दिशा से कुछ अन्य यान आ

---

[1] 2009 ए. सी. जे. 2003.

रहे थे जिनकी लाइटें जल रही थीं । उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के इस निष्कर्ष की पुष्टि की कि दोनों यानों के चालाकों ने यान चलाने में समान रूप से उपेक्षा की थी । उक्त निर्णय समान रूप से वर्तमान मामले के तथ्यों को लागू होता है और इसलिए ट्रेलर चालक तथा मृतक दोनों ही समान रूप से दुर्घटना के लिए जिम्मेदार थे ।

8. जहां तक परिणाम से संबंधित विवाद्यक का संबंध है, विद्वान् अधिकरण को 15,000/- रुपए प्रति मास मृतक की आय मानी है । मेरे मतानुसार यह निर्धारण युक्तियुक्त है तथा 10,000/- रुपए की निर्भरता भी युक्तियुक्त है । मृतक की आयु 37 वर्ष थी और इसलिए **सरला वर्मा (श्रीमती) और अन्य** बनाम **दिल्ली परिवहन निगम और एक अन्य**[1] वाले मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के अनुसार 15 का गुणक लागू होता है । अतः निर्भरता के नुकसान के रूप में 18,00,000/- रुपए प्रतिकर बनता है । चूंकि मृतक स्वयं भी पचास प्रतिशत तक योगदायी उपेक्षा का दोषी था इसलिए दावेदार निर्भरता के नुकसान के रूप में 9,00,000/- रुपए की धनराशि पाने के हकदार हैं । विधवा को प्रतितोष के नुकसान के लिए 30,000/- रुपए की धनराशि और दाह संस्कार के खर्चों के रूप में 10,000/- रुपए की अतिरिक्त धनराशि तथा रूढ़िगत नुकसानी के रूप में 10,000/- रुपए की धनराशि अधिनिर्णीत की जाती है । अतः संदेय कुल धनराशि 9,50,000/- रुपए बनती है । इस धनराशि पर दावेदार दावा आवेदन फाइल करने की तारीख से संदाय की तारीख तक 9 प्रतिशत वार्षिक की दर से ब्याज पाने के हकदार होंगे । दावेदार खर्चों के लिए भी हकदार होंगे जो संपूर्ण कार्यवाही के लिए 10,000/- रुपए निर्धारित किए जाते हैं ।

9. अपील भागतः मंजूर की जाती है और तदनुसार विद्वान् अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय को उपांतरित किया जाता है ।

अपील भागतः मंजूर की गई ।

मह.

---

[1] (2009) 6 एस. सी. सी. 121.

जे. पी. ठाकुर और अन्य

बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य

तारीख 3 अप्रैल, 2012

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 226 [सपठित सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1912 तथा हिमाचल प्रदेश सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1968 की धारा 72] – रिट – केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर शिमला के कर्मचारियों को हिमफेड में तैनाती करना – तैनाती सुनिश्चित शर्तों और निबंधनों पर होना – तैनाती के पश्चात् समान कार्य के लिए समान वेतन के आधार पर सहकारी कर्मचारियों द्वारा हिमफेड के कर्मचारियों के समान वेतन, वेतनवृद्धि आदि की मांग करना – हिमफेड द्वारा इनकार करना – यदि हिमफेड द्वारा इस आधार पर इनकार किया जाता है कि सहकारी सोसाइटी के कर्मचारी हिमफेड के कर्मचारी नहीं हैं और उनकी तैनाती सुनिश्चित शर्तों और निबंधनों के अनुसार हुई है और उसी के अनुसार उनकी सेवा शर्तें निर्धारित होंगी तो हिमफेड का विनिश्चय सही और न्यायोचित है क्योंकि ऐसे मामलों में सेवा शर्तें सुनिश्चित निबंधनों और शर्तों द्वारा ही निर्धारित होती हैं ।

वर्तमान मामले में, याची, सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1912 के अधीन रजिस्ट्रीकृत केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर, शिमला में सेवा कर रहे थे । प्रत्यर्थी सं. 4 ने प्रत्यर्थी सं. 3 से तारीख 10 जून, 1994 के पत्र द्वारा नियंत्रित वस्तुओं का प्रबंध और वितरण करने के लिए याचियों की सेवाएं लेने की प्रार्थना की । इसके पश्चात्, प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र द्वारा प्रबंध प्रयोजन के लिए मात्र 12 दुकानों का प्रयोग करने के साथ ही 18 कर्मकारों (10 सेल्समैन और 8 हैल्पर) का प्रयोग करने के लिए सहमत हुआ । तारीख 18 जून, 1994 के पत्र की शर्त सं. 4 इस प्रकार थी – "4. इन 12 दुकानों को चलाने के लिए नियोजित कर्मकार आपकी भूमिका पर बने रहेंगे और **हिमफेड** द्वारा ही प्रत्येक कर्मकार को आहरित होने वाले वर्तमान वेतनमान पर आपके माध्यम से ही उनके वेतनों का संदाय किया जाएगा ।" याचियों ने हिमाचल प्रदेश

सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1968 की धारा 72 के अधीन प्रत्यर्थी सं. 2 के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत की । प्रत्यर्थी सं. 2 ने मामले का अधिनिर्णय करने के लिए उप-रजिस्ट्रार (प्रशासन), सहकारी सोसाइटी को समनुदेशित किया । उन्होंने तारीख 26 जुलाई, 2003 के शासकीय आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि पत्र में ऐसा कोई खंड नहीं है जिसे ध्यान में रखते हुए याचियों को वित्तीय फायदा देने से रोका जा सके । दूसरे शब्दों में, उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि याची पुनरीक्षित वेतनमान के बकायों के बिना पुनरीक्षित वेतनमान पाने के हकदार हैं । प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 26 जुलाई, 2003 के आदेश के विरुद्ध अपर सचिव, सहकारी के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की । उन्होंने याचियों को तारीख 25 सितम्बर, 1998 से लागू उनके मौजूदा वेतनमान में बकायों और भत्तों का संदाय करना मंजूर कर लिया । प्रत्यर्थी सं. 3 के इस अभिवाक् को कि वेतन बकाया 3 वर्षों तक निर्बंधित है, को तारीख 3 दिसम्बर, 2005 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 3 ने 2006 की सिविल रिट याचिका सं. 272 के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष तारीख 3 दिसम्बर, 2005 के आदेश को चुनौती दी । उसे तारीख 21 जून, 2007 को विनिश्चित किया गया और मामले को अधिनिर्णय के लिए अपर सचिव (सहकारी) को वापस भेज दिया गया । उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि वेतन उपलब्धियों जो तत्कालीन वेतनमानों के अधीन याचियों को ग्राह्य थे, को रोका नहीं जा सकता है । उनके अनुसार, महंगाई भत्ते और अन्य पारिणामिक फायदे जो याची करार की तारीख से पहले ही ले रहे हैं, वे निरन्तर संदत्त किए जाएंगे । तथापि, उनके अनुसार, वे फेडरेशन के कर्मचारियों के समान भावी महंगाई भत्ते आदि संदाय करने के लिए दायी नहीं हैं । याचियों की पुनरीक्षित वेतनमान पाने की प्रार्थना को नामंजूर कर दिया गया । इन परिस्थितियों में, उप-रजिस्ट्रार (प्रशासन), सहकारी सोसाइटी द्वारा पारित आदेश को उपांतरित कर दिया गया । याचियों के अनुसार, वे प्रत्यर्थी सं. 3 फेडरेशन के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान के साथ ही पारिणामिक फायदों के बकायों जैसे महंगाई भत्ते के बकायों और अन्य फायदों आदि को पाने के हकदार हैं । प्रत्यर्थी-फेडरेशन का आधार यह है कि याची और फेडरेशन के बीच मालिक और नौकर का संबंध नहीं है । यह भी प्रकथन किया कि याची तारीख 18 जून, 1994 के करार के अनुसार मात्र मौजूदा वेतनमान ही प्राप्त करने के हकदार हैं । इस याचिका के माध्यम से याची-फेडरेशन ने भी संयुक्त सचिव (सहकारी) द्वारा पारित तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश को चुनौती दी । याचिका में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, कर्मकार

तारीख 18 जून, 1994 के करार के अनुसार दरों को ही प्राप्त करने के हकदार हैं । याची-फेडरेशन के अनुसार, कर्मकार वार्षिक वेतनवृद्धि प्राप्त करने के हकदार नहीं हैं । प्रत्यर्थी-राज्य ने उसके साथ ही प्रत्यर्थी सं. 7 का उत्तर फाइल किया । याची-फेडरेशन ने विनिर्दिष्टतः उपाबंध ए-1 तारीख 26 जुलाई, 2003 और उपाबंध ए-2 तारीख 3 दिसम्बर, 2007 को आक्षेपित किया । प्रत्यर्थी-कर्मकार का पक्षकथन यह है कि वे समय-समय पर पुनरीक्षित हिमफेड के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान के साथ ही सभी पारिणामिक फायदों को पाने के हकदार हैं । याची ने 2001 के निर्देश सं. 32 द्वारा पारित तारीख 15 जून, 2010 के अधिनिर्णय को आक्षेपित किया । कर्मचारी संघ ने औद्योगिक विवाद्यक उद्भूत किया । मामले को औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय के समक्ष निर्दिष्ट किया गया । औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने तारीख 15 जून, 2010 के निर्देश पर उत्तर देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि संघ के सदस्य, याची-फेडरेशन के कर्मचारियों के समान तारीख 1 अक्तूबर, 1999 से नए वेतनमान के साथ ही सभी ग्राह्य फायदों को पाने के हकदार हैं । इससे व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिकाएं फाइल की गईं । न्यायालय द्वारा रिट याचिकाएं खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – कर्मकारों के निबंधन और शर्तें तारीख 18 जून, 1994 के पत्र द्वारा विनियमित होते हैं । तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के खंड 4 में यह लिखित है कि 12 दुकानों को चलाने के लिए नियोजित कर्मकार केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता राज्य लिमिटेड (सुपर बाजार) की भूमिका पर बने रहेंगे और हिमफेड प्रत्येक कर्मकार द्वारा आहरित होने वाले वर्तमान वेतनमान पर प्रशासनिक समापक के माध्यम से उनके वेतनों का संदाय करेगा । यह सुस्पष्ट है कि हिमफेड कर्मकारों को मात्र तारीख 18 जून, 1994 को लागू उनके वर्तमान वेतनमान में ही वेतन संदाय करने के लिए सहमत हुआ था । शर्त सं. 4 का परिशीलन यह नहीं हो सकता है कि हिमफेड कर्मकारों को उस पुनरीक्षित वेतनमानों को हमेशा ही कर्मकारों को संदाय करने के लिए सहमत हुआ था जो उसके नियमित तौर पर नियुक्त कर्मचारियों को संदत्त किए जाते थे । निबंधनों और शर्तों का उसी तरह परिशीलन किया जाना चाहिए जिस तरह वे हैं । संयुक्त सचिव (सहकारी) ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के खंड का सही तौर पर निर्वचन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि कर्मकार मात्र वे ही वार्षिक वेतनवृद्धि और अन्य पारिणामिक फायदों को पाने के हकदार हैं जो उन्हें उस तारीख को

उपलब्ध थे । उनका यह निष्कर्ष कि कर्मकार फेडरेशन के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान पाने के हकदार नहीं हैं, न्यायोचित है । श्री जे. एल. भारद्वाज की इस दलील में कोई गुणागुण नहीं है कि संयुक्त सचिव (सहकारी) तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश को पारित नहीं कर सकते थे क्योंकि उनके अनुसार, न्यायालय ने उसे विनिश्चित करने के लिए अपर सचिव (सहकारी) को निदेशित किया था । उत्तर में यह आया है कि संयुक्त सचिव (सहकारी) में अधिनियम की धारा 93 के अधीन अपील प्राधिकारी की शक्तियां भी निहित की गई हैं और चूंकि अपर सचिव (सहकारी) उस स्थान पर नहीं थे इसलिए, अपील की सुनवाई संयुक्त सचिव (सहकारी) द्वारा की जा सकती थी । संयुक्त सचिव (सहकारी) ने तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के अपने आदेश में यह अभिनिर्धारित किया कि यथाउपर्युक्त उल्लिखित कर्मकार वार्षिक वेतनवृद्धि पाने के हकदार हैं । तथापि, उन्होंने कर्मकारों को फेडरेशन के नियमित कर्मचारियों के समान डी. ए. और ए. डी. ए. आदि देने से इनकार कर दिया । पूरी सावधानी बरतते हुए यह स्पष्ट किया गया कि कर्मकार वे सभी फायदे प्राप्त करेंगे जो उन्हें तारीख 18 जून, 1994 को देय थे । इसके अलावा, श्रीमती रंजना परमार ने न्यायालय के समक्ष यह वचनबंध किया कि आर्थिक लाभ उन्हीं कर्मकारों को संदत्त किए जाएंगे जो तारीख 18 जून, 1994 को पाने के हकदार थे । उन्होंने यह भी कथन किया कि कर्मकारों को इंडैक्स मूल्य बढ़ने के कारण पहले ही 1,000/- रुपए संदत्त किया जा चुका है । श्रीमती रंजना परमार और श्री के. डी. सूद के इस दलील में सार है कि कर्मकार और फेडरेशन के बीच कोई मालिक-नौकर का संबंध नहीं है । फेडरेशन, परिसमापन की कार्यवाहियां आरम्भ होने के पश्चात् मात्र कर्मकारों की सहायता करने के लिए सहमत हुआ था । परिसमापक वैधतः केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर लिमिटेड (सुपर बाजार), शिमला में आर्थिक संकट आने के पश्चात् फेडरेशन के कर्मकारों को नियोजित करने का आदेश नहीं कर सकता है । कर्मकारों को वही संदत्त किया जाना है जिसके लिए तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के अनुसार सहमति हुई थी । तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश में न तो कोई अवैधता या अनुचितता या प्रक्रियात्मक अनौचित्यता है । इसे कायम रखा जाता है । अब, न्यायालय तारीख 15 जून, 2010 के अधिनिर्णय को दी गई चुनौती पर विचार करेगा । कर्मकारों ने औद्योगिक विवाद्यक उद्भूत किया जिसे औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय को निर्देश किया गया । बहुमूल्य निर्देश जो

औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय को किया गया वह यह था कि क्या कर्मकार तारीख 1 जनवरी, 1996 से पुनरीक्षित वेतनमान के आधार पर वेतनमान, वार्षिक वेतनवृद्धि, अतिरिक्त महंगाई भत्ता, अन्तरिम अनुतोष और उन्हें ग्राह्य अन्य नियमित भत्ते पाने के हकदार हैं । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने अभि. सा. 1 दीप राम के कथन पर विचार किया । उसके अनुसार, फेडरेशन में कार्य कर रहे उनके दूसरे पक्ष नियमित वेतनमान पा रहे हैं । अभि. सा. 2 संजीव शर्मा ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि सेल्समैन फेडरेशन की नियमित भूमिका पर नियुक्त किए गए थे जो 9,673/- रुपए और 7,899/- रुपए वेतन पा रहे थे और कर्मकार मात्र 2,424/- रुपए, 3,183/- रुपए और 2,604/- रुपए वेतन पा रहे थे । अभि. सा. 3 मेहर चन्द ने यह परिसाक्ष्य दिया कि वह तारीख 7 जून, 1966 से 28 अप्रैल, 1994 तक सुपर बाजार में सेल्स सुपरवाइजर के रूप में कार्य कर रहा था और वह राज्य सरकार के पैटर्न पर वेतन पा रहा है । आर. डब्ल्यू. 1 रमेश भाइक ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि कर्मकार पुनरीक्षित वेतनमान के साथ वेतनवृद्धि और अन्य फायदे नहीं प्राप्त कर रहे थे । उसके अनुसार, ऋजु मूल्य दुकानें, जो पूर्ववर्ती सुपर बाजार के अधीन कार्य कर रहे थे अब हिमफेड के नियंत्रणाधीन कार्य कर रहे हैं । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र का गलत अर्थ लगाया है । इसमें उपर्युक्त रूप से पहले ही उल्लिखित किया जा चुका है कि हिमफेड कर्मकारों को उनके द्वारा आहरित मौजूदा वेतनमान में ही वेतन संदत्त करने के लिए सहमत हुआ था । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने शर्त सं. 4 का कुछ अन्य तरीकों से परिशीलन किया जो इसमें नहीं है । हिमफेड इस बारे में कभी भी सहमत नहीं हुआ था कि कर्मकार फेडरेशन के कर्मचारियों के समान पुनरीक्षित वेतनमान प्राप्त करेंगे । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण, तारीख 18 जून, 1994 के पत्र में प्रयुक्त विनिर्दिष्ट निबंधनों और शर्तों को ध्यान में रखते हुए 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के सिद्धांत को लागू नहीं कर सका । कर्मकार कभी भी फेडरेशन के कर्मचारी नहीं हुए थे । यद्यपि, खंड 4 के अनुसार, वे केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर, शिमला के कर्मचारी बने रहे । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण ने तारीख 28 सितम्बर, 1999 को किए गए विचार-विमर्श का अवलंब लेते हुए भी विधिक त्रुटि कारित की है । जहां तक तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों का संबंध है, अपर सचिव (सहकारी) ने तारीख 29 जनवरी, 2000 को की गई

कार्रवाइयों जो तारीख 28 सितम्बर, 1999 को आयोजित बैठक के अनुसरण में की गई थीं, के बारे में सूचित करते हुए प्रबंध निदेशक को एक पत्र लिखा । फेडरेशन के प्रबंध निदेशक ने तारीख 15 फरवरी, 2000 को सक्षम प्राधिकारी को यह सूचित किया कि यह घाटे में चल रही है और सुपर बाजार के कर्मचारियों की मांगें स्वीकार नहीं की जा सकती हैं । उन्होंने यह भी सूचित किया कि कार्यवाहियां, फेडरेशन के निदेशक बोर्ड/ फेडरेशन के प्रबंधतंत्र के समक्ष भी रखी गई थीं जिसमें यह विनिश्चय किया गया था कि निरन्तर घाटे को ध्यान में रखते हुए, फेडरेशन द्वारा सुपर बाजार के कारबार को कैलाश जिला फेडरेशन को अन्तरित कर दिया जाए । यह सूचना फेडरेशन के प्रबंध निदेशक द्वारा तारीख 15 फरवरी, 2000 को उपाबंध आर-3 के माध्यम से अपर रजिस्ट्रार (आर्थिक), सहकारी सोसाइटी, हिमाचल प्रदेश को दी गई थी । इसके पश्चात्, रजिस्ट्रार, सहकारी सोसाइटी द्वारा मामले की रिपोर्ट तारीख 23 फरवरी, 2000 को राज्य सरकार को दी गई । इस प्रकार, तथ्य यह है कि तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों के आधार पर कोई अंतिम विनिश्चय नहीं लिया गया था । विद्वान् श्रम न्यायालय ने कर्मकारों के दावों को मंजूर करते समय तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों को असम्यक् महत्व देते हुए विधिक त्रुटि कारित की है । इस प्रकार विद्वान् श्रम न्यायालय ने विधिक त्रुटि की है और उन्होंने मौखिक साक्ष्यों के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का भी गलत तौर पर मूल्यांकन किया है, अतएव, अधिनिर्णय अपास्त किए जाने योग्य है । (पैरा 12, 13, 14, 15 और 16)

आरम्भिक (सिविल रिट) अधिकारिता : **2008-बी की सिविल रिट याचिका सं. 342 के साथ 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 तथा 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030.**

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याचियों की ओर से उपाबंध 'ए' के अनुसार

प्रत्यर्थियों की ओर से उपाबंध 'ए' के अनुसार

न्यायमूर्ति राजीव शर्मा – चूंकि इन सभी याचिकाओं में विधि और तथ्य के एक समान प्रश्न ही अन्तर्वलित हैं इसलिए, इनकी एक साथ सुनवाई की जाएगी और इन्हें एक ही निर्णय द्वारा निपटाया जाएगा । तथापि, स्पष्टता बनाए रखने के लिए प्रत्येक याचिका के तथ्यों पर पृथक्तः

विचार किया जाएगा ।

2008-बी की सिविल रिट याचिका सं. 342

2. याची, सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1912 के अधीन रजिस्ट्रीकृत केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर, शिमला में सेवा कर रहे थे । प्रत्यर्थी सं. 4 ने प्रत्यर्थी सं. 3 से तारीख 10 जून, 1994 के पत्र द्वारा नियंत्रित वस्तुओं का प्रबंध और वितरण करने के लिए याचियों की सेवाएं लेने की प्रार्थना की । इसके पश्चात्, प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र द्वारा प्रबंध प्रयोजन के लिए मात्र 12 दुकानों का प्रयोग करने के साथ ही 18 कर्मकारों (10 सेल्समैन और 8 हैल्पर) का प्रयोग करने के लिए सहमत हुआ । तारीख 18 जून, 1994 के पत्र की शर्त सं. 4 इस प्रकार थी :–

> "4. इन 12 दुकानों को चलाने के लिए नियोजित कर्मकार आपकी भूमिका पर बने रहेंगे और **हिमफेड** द्वारा ही प्रत्येक कर्मकार को आहरित होने वाले वर्तमान वेतनमान पर आपके माध्यम से ही उनके वेतनों का संदाय किया जाएगा ।"

3. याचियों ने हिमाचल प्रदेश सहकारी सोसाइटी अधिनियम, 1968 (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'अधिनियम' कहा गया है) की धारा 72 के अधीन प्रत्यर्थी सं. 2 के समक्ष एक याचिका प्रस्तुत की । प्रत्यर्थी सं. 2 ने मामले का अधिनिर्णय करने के लिए उप-रजिस्ट्रार (प्रशासन), सहकारी सोसाइटी को समनुदेशित किया । उन्होंने तारीख 26 जुलाई, 2003 के शासकीय आदेश द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि पत्र में ऐसा कोई खंड नहीं है जिसे ध्यान में रखते हुए याचियों को वित्तीय फायदा देने से रोका जा सके । दूसरे शब्दों में, उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि याची पुनरीक्षित वेतनमान के बकायों के बिना पुनरीक्षित वेतनमान पाने के हकदार हैं । प्रत्यर्थी सं. 3 ने तारीख 26 जुलाई, 2003 के आदेश के विरुद्ध अपर सचिव, सहकारी के समक्ष एक अपील प्रस्तुत की । उन्होंने याचियों को तारीख 25 सितम्बर, 1998 से लागू उनके मौजूदा वेतनमान में बकायों और भत्तों का संदाय करना मंजूर कर लिया । प्रत्यर्थी सं. 3 के इस अभिवाक् को कि वेतन बकाया 3 वर्षों तक निर्बंधित है, को तारीख 3 दिसम्बर, 2005 के आदेश द्वारा नामंजूर कर दिया गया । प्रत्यर्थी सं. 3 ने 2006 की सिविल रिट याचिका सं. 272 के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष तारीख 3 दिसम्बर, 2005 के आदेश को चुनौती दी । उसे तारीख 21 जून, 2007 को विनिश्चित किया गया और मामले को अधिनिर्णय के लिए अपर

सचिव (सहकारी) को वापस भेज दिया गया । उन्होंने यह अभिनिर्धारित किया कि वेतन उपलब्धियां जो तत्कालीन वेतनमानों के अधीन याचियों को ग्राह्य थे, को रोका नहीं जा सकता है । उनके अनुसार, महंगाई भत्ते और अन्य पारिणामिक फायदे जो याची करार की तारीख से पहले ही ले रहे हैं, वे निरन्तर संदत्त किए जाएंगे । तथापि, उनके अनुसार, वे फेडरेशन के कर्मचारियों के समान भावी महंगाई भत्ते आदि संदाय करने के लिए दायी नहीं हैं । याचियों की पुनरीक्षित वेतनमान पाने की प्रार्थना को नामंजूर कर दिया गया । इन परिस्थितियों में, उप-रजिस्ट्रार (प्रशासन), सहकारी सोसाइटी द्वारा पारित आदेश को उपांतरित कर दिया गया । याचियों के अनुसार, वे प्रत्यर्थी सं. 3 फेडरेशन के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान के साथ ही पारिणामिक फायदों के बकायों जैसे महंगाई भत्ते के बकायों और अन्य फायदों आदि को पाने के हकदार हैं ।

4. प्रत्यर्थी-फेडरेशन का आधार यह है कि याची और फेडरेशन के बीच मालिक और नौकर का संबंध नहीं है । यह भी प्रकथन किया कि याची तारीख 18 जून, 1994 के करार के अनुसार मात्र मौजूदा वेतनमान ही प्राप्त करने के हकदार हैं ।

2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001.

5. इस याचिका के माध्यम से याची-फेडरेशन ने भी संयुक्त सचिव (सहकारी) द्वारा पारित तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश को चुनौती दी । याचिका में अन्तर्विष्ट प्रकथनों के अनुसार, कर्मकार तारीख 18 जून, 1994 के करार के अनुसार दरों को ही प्राप्त करने के हकदार हैं । याची-फेडरेशन के अनुसार, कर्मकार वार्षिक वेतनवृद्धि प्राप्त करने के हकदार नहीं हैं ।

6. प्रत्यर्थी-राज्य ने उसके साथ ही प्रत्यर्थी सं. 7 का उत्तर फाइल किया । याची-फेडरेशन ने विनिर्दिष्टतः उपाबंध ए-1 तारीख 26 जुलाई, 2003 और उपाबंध ए-2 तारीख 3 दिसम्बर, 2007 को आक्षेपित किया । प्रत्यर्थी-कर्मकार (जिन्हें इसमें इसके पश्चात् सुविधा के लिए कर्मकर कहा गया है) का पक्षकथन यह है कि वे समय-समय पर पुनरीक्षित **हिमफेड** के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान के साथ ही सभी पारिणामिक फायदों को पाने के हकदार हैं ।

2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030.

7. याची ने 2001 के निर्देश सं. 32 के द्वारा पारित तारीख 15 जून,

2010 के अधिनिर्णय को आक्षेपित किया । कर्मचारी संघ ने औद्योगिक विवाद्यक उद्भूत किया । मामले को औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय के समक्ष निर्दिष्ट किया गया । औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने तारीख 15 जून, 2010 के निर्देश पर उत्तर देते हुए यह अभिनिर्धारित किया कि संघ के सदस्य, याची-फेडरेशन के कर्मचारियों के समान तारीख 1 अक्तूबर, 1999 से नए वेतनमान के साथ ही सभी ग्राह्य फायदों को पाने के हकदार हैं ।

8. श्री जे. एल. भारद्वाज ने यह जोरदार तर्क दिया कि उसके मुवक्किल 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के सिद्धांत और तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के भी आधार पर **हिमफेड** के स्थायी कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान पाने के हकदार हैं । उन्होंने उप-रजिस्ट्रार (प्रशासन) द्वारा पारित तारीख 26 जुलाई, 2003 के आदेशों का भी समर्थन किया । उनके अनुसार, संयुक्त सचिव द्वारा पारित तारीख 3 दिसम्बर, 2007 का आदेश, जिसके द्वारा उनके मुवक्किलों को पुनरीक्षित वेतनमान देने से इनकार कर दिया गया था, विधि में दूषित है । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि इस न्यायालय ने इस अपील को विनिश्चित करने के लिए अपर रजिस्ट्रार को निदेशित किया था न कि संयुक्त सचिव (सहकारी) को निदेशित किया था ।

9. विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता श्री के. डी. सूद ने यह जोरदार तर्क दिया कि तारीख 3 दिसम्बर, 2007 का आदेश तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के उल्लंघन में है । उनके अनुसार, संयुक्त सचिव (सहकारी) ने यह निष्कर्ष निकालने में विधिक त्रुटि की है कि कर्मकार तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के आधार पर वेतनवृद्धि और अन्य फायदों को पाने के हकदार हैं ।

10. श्रीमती रंजना परमार ने यह जोरदार तर्क दिया कि श्रम न्यायालय ने साक्षियों का गलत परिशीलन और गलत निर्वचन किया है । इनके अनुसार कर्मकारों के निबंधन और शर्तें तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के अनुसार कठोरतः शासित होते हैं । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि कर्मकार और फेडरेशन के बीच कोई मालिक-नौकर का संबंध नहीं है । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि कर्मकार मात्र वे फायदे ही पाने के हकदार हैं जो उन्हें तारीख 18 जून, 1994 को उपलब्ध थे । उन्होंने यह भी तर्क दिया कि विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने तारीख 28 सितम्बर, 1999 को आयोजित बैठक की कार्यवाहियों का गलत तौर पर

अवलंब लिया है । उनके अनुसार, फेडरेशन के प्रबंध निदेशक ने रजिस्ट्रार, सहकारी सोसाइटी को पहले ही यह सूचित कर दिया था कि फेडरेशन के नियमित कर्मचारियों को संदत किया जाने वाला वेतनमान कर्मकारों को संदत्त नहीं किया जा सकता है ।

11. मैंने, पक्षकारों के विद्वान् काउंसेल को सुना और ध्यानपूर्वक अभिवचनों का परिशीलन किया ।

12. कर्मकारों के निबंधन और शर्तें तारीख 18 जून, 1994 के पत्र द्वारा विनियमित होते हैं । तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के खंड 4 में यह लिखित है कि 12 दुकानों को चलाने के लिए नियोजित कर्मकार केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता राज्य लिमिटेड (सुपर बाजार) की भूमिका पर बने रहेंगे और **हिमफेड** प्रत्येक कर्मकार द्वारा आहरित होने वाले वर्तमान वेतनमान पर प्रशासनिक समापक के माध्यम से उनके वेतनों का संदाय करेगा ।

13. यह सुस्पष्ट है कि **हिमफेड** कर्मकारों को मात्र तारीख 18 जून, 1994 को लागू उनके वर्तमान वेतनमान में ही वेतन संदाय करने के लिए सहमत हुआ था । शर्त सं. 4 का परिशीलन यह नहीं हो सकता है कि **हिमफेड** कर्मकारों को उस पुनरीक्षित वेतनमानों को हमेशा ही कर्मकारों को संदाय करने के लिए सहमत हुआ था जो उसके नियमित तौर पर नियुक्त कर्मचारियों को संदत्त किए जाते थे । निबंधनों और शर्तों का उसी तरह परिशीलन किया जाना चाहिए जिस तरह वे हैं । संयुक्त सचिव (सहकारी) ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के खंड का सही तौर पर निर्वचन करते हुए यह निष्कर्ष निकाला है कि कर्मकार मात्र वे ही वार्षिक वेतनवृद्धि और अन्य पारिणामिक फायदों को पाने के हकदार हैं जो उन्हें उस तारीख को उपलब्ध थे । उनका यह निष्कर्ष कि कर्मकार फेडरेशन के कर्मचारियों के समान नियमित वेतनमान पाने के हकदार नहीं हैं, न्यायोचित है ।

14. श्री जे. एल. भारद्वाज की इस दलील में कोई गुणागुण नहीं है कि संयुक्त सचिव (सहकारी) तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश को पारित नहीं कर सकते थे क्योंकि उनके अनुसार, न्यायालय ने उसे विनिश्चित करने के लिए अपर सचिव (सहकारी) को निदेशित किया था । उत्तर में यह आया है कि संयुक्त सचिव (सहकारी) में अधिनियम की धारा 93 के अधीन अपील प्राधिकारी की शक्तियां भी निहित की गई हैं और चूंकि अपर सचिव (सहकारी) उस स्थान पर नहीं थे इसलिए, अपील की सुनवाई संयुक्त सचिव (सहकारी) द्वारा की जा सकती थी ।

15. संयुक्त सचिव (सहकारी) ने तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के अपने आदेश में यह अभिनिर्धारित किया कि यथाउपर्युक्त उल्लिखित कर्मकार वार्षिक वेतनवृद्धि पाने के हकदार हैं । तथापि, उन्होंने कर्मकारों को फेडरेशन के नियमित कर्मचारियों के समान डी. ए. और ए. डी. ए. आदि देने से इनकार कर दिया । पूरी सावधानी बरतते हुए यह स्पष्ट किया गया कि कर्मकार वे सभी फायदे प्राप्त करेंगे जो उन्हें तारीख 18 जून, 1994 को देय थे । इसके अलावा, श्रीमती रंजना परमार ने न्यायालय के समक्ष यह वचनबंध किया कि आर्थिक लाभ उन्हीं कर्मकारों को संदत्त किए जाएंगे जो तारीख 18 जून, 1994 को पाने के हकदार थे । उन्होंने यह भी कथन किया कि कर्मकारों को इंडैक्स मूल्य बढ़ने के कारण पहले ही 1,000/- रुपए संदत्त किया जा चुका है । श्रीमती रंजना परमार और श्री के. डी. सूद के इस दलील में सार है कि कर्मकार और फेडरेशन के बीच कोई मालिक-नौकर का संबंध नहीं है । फेडरेशन, परिसमापन की कार्यवाहियां आरम्भ होने के पश्चात् मात्र कर्मकारों की सहायता करने के लिए सहमत हुआ था । परिसमापक वैधतः केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर लिमिटेड (सुपर बाजार), शिमला में आर्थिक संकट आने के पश्चात् फेडरेशन को कर्मकारों को नियोजित करने का आदेश नहीं कर सकता है । कर्मकारों को वही संदत्त किया जाना है जिसके लिए तारीख 18 जून, 1994 के पत्र के अनुसार सहमति हुई थी । तारीख 3 दिसम्बर, 2007 के आदेश में न तो कोई अवैधता या अनुचितता या प्रक्रियात्मक अनौचित्यता है । इसे कायम रखा जाता है ।

16. अब, न्यायालय तारीख 15 जून, 2010 के अधिनिर्णय को दी गई चुनौती पर विचार करेगा । कर्मकारों ने औद्योगिक विवाद्यक उद्भूत किया जिसे औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय को निर्देश किया गया । बहुमूल्य निर्देश जो औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय को किया गया वह यह था कि क्या कर्मकार तारीख 1 जनवरी, 1996 से पुनरीक्षित वेतनमान के आधार पर वेतनमान, वार्षिक वेतनवृद्धि, अतिरिक्त महंगाई भत्ता, अन्तरिम अनुतोष और उन्हें ग्राह्य अन्य नियमित भत्ते पाने के हकदार हैं । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने अभि. सा. 1 दीप राम के कथन पर विचार किया । उसके अनुसार, फेडरेशन में कार्य कर रहे उनके दूसरे पक्ष नियमित वेतनमान पा रहे हैं । अभि. सा. 2 संजीव शर्मा ने यह अभिसाक्ष्य दिया कि सेल्समैन फेडरेशन की नियमित भूमिका पर नियुक्त किए गए थे जो 9,673/- रुपए और 7,899/- रुपए वेतन पा रहे थे

और कर्मकार मात्र 2,424/- रुपए, 3,183/- रुपए और 2,604/- रुपए वेतन पा रहे थे । अभि. सा. 3 मेहर चन्द ने यह परिसाक्ष्य दिया कि वह तारीख 7 जून, 1966 से 28 अप्रैल, 1994 तक सुपर बाजार में सेल्स सुपरवाइजर के रूप में कार्य कर रहा था और वह राज्य सरकार के पैटर्न पर वेतन पा रहा है । आर. डब्ल्यू. 1 रमेश भाइक ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया है कि कर्मकार पुनरीक्षित वेतनमान के साथ वेतनवृद्धि और अन्य फायदे नहीं प्राप्त कर रहे थे । उसके अनुसार, ऋजु मूल्य दुकानें, जो पूर्ववर्ती सुपर बाजार के अधीन कार्य कर रहे थे अब **हिमफेड** के नियंत्रणाधीन कार्य कर रहे हैं । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने तारीख 18 जून, 1994 के पत्र का गलत अर्थ लगाया है । इसमें उपर्युक्त रूप से पहले ही उल्लिखित किया जा चुका है कि **हिमफेड** कर्मकारों को उनके द्वारा आहरित मौजूदा वेतनमान में ही वेतन संदत्त करने के लिए सहमत हुआ था । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय ने शर्त सं. 4 का कुछ अन्य तरीकों से परिशीलन किया जो इसमें नहीं है । **हिमफेड** इस बारे में कभी भी सहमत नहीं हुआ था कि कर्मकार फेडरेशन के कर्मचारियों के समान पुनरीक्षित वेतनमान प्राप्त करेंगे । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण, तारीख 18 जून, 1994 के पत्र में प्रयुक्त विनिर्दिष्ट निबंधनों और शर्तों को ध्यान में रखते हुए 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के सिद्धांत को लागू नहीं कर सका । कर्मकार कभी भी फेडरेशन के कर्मचारी नहीं हुए थे । यद्यपि, खंड 4 के अनुसार, वे केन्द्रीय सहकारी उपभोक्ता स्टोर, शिमला के कर्मचारी बने रहे । विद्वान् औद्योगिक अधिकरण ने तारीख 28 सितम्बर, 1999 को किए गए विचार-विमर्श का अवलंब लेते हुए भी विधिक त्रुटि कारित की है । जहां तक तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों का संबंध है, अपर सचिव (सहकारी) ने तारीख 29 जनवरी, 2000 को की गई कार्रवाईयों जो तारीख 28 सितम्बर, 1999 को आयोजित बैठक के अनुसरण में की गई थीं, के बारे में सूचित करते हुए प्रबंध निदेशक को एक पत्र लिखा । फेडरेशन के प्रबंध निदेशक ने तारीख 15 फरवरी, 2000 को सक्षम प्राधिकारी को यह सूचित किया कि यह घाटे में चल रही है और सुपर बाजार के कर्मचारियों की मांगें स्वीकार नहीं की जा सकती हैं । उन्होंने यह भी सूचित किया कि कार्यवाहियां, फेडरेशन के निदेशक बोर्ड/ फेडरेशन के प्रबंधतंत्र के समक्ष भी रखी गई थीं जिसमें यह विनिश्चय किया गया था कि निरन्तर घाटे को ध्यान में रखते हुए, फेडरेशन द्वारा सुपर बाजार के कारबार को कैलाश जिला फेडरेशन को अन्तरित कर दिया जाए । यह सूचना फेडरेशन के प्रबंध निदेशक द्वारा तारीख 15 फरवरी,

2000 को उपाबंध आर-3 के माध्यम से अपर रजिस्ट्रार (आर्थिक), सहकारी सोसाइटी, हिमाचल प्रदेश को दी गई थी । इसके पश्चात्, रजिस्ट्रार, सहकारी सोसाइटी द्वारा मामले की रिपोर्ट तारीख 23 फरवरी, 2000 को राज्य सरकार को दी गई । इस प्रकार, तथ्य यह है कि तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों के आधार पर कोई अंतिम विनिश्चय नहीं लिया गया था । विद्वान् श्रम न्यायालय ने कर्मकारों के दावों को मंजूर करते समय तारीख 28 सितम्बर, 1999 की कार्यवाहियों को असम्यक् महत्व देते हुए विधिक त्रुटि कारित की है । इस प्रकार विद्वान् श्रम न्यायालय ने विधिक त्रुटि की है और उन्होंने मौखिक साक्ष्यों के साथ ही दस्तावेजी साक्ष्यों का भी गलत तौर पर मूल्यांकन किया है, अतएव, अधिनिर्णय अपास्त किए जाने योग्य है ।

17. तद्नुसार, इसमें उपर्युक्त की गई मताभिव्यक्तियों और विश्लेषणों को ध्यान में रखते हुए, 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 342 और 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 को खारिज किया जाता है । तारीख 15 जून, 2010 का अधिनिर्णय अपास्त किया जाता है । तथापि, निर्णय सुनाए जाने के पूर्व यह स्पष्ट किया जाता है कि कर्मकार वे सभी आर्थिक फायदे पाने के हकदार होंगे जो उन्हें तारीख 18 जून, 1994 को संदत्त किए जाते थे जिसमें वेतनवृद्धि और अन्य उपलब्धियां भी सम्मिलित हैं । लम्बित आवेदन/आवेदनों, यदि कोई हो, का भी निपटारा किया जाता है । तथापि, खर्चे का कोई आदेश नहीं किया जाता है ।

रिट याचिकाएं निपटाई गईं ।

क.

उपाबंध-ए

2008-बी की सिविल रिट याचिका सं. 342 के साथ 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 तथा 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030.

2008-बी की सिविल रिट याचिका सं. 342 में याची की ओर से और 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 में प्रत्यर्थी सं. 3 से 6 की ओर से	श्री जे. एल. भारद्वाज, अधिवक्ता
2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 में याची की ओर से और 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 342 में प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से	सर्वश्री के. डी. सूद, ज्येष्ठ अधिवक्ता के साथ रजनीश के. लाल, अधिवक्ता
2008 की सिविल रिट याचिका सं. 342 और 2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से तथा 2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030 में प्रत्यर्थी सं. 3 की ओर से	श्री विकास राठौर, उप-महाधिवक्ता
2008 की सिविल रिट याचिका सं. 342 में प्रत्यर्थी सं. 4 की ओर से	कोई नहीं
2008 की सिविल रिट याचिका सं. 1001 में प्रत्यर्थी सं. 7 की ओर से	कोई नहीं
2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030 में याची की ओर से	सुश्री रंजना परमार, अधिवक्ता
2010 की सिविल रिट याचिका सं. 5030 में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 की ओर से	श्री बी. एन. मेहता, अधिवक्ता

चिकित्सा सेवा और उपभोक्ता संरक्षण : नियमों की जानकारी एवं समुचित उपयोग

डा. सुरेन्द्र कुमार*

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 ने भारत वर्ष में उपभोक्ता आन्दोलन को कानूनी मान्यता प्रदान करने तथा उपभोक्ताओं में अपने अधिकारों के प्रति जागृति लाने में एक बहुत बड़ा कार्य किया है। आज के युग में हम सभी किसी न किसी रूप में उपभोक्ता हैं। आज की भाग-दौड़ भरी जीवनचर्या में मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल असर पड़ना स्वाभाविक है। वहीं स्वस्थ रहने के लिए अथवा अस्वस्थ होने पर स्वास्थ्य सेवाओं अथवा चिकित्सक से परामर्श लेने के लिए उपभोक्ता "सेवा" शुल्क अदा करता है। उपभोक्ता तथा चिकित्सक का आपस में गहरा संबंध है। यह आवश्यक है कि सही स्थिति तथा अधिकार एवं दायित्व की जानकारी उपभोक्ताओं एवं चिकित्सकों को हो ताकि उपभोक्ता जान सके कि उसके कर्तव्य एवं उत्तरदायित्व क्या हैं तथा चिकित्सक किसी उपभोक्ता को चिकित्सा सेवा प्रदान करने में चिकित्सा क्षेत्र की गौरवशाली गरिमा, मर्यादाओं एवं प्रतिबंधों का ध्यान रखें।

उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 के अन्तर्गत जब कोई व्यक्ति प्रतिफल का आंशिक या पूर्णतः भुगतान या भुगतान का वायदा करके कोई सेवा प्राप्त करता है तो वह उस सेवा का उपभोक्ता माना जाता है। धारा 2(1)(घ) के अन्तर्गत यह भी परम आवश्यक है कि शिकायतकर्ता सेवा को अपने लिए या किसी अधिकृत व्यक्ति के लिए उपयोग में लाए न कि किसी व्यावसायिक लाभ कमाने के लिए। इसी प्रकार धारा 2(1)(ण) में स्पष्ट रूप से यह कहा गया है कि सेवा से किसी भी प्रकार की ऐसी सेवा अभिप्रेत है जो उसके प्रत्याशित प्रयोक्ता को उपलब्ध कराई जाती है लेकिन इसके अधीन निःशुल्क या व्यक्तिगत सेवा संविदा के अधीन सेवा करना नहीं आता है। इसी प्रकार कोई व्यक्ति अपने स्वयं के जीवन यापन के लिए किसी भी सेवा को प्राप्त करता है तथा उसका व्यावसायिक उपयोग करता है उस स्थिति में यह व्यावसायिक उपयोग नहीं माना जाएगा।

चिकित्सक अपनी व्यावसायिक गरिमा तथा कर्तव्यों को ध्यान में रखकर चिकित्सक और मरीज के पवित्र रिश्तों को भारतीय परम्परा और

*प्रधानाचार्य, दिल्ली ग्रामीण विकास संस्थान, दिल्ली-82

संस्कृति के अनुरूप रखने का प्रयास करते हैं । चिकित्सक को ईश्वरीय रूप में देखा जाता रहा है, किन्तु आज चिकित्सा सेवा पूर्ण रूप से व्यावसायिक हो गई है । उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम में दी गई "सेवा" की परिभाषा में स्पष्ट रूप से "चिकित्सा सेवा" शब्द का उल्लेख नहीं है इसलिए प्रारंभ में कुछ भ्रम उत्पन्न हुआ । मद्रास उच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में चिकित्सा सेवा को उपभोक्ता अदालतों के अधिकार क्षेत्र से परे घोषित किया जबकि मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय ने उसे उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत माना । लेकिन उच्चतम न्यायालय ने अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय में यह निश्चित कर दिया कि चिकित्सक, निजी अथवा सरकारी अथवा धार्मिक द्वारा प्रदान की गई सशुल्क सेवा उपभोक्ता संरक्षण कानून के अन्तर्गत आती है [इंडियन मेडिकल एसोसिएशन **बनाम** वी. पी. सान्था 1995 (3) सी. पी. आर. 412] प्रत्येक चिकित्सक जो रोगी से फीस लेता है, वह चिकित्सक सेवा का प्रदाता है चाहे वह किसी भी चिकित्सा पद्धति को अपनाए । इसी प्रकार बीमा की गई चिकित्सा सेवा के लाभार्थी व्यक्ति भी उपभोक्ता हैं ।

जब कोई चिकित्सक चिकित्सा वृत्ति के मानकों के प्रतिकूल कोई ऐसी लापरवाहीपूर्ण कार्यवाही करे या कमी रखे, जिसकी चिकित्सावृत्ति के युक्तियुक्त एवं सक्षम व्यक्ति से न्यायोचित आशा नहीं की जा सकती है तो ऐसा कृत्य चिकित्सकीय लापरवाही माना जाता है । ऐसी लापरवाही यदि विशेषज्ञ परामर्श के पश्चात् अथवा दो या अधिक चिकित्सकीय परामर्शों के विरोधाभास के पश्चात् होने के कारण एवं रोगी की जान बचाने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर हो जाती है, तब वह लापरवाही उपभोक्ता अधिनियम की परिधि से बाहर हो जाती है [सुब्रमण्यम् अय्यर **बनाम** त्रिवेणी नर्सिंग होम और अन्य (1998) सी. पी. जे. 7 एन. सी.], विनीता अशोक **बनाम** लक्ष्मी अस्पताल और अन्य [I(2002) सी. पी. जे. 4 एस. सी.] तथा समीरा कोहली **बनाम** डा. प्रभा मनचन्दा और अन्य [I(2008) सी. पी. जे. 56 एस. सी.] ।

लापरवाहीपूर्ण चिकित्सा सेवा से हुई क्षति के लिए उपभोक्ता या उसकी मृत्यु होने पर उसके विधिक उत्तराधिकारी क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के अधिकारी हैं । प्रायः चिकित्सकीय लापरवाही या तो बीमारी की पहचान में होती है या विभिन्न परीक्षणों में होती है या आपरेशन के समय या बाद में होती है या रोगी के प्रति व्यावसायिक उपेक्षा करने पर या गलत दवा देने पर होती है । हरियाणा राज्य और अन्य **बनाम** श्रीमती सन्तरा, [I(2000)

सी. पी. जे. 53 एस. सी.] इस मामले में उच्चतम न्यायालय चिकित्सक द्वारा नसबंदी आपरेशन के अधूरा करने तथा आपरेशन के बाद महिला के पुनः गर्भवती होने पर, चिकित्सक को अपूर्ण आपरेशन के लिए उत्तरदायी माना तथा उचित मुआवजा दिलाया । उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम उपभोक्ताओं के हितों की संरक्षा करने के लिए पारित और लागू किया गया है । उपभोक्ताओं को उचित और वैध सेवा देने के साथ-साथ उनके मानवीय मूल्यों की सुरक्षा करना भी इस अधिनियम के अन्तर्गत आता है । प्रवत कुमार मुखर्जी **बनाम** रूबी जनरल अस्पताल और अन्य [II(2005) सी. पी. जे. 35 एन. सी.] के मामले में राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग ने निर्णय देते समय आरोपी अस्पताल को मानवीय मूल्यों की अवहेलना करने का भी दोषी पाया । मेडिक्लेम पालिसी होने के बावजूद भी अस्पताल ने फीस न जमा करने पर मरीज का आपरेशन बीच में ही रोक दिया था । जब मरीज को दूसरे अस्पताल ले जाया जा रहा था तभी रास्ते में उसकी मृत्यु हो गई । दस लाख रुपए के मुआवजे का आदेश देते हुए राष्ट्रीय आयोग ने अस्पताल के व्यावसायिक रवैये की कड़ी आलोचना की तथा मानवीय मूल्यों तथा मानवतापूर्ण रवैया अपनाने का निदेश दिया ।

रविशंकर **बनाम** जेरी के. थामस और अन्य [II(2006) सी. पी. जे. 138 एन. सी.], के मामले में आयोग ने आपरेशन के दौरान नाक में पट्टी का टुकड़ा छूट जाने से पैदा हुई अन्य परेशानियों के उत्पन्न हो जाने को आपरेशन में घोर लापरवाही माना तथा प्रार्थी को उचित मुआवजा देने का आदेश दिया । सही उपकरण न होना या उनका उचित रख-रखाव न करना भी चिकित्सक की लापरवाही है । आपरेशन से पहले रोगी या उसके संरक्षक की लिखित अनुमति न लेना भी सेवा की कमी है । प्रशिक्षित स्टाफ का अभाव तथा अपर्याप्त कर्मचारी रखना भी लापरवाही है ।

चिकित्सकीय लापरवाही से क्या समझा जाए यह चिकित्सक तथा उपभोक्ता दोनों के लिए एक महत्वपूर्ण बिन्दु है । यदि चिकित्सक, चिकित्सकीय लापरवाही या कोताही करते हैं तो वे दंड के दायी होंगे । उच्चतम न्यायालय द्वारा लक्ष्मण **बनाम** त्रिम्बक (ए. आई. आर. 1969 एस. सी. 13) वाले निर्णय में यह कहा गया है कि एक विशेषज्ञ चिकित्सक से सामान्य चिकित्सक से अधिक सावधानी की अपेक्षा की जाती है जो कि उसकी शैक्षिक एवं व्यावसायिक योग्यता, साधन, प्रशिक्षण आदि महत्वपूर्ण बिन्दुओं के आधार पर तय किया जाएगा और वह चिकित्सक विषय-विशेषज्ञ है अथवा सामान्य चिकित्सक है, यह एक महत्वपूर्ण विचारणीय

बिन्दु होगा ।

जब कोई व्यक्ति अपने को चिकित्सकीय परामर्श तथा इलाज के योग्य बताता है तो ऐसा चिकित्सक इस बात को स्वीकार करता है कि उसके पास इसका पर्याप्त ज्ञान है और वह कुशल व्यक्ति है और ऐसा व्यक्ति जब किसी रोगी को कोई सलाह या राय देता है तो वह ऐसे रोगी के प्रति महत्वपूर्ण कर्तव्य रखता है । चिकित्सक का कर्तव्य है कि वह सतर्कता एवं सावधानीपूर्वक केस को स्वीकार करे तथा उपचार के संबंध में निर्णय लेते समय, दवा देते समय तथा मरीज को देखते समय आवश्यक सतर्कता बरते और अपने कार्य को उचित सावधानी, ज्ञान एवं कुशलतापूर्वक सम्पन्न करे । यदि ऐसा करने में चिकित्सक की कहीं किसी प्रकार की कमी रहती है तो रोगी को ऐसे चिकित्सक के विरुद्ध कार्यवाही करने का अधिकार है ।

पूनम वर्मा **बनाम** अश्विन पटेल और अन्य [II(1996) सी. पी. जे. 1 एस. सी.] वाले मामले में चिकित्सीय लापरवाही के प्रकरण में उपेक्षा पर विचार करते समय माननीय उच्चतम न्यायालय ने तीन मुख्य तत्व विचारणीय माने हैं :–

1. सम्यक् सतर्कता बरतने का विधिक दायित्व ;
2. कर्तव्य-भंग ;
3. पारिणामिक नुकसानी ।

उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्न प्रकार की उपेक्षा वर्णित की गई है :–

(क) सक्रिय लापरवाही

(ख) सांपार्श्विक लापरवाही

(ग) तुलनात्मक लापरवाही

(घ) समवर्ती लापरवाही

(ङ) निरंतर लापरवाही

(च) परिसंकटमय लापरवाही

(छ) सक्रिय एवं निष्क्रिय लापरवाही

(ज) जानबूझकर या अंधाधुंध लापरवाही

(झ) देखने पर लापरवाही

(ञ) दांडिक लापरवाही

(ट) घोर लापरवाही

सामान्यतः किसी भी व्यक्ति को कानून द्वारा प्रदत्त संरक्षण प्रदान करने से संबंधित कर्तव्य में उदासीनता या लापरवाही बरतते हुए सामान्य नियमों, नैतिकता एवं लोक कर्तव्य का उल्लंघन करना लापरवाही है । उपभोक्ता को किसी भी चिकित्सक की किसी भी प्रकार की लापरवाही से संरक्षित करने के लिए उपभोक्ता संरक्षण कानून में राहत प्रदान करने का अधिकार है । यदि लापरवाही नहीं बरती गई है तो उपभोक्ता की ओर से कार्यवाही करने का अधिकार ही नहीं बनता । लापरवाही करने वाले चिकित्सक को संरक्षण का कोई अधिकार प्राप्त नहीं है ।